कृष्णदास संस्कृत सीरीज–१२९

श्रीभास्कराचार्यविरचितं

करणकुतूहलम्

'गणककुमुदकौमुदी'- वासनाविभूषण'संस्कृत-
'शिवमती'-हिन्दीटीकायुतम्

हिन्दी-टीकाकार

डा० सत्येन्द्रमिश्र

प्राक्कथन लेखक

प्रो० डॉ० रामचन्द्र पाण्डेय

बी० एच० यू०, वाराणसी।



कृष्णदास अकादमी, वाराणसी–२२१००१

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
१२६

श्रीभास्कराचार्यविरचितं

करणकुतूहलम्

सुमतिहर्षकृत–'गणककुमुदकौमुदी'–सुधाकरद्विवेदीकृत-
'वासनाविभूषण'–संस्कृतटीकाद्वयविभूषितं
'शिवमती'हिन्दीभाषाऽनुवादयुक्तञ्च

हिन्दीटीकाकारः सम्पादकश्च
डॉ० सत्येन्द्रमिश्रः
ज्यौतिषाचार्य, पी-एच्० डी०
सहसम्पादकः संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसंकायस्थ-पंचाङ्गविभागे,
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी



कृष्णदास अकादमी, वाराणसी–२२१००१
१९९१

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी

संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०४८

मूल्य : रू०



पो० बा० नं० ११९८
चौक, (चित्रा सिनेमा बिल्डिंग), वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ६२१५०

अपरञ्च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० १००८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ३३३४५८

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES

129

KARAṆAKUTŪHALAṂ

OF

BHASKARACHARYA

With

Two Sanskrit Commentaries 'Ganakakumudakaumudi' of Sumatiharsa & 'Vasanavibhushana' of Sudhākar Dwivedi

and Edited with
'Shivamati' Hindi Translation by

Dr. Satyendra Mishra

Jyotishacharya, Ph. D.

Asstt. Editor, Deptt. of Jyotish Panchanga S. L. T.
Banaras Hindu University, Varanasi-5



KRISHNADAS ACADEMY, VARANASI

1991

Oriental Publishers and Distributors
Post Box No. 1118
Chowk, (Chitra Cinema Building), Varanasi-221001
(INDIA)
Phone : 62150

First Edition, 1991

Also can be had from :

Chowkhamba Sanskrit Series Office

K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1008, Varanasi-221001 (India)
Phone : 333458

श्रीः

प्राक्शब्दाः

श्रीमद्भास्कराचार्यैः विरचितस्य करणकुतूहलाख्यस्य करणस्यावलोकनं मया कृतम्। नूनं हि भास्करः गणितशास्त्रे ज्यौतिषशास्त्रे च भास्कर इव भासते। अस्मिन् ग्रन्थेऽपि तस्य वैदुष्यं अप्रतिमा प्रतिभा च दरीदृश्यते। ग्रन्थेऽस्मिन् मूलतः दशाध्यायाः सन्ति। तत्रैकादशाख्योऽध्यायः प्रक्षिप्त इव प्रतिभाति यतो हि तत्र विषयान्तरं विद्यते। यस्य चर्चा अत्र अपूर्णा असङ्गता च विद्यते। चेद्यदि भास्कराभिमतोऽयमध्यायस्तदा नूनं हि नीरदस्यापि समग्रं बोधजनिकं विवेचनमत्र समुपलभ्येत्। अपरश्चायं हेतुर्यद् अध्यायान्ते "इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले" इत्यादि पद्येन अध्यायसमापनं सर्वत्र भास्करैः कृतं परं नीरदाध्याये अयं क्रमो नास्ति। वंशवर्णनं ग्रन्थान्ते एव भवति। अत्रापि दशमाध्यायस्यान्ते वंशवर्णनं वर्तते। वंशवर्णनानन्तरं पुनरध्यायो विषयविवेचनात्मको न समीचीनः प्रतिभाति। अत इयं धारणां विदुषां सर्वथा समुचिता यदयं प्रक्षिप्तोऽध्यायः।

अस्य ग्रन्थस्योपरि अतिप्रामाणिका सुमतिहर्षकृता "गणककुमुदकौमुदी" नाम्नी संस्कृत टीका वर्तते या ग्रन्थस्यास्य गूढग्रन्थिं छित्वा पाठकानां कृते आह्लादं जनयति।

अस्य ग्रन्थस्य सम्पादनेन सह सुमतिहर्षकृतटीकायाः संयोजनं ग्रन्थस्य गौरवं प्रकटयति। सम्पादकेन डा० सत्येन्द्रमिश्रेणातिश्रमेणास्य सम्पादनं विधाय पाठकानां सौकर्यार्थं हिन्दीभाषायामपि अस्यानुवादं विधाय सर्वसाधारणानां दैवज्ञानां कृते ग्रन्थस्थं ज्ञानं सुलभीकृतः। अस्य ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यं पंचाङ्गकारैरद्यापि स्वीकृतम्। कानिचित् पञ्चाङ्गानि करणकुतूहलग्रन्थादेव निर्मितानि भवन्ति। अस्य ग्रन्थस्य प्रकाशनेनाद्यापि जनाः लाभान्विता भविष्यन्तीति आशास्महे।

प्रोफेसर डा० रामचन्द्रपाण्डेयः
ज्यौतिषविभागाध्यक्षः
संस्कृतविद्या धर्मविज्ञान संकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः
वाराणसी–२२१००५

भूमिका

ज्यौतिष काल विधानशास्त्र है—

"क्षणतत्क्रमयोः संयमाद्विवेकजं ज्ञानम्[1]" अर्थात् क्षणों एवं उनके क्रमों पर संयम करने से विवेकजन्य ज्ञान उत्पन्न होता है। जिस प्रकार एक परमाणु सूक्ष्म से सूक्ष्म सीमा तक पहुँच सकता है उसी प्रकार क्षण काल भी सूक्ष्म से सूक्ष्मतर सीमा तक पहुँच सकता है। योगसूत्र ने यह माना है कि काल कोई द्रव्य नहीं है, कोई प्रकट वास्तविकता नहीं है। यह मात्र एक शब्द है एक मानसिक धारणा है जो प्रत्यक्षीकरण या भौतिक पदार्थों की अनुभूति मात्र है। यह परिवर्तित वस्तुओं से सम्बन्धित है। इसकी गणना हम वस्तुओं की गति या परिवर्तन से करते हैं। अतः यह सिद्ध होता है कि काल के विभाग कल्पनापरक होते हैं और ये कालजन्य क्रियाओं के द्योतक मात्र होते हैं। यदि कोई चावल पकाता है तो हम कहते हैं कि अमुक व्यक्ति चावल पकाता है, यहाँ चावल को अग्नि पर चढ़ाने से लेकर उतारने तक को वर्त्तमान कहते हैं परन्तु यदि क्रियाओं पर ध्यान दें तो चावल को अग्नि पर चढ़ाने से लेकर उतारने तक में तीनों कालों की एक पूरी शृंखला सम्पन्न होती है। वर्त्तमान तो अत्यन्त सूक्ष्म होता है उसका नामोच्चारण करते-करते वह भूतकाल हो जाता है। इसलिए काल विवेचन में काल के भेदों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। सूर्यसिद्धान्तानुसार[2] एक काल लोको का अन्त करने वाला होता है दूसरा कलनात्मक होता है जिससे गणना की जाती है। गणनात्मक काल दो प्रकार के होते हैं स्थूल और सूक्ष्म (मूर्त और अमूर्त)। प्राण आदि मूर्त हैं और त्रुटि आदि अमूर्त हैं।

ज्यौतिष वेदाङ्ग है—

हजारों वर्ष ईशापूर्व से ही ज्यौतिष वेदाङ्गो में परिगणित रहा है। नक्षत्र-तारकों की गतियों के विज्ञान को वेद का नेत्र कहा जाता है। ज्यौतिष ऋग्वेद एवं यजुर्वेद का अङ्ग है। वेदाङ्ग ज्यौतिष में आया है कि वेदों की उत्पत्ति यज्ञों

१. योगसूत्र भाष्य ३।५१।

२. लोकानामन्तकृतः कालो।

के लिए हुई यज्ञ काल के क्रमानुसार से चलते हैं अतएव जो कालविधानशास्त्र ज्यौतिष को जानता[1] है वह यज्ञों को भी जानता है। काल नियामक होने से ज्यौतिष को सर्वोपरि माना गया है। जिस प्रकार मयूरो के सिर पर कलंगी[2] होती है, नागों को मणि होती है उसी प्रकार गणित ज्यौतिष भी वेदाङ्गशास्त्रों में मूर्धन्य है। प्राचीनकाल में गणित एवं ज्यौतिष समानार्थी थे परन्तु आगे चलकर इनके तीन भाग हो गए।

१. तन्त्र—गणित द्वारा ग्रहों की गतियों और नक्षत्रों का ज्ञान प्राप्त करना तथा उन्हें निश्चित करना।

२. होरा—जिसका सम्बन्ध कुण्डली बनाने से था। इसके तीन उपविभाग थे। क–जातक, ख–यात्रा, ग–विवाह।

३. शाखा—यह एक विस्तृत भाग था जिसमें शकुन परीक्षण, लक्षणपरीक्षण एवं भविष्य सूचन का विवरण था।

इन तीनों स्कन्धों (तन्त्र-होरा-शाखा) का जो ज्ञाता होता था उसे संहिता पारग कहा जाता था।

तन्त्र—तन्त्र या सिद्धान्त में मुख्यतः दो भाग होते हैं, एक में ग्रहादिकों की गणना और दूसरे में सृष्टयारंभ-गोल विचार-यन्त्ररचना और कालगणना संबंधी मान रहते हैं। तन्त्र और सिद्धान्त को बिल्कुल पृथक् नहीं रखा जा सकता। सिद्धान्त-तन्त्र और करण के लक्षणों में यह है कि ग्रहगणित का विचार जिसमें कल्पादि या सृष्टयादि से हो वह सिद्धान्त, जिसमें महायुगादि से हो वह तन्त्र और जिसमें किसी इष्टशक से हो वह करण कहलाता है। मात्र ग्रहगणित की दृष्टि से देखा जाय तो इन तीनों में कोई भेद नहीं है। सिद्धान्त-तन्त्र या करण ग्रन्थ के जिन प्रकरणों में ग्रहगणित का विचार रहता है वे क्रमशः इस प्रकार हैं—

१–मध्यमाधिकार	६–छायाधिकार
२–स्पष्टाधिकार	७–उदयास्ताधिकार
३–त्रिप्रश्नाधिकार	८–शृङ्गोन्नत्यधिकार
४–चन्द्रग्रहणाधिकार	९–ग्रहयुत्यधिकार
५–सूर्यग्रहणाधिकार	१०–पाताधिकार

१. वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्यौतिषं वेद स वेद यज्ञान् ॥याजुष ज्यौ.श्लो.३।

२. यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदाङ्गशास्त्राणां गणितं मूर्धनि स्थितम् ॥ या० ज्यौ० श्लो० ४ ॥

भारतीय ज्यौतिष की स्थिति—भारत की ज्यौतिषविद्या के विषय में वेबर, ह्विटनी, थीबो आदि पाश्चात्य[1] विद्वानों ने कल्पित आधार पर प्रमाणहीन उक्तियों का उल्लेख किया है। वह यह नहीं जानते कि भारतीय संस्कृतसाहित्य का एक विशाल अंश विनष्ट हो चुका हैं जिसका अब पता नहीं चल सकता। यही बात यूनान के विषय में भी है टाल्मी के "एल्मागेस्ट" के उपरान्त यूनान का बहुत सा साहित्य प्राप्त नहीं होता। भारतीय संस्कृत साहित्य का जो कुछ अवशेष भाग है वह धार्मिक है न कि ऐतिहासिक और जो कुछ बातें गणित के विषय में मिलती हैं वे विषय प्रतिपादन के क्रम में ही आ जाती हैं। उसमें जो बातें छूट गई हैं या जिनका उल्लेख है उससे यह नहीं समझना चाहिए कि वे बातें थी ही नहीं या कहीं से इनका अनुसरण किया गया है।

प्रसिद्ध फ्रान्सीसी विद्वान् "बिओट" का कहना है कि भारतीयों ने नक्षत्र-ज्ञान चीनीयों से ग्रहण किया और "ह्वीटनी" भी इसी मत के समर्थक हैं। "सीइयू" के चीनी सिद्धान्त में पहले २४ नक्षत्र थे जो आगे चलकर ईस्वी पूर्व ११०० में २८ हो गए[2]। हमारे वैदिक ग्रन्थों में २४ नक्षत्रों की कोई चर्चा नहीं है। बेबिलोन एवं चीन में राशियों-नक्षत्रों का सम्बन्ध धार्मिक कृत्यों से नहीं था, परन्तु हमारे यहाँ वैदिककाल में भी किसी निर्दिष्ट नक्षत्र में अग्नि प्रज्वलित किए बिना कोई यज्ञ यागादि कार्य नहीं कर सकता था। माघ-फाल्गुन चैत्र आदि मासों के नाम नक्षत्रों के आधार पर ही रखे गए, और यह बात संस्कृत भाषा में ही पाई जाती है। यूनानी-लैटिन या चीनी भाषा में नहीं। नक्षत्रों के देवतागण वैदिक हैं उनके बेबिलोनी या चीनी नाम नहीं पाए जाते हैं। हमारे यहाँ सभी नक्षत्रों के नाम सार्थक हैं और उनके साथ अनुश्रुतियाँ भी जुड़ी हुई हैं जैसे आर्द्रा का अर्थ होता है भीगा हुआ, यह नक्षत्र आर्द्रा नाम से इसलिए विख्यात हुआ कि जब सूर्य का इसमें प्रवेश होता है तो वर्षा प्रारम्भ हो जाती है। पुनर्वसु नाम इसलिए पड़ा कि धान्य इत्यादि के बीज जो भूमि में पड़ते हैं वो इस नक्षत्र में अंकुरित होते हैं। पुष्य में ये बढ़ते हैं और पोषित होते हैं। आश्लेषा में ये बढ़कर एक दूसरे का आलिंगन करते हैं। मघा में पौधों में अन्न का प्रादुर्भाव होता है। इन सब तथ्यों के आधार पर यह कैसे कहा जा सकता है कि भारत ने नक्षत्र ज्ञान दूसरों से लिया है। भारतीयों की नक्षत्रगणना

१. गुण्ड्रिस पृ० ६...११॥

२. थीबो गुन्ड्रिस पृ० १३।

जो २८ तक है उसी के आधार पर कतिपय विद्वानों ने यह कहा है कि यह विद्या दूसरे देश से उधार ली गई है। इन सभी विद्वानों के मतों का खण्डन तिलक ने अपने "ओरायन" नामक ग्रन्थ[1] में किया है।

प्रो० जैकोबो[2] ने यह स्पष्ट कर दिया है कि कृत्तिका से आरम्भ नक्षत्र श्रेणी प्राचीनतम व्यवस्था नही है। भारतीयों के पास इससे भी प्राचीन व्यवस्था थी जिसमें महाविषुव के काल से आरम्भ कर मृगशीर्षनक्षत्र से नक्षत्र-श्रेणी की गणना होती थी। यास्क ने नक्षत्र की व्युत्पत्ति "नक्ष" धातु (जाना हुआ) से की है और महर्षि पाणिनी ने भी इसे स्वीकार किया है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में बताया गया है किस प्रकार किसी धार्मिक कृत्य के लिए नक्षत्र को जानना चाहिए। "व्यक्ति को सूर्योदय के पूर्व या उस समय जब सूर्य की प्रथम किरणे उतरती हैं तब आकाश में पूर्व दिशा में देखना चाहिए जहाँ नक्षत्र परिदर्शित होता है। जब सूर्य प्रकट होता है तो नक्षत्र उसके पश्चिम में रहता है। वही नक्षत्र वर्तमान सौरनक्षत्र होता है। उस नक्षत्र में जो धार्मिक कृत्य करना हो वह कृत्य करना चाहिए।"

होरा—किसी मनुष्य के जन्मकालीन लग्न द्वारा उसके जीवन के सम्पूर्ण सुख-दुख का निर्णय पहले ही कर देना होरा स्कन्ध का सामान्यतः मूल स्वरूप है। होरा स्कन्ध को जातक स्कन्ध भी कहा जाता है। कालान्तर में इसके भी दो भाग हो गए। जातक सम्बन्धी विषय जिसमें आया वह जातक कहलाया और दूसरा भाग ताजिक हुआ। ज्यौतिष शास्त्र का जो स्कन्ध कुण्डलियों का निर्माण करता है और जो व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित है वह होराशास्त्र या जातक के नाम से विख्यात है। वराह मिहिर के समय में विद्वान लोग होरा शब्द के उद्गम के विषय में अनभिज्ञ थे। वृहज्जातक[3] में आया है कि कुछ लोगों के मत से होरा अहोरात्र शब्द के पहले एवं अंतिम अक्षरों को निकाल देने से बना है। होराशास्त्र पूर्वजन्मों में किए गए अच्छे या बुरे फलों को भली-भाँति व्यक्त करता है। वृहज्जातक में वराहमिहिर ने दो बातों पर विशेष बल दिया है। (१) होराशास्त्र कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्तों से सम्बन्धित है। (२) शास्त्र बताता है कि कुण्डली

१. ओरायन पृ० ९५।

२. इण्डियन एन्टीक्वेरी की जिल्दे २३, पृ० १५४-१५९।

३. होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्म्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत्तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति ॥ बृ. जातक १-३॥

एक नक्सा या योजना मात्र है जो पूर्वजन्म में किए गए कर्मों से उत्पन्न किसी व्यक्ति के जीवन के भविष्य की ओर निर्देश करती है। होराशास्त्र यह नहीं कहता है कि व्यक्ति की कुण्डली के ग्रह उसे यह या वह करने के लिए बाध्य करते हैं, बल्कि कुण्डली केवल यह बताती हैं कि व्यक्ति का भविष्य किन दिशाओं की ओर उन्मुख है।

सारावली में कल्याण[1] बर्मा ने भी कहा है कि जो जातकशास्त्र है वहीं होराशास्त्र है और यह नियति के विषय में विवेचन का पर्यायवाची है। धनार्जन में यह बहुत सहायक है, आपत्तिरूप समुद्र में पोत के समान है तथा यात्रा या आक्रमण में मन्त्री के समान है। इन सब धारणाओं के फलस्वरूप भारतीय ज्यौतिष उच्चाशययुक्त माना जाने लगा तथा इसने मानव जीवन को सदाचार पूर्ण बनाने में भी बहुत योगदान दिया। पुनर्जन्म के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने में यह शास्त्र बहुत अग्रणी रहा जिसके फलस्वरूप भारतीयों की वर्त्तमान जीवन शैली अन्य देशों की अपेक्षा सदाशयता से परिपूर्ण एवं सुसंस्कृत होती गई। वेविलोन एवं असीरिया के लोगों ने अपने ज्यौतिष को तीन धारणाओं से युक्त माना था (१) नक्षत्र मन्दिर है जिसमें देव रहते हैं। (२) नक्षत्र भविष्य के विषय में मनुष्यों को देवों का मन्तव्य बतलाते हैं। (३) मानव का भाग्य "मार्दूक"[2] की अध्यक्षता में स्वर्गिक सभा में निश्चित किया जाता है। इसमें प्रथम धारणा को छोड़कर बाकी दो धारणाएँ भारतीय धारणाओं से सर्वथा भिन्न हैं। वेविलोन एवं ग्रीस में कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्त नहीं पाए जाते हैं। अतः वे लोग अपने ज्यौतिष को उच्चाशयवाला नही बना सके, जिससे कि उन सबों का वर्तमान जीवन सदाचारपूर्ण बन सके।

शाखा या संहिता—शाखा या संहिता के संबन्ध में सबकी विचार धारायें एक नहीं हैं सामान्यतः संहिता या शाखा के दो अंग माने जा सकते हैं। एक तो वह जिसमें ग्रहचार अर्थात् नक्षत्रमण्डल में ग्रहों का गमनागमन और उनके परस्पर युद्धादि, धूमकेतु, उल्कापात और शकुनादि के द्वारा संसार के लिए शुभाशुभ फल का विवेचन रहता है और दूसरा वह जिसमें मुहूर्त्त अर्थात् विवाह और यात्रादि कर्मों के शुभाशुभ फलप्रद समय का विचार रहता है। वराहमिहिर

१. सारावली अध्याय २ श्लोक २-५।

२. एक वेविलोनी देवता।

की बृहत्संहिता से विदित होता है कि उनके काल में दोनों अंगों का महत्त्व समान था परन्तु श्रीपति के काल से (शक ९६०) क्रमशः प्रथम अंग (ग्रह-चार, ग्रहों का गमनागमन आदि) का महत्व कम होने लगा और लगभग शक १४५० से दूसरे अंग (मुहूर्त आदि) का प्राधान्य हो गया। जैसे मुहूर्ततत्व, मुहूर्तमार्तण्ड, मुहूर्त चिन्तामणि, मुहूर्त चूड़ामणि आदि।' इन ग्रन्थों के विषयों को देखने से पता चलता है कि आगे जाकर मुहूर्त विषय ने ही तीसरे स्कन्ध का रूप ले लिया।

टालमी के अनुसार विपत्तियों या घटनाओं से सम्बन्धित ज्योतिषविद्या शाखा या संहिता के अन्तर्गत आती है। ज्योतिष में अटल विश्वास रखने वाला केवल भारत ही नहीं था अपितु सिकन्दर के उपरान्त समस्त यूरोप में यह विद्या प्रचलित हो चुकी थी। वेबिलोन[1] के ज्यौतिषी राजाओं को सूर्य चन्द्र इत्यादि ग्रहों के आधार पर कार्य करने का निर्देश देते थे। मिश्र देश वाले प्रत्येक दिन और मासों को किसी देवता के नाम से मानते थे और उसी के अनुसार जन्म मरण सम्बन्धी फलादेश करते थे। सिकन्दर अपने विश्वविजय के दौरान जब मिश्र-वेविलोन पर विजय प्राप्त किया तब वेविलोनी मिश्री ज्योतिषी यूनान पहुँचने लगे। इसके बाद ही यूनान में फलित ज्यौतिष का प्रादुर्भाव हुआ। यूनान से रोम में फलित ज्यौतिष ईस्वी सन् से २०० पूर्व में पहुँचा। वेविलोन और यूनान के ज्यौतिष में बहुत से भेद थे वेविलोनी ज्यौतिष राज एवं राजकुल से सम्बन्धित था किन्तु यूनानी ज्यौतिष सामान्य व्यक्तियों से भी संबन्धित था। कोपार्निकश-गैलिलीयो एवं केप्लर स्वयं फलित ज्यौतिष का व्यवहार करते थे एवं इसके व्यवहार का विस्तार भी करते थे। टालमी का "टेट्रा विव्लोस" नामक ग्रन्थ लगभग १४०० ईशवीय सन् तक अपना प्रभुत्व जमाये रहा, और आज भी यह ज्यौतिष में विश्वास करने वालों के समक्ष एक प्रमाणस्वरूप है।

टालमी ने फलित ज्यौतिष के विषय में इस बात पर बल दिया है कि नक्षत्रों के प्रभावों की जानकारी करने के पूर्व ज्यौतिषी को यह जान लेना चाहिए कि व्यक्ति किस देश-समाज-रहनसहन-आचारविचार एवं वातावरण का है, अन्यथा भविष्यवाणी में भयंकर त्रुटियाँ हो सकती है। लघुजातक[2] में

१. आर कैम्पवेल टाम्सन कृत "दी रिपोर्ट आफ दी मैजिशीयनर्स एण्ड एस्ट्रालाजर्स आफ वेविलोन।

२. लघुजातक अध्याय ६ श्लो० २, ३।

वराहमिहिर ने भी इसी प्रकार का निर्देश दिया है। अतः यह बात स्पष्ट है कि भारतीय ज्यौतिषज्ञों ने देशाचार एवं लोकाचार के ज्ञान पर बल दिया है। राजमार्त्तण्ड[1] में भी कहा गया है कि लोकाचारों पर विचार करना चाहिए। पण्डितों को बुरी लगनेवाली बातों का परित्याग करना चाहिए और लोक मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। कुल एवं देश की चित्तवृत्ति का खण्डन नहीं करना चाहिए।

प्राचीन काल से ही हमारे देश में ज्यौतिषशास्त्र का ज्ञान पुष्ट एवं लोकाचार से परिपूर्ण रहा है। ज्यौतिष शास्त्र के निर्देश से ही भारतीयों के संस्कार एवं दैनिक क्रिया कलाप निर्दिष्ट होते रहे हैं, जिसके फलस्वरूप उनका जीवनोद्देश्य परमार्थिक एवं अध्यात्म से युक्त रहा है। भारतीय ज्यौतिष शास्त्र के उद्भव एवं विकास के अन्तराल में अनेक मनीषियों का योगदान रहा है जो आज भी वर्त्तमान ज्योतिर्विदों के समक्ष प्रेरणास्वरूप है।

ग्रन्थकार—उन्हीं मनिषीयों में एक यशस्वी मनीषी भास्कराचार्य सन् १११४ ई० में हुए जिन्होंने अपने ज्ञान से भारतीय ज्यौतिष को पुष्ट और परिमार्जित किया। उन्होंने अपने "भास्कर" नाम को चरितार्थ करते हुए भारतीय ज्यौतिषशास्त्र को भाषित किया। भास्कराचार्य से पूर्व के ग्रन्थकार अपनी कृतियों पर उपपत्ति युक्त भाष्य नहीं लिखा करते थे परन्तु भास्कराचार्य ने अपनी सिद्धान्तशिरोमणि पर "वासना भाष्य" लिखकर एक नई परंपरा की शुरूआत की। इनके ग्रन्थों में बहुत सी विचारसाध्य बाते हैं। गोल में तो इनका ज्ञान अगाध था। पहले के आचार्यों के "पात" साधन को स्थूल कहकर इन्होंने उसके साधन की नवीन रीति लिखी। पहले के आचार्य ग्रहों के "शर" को क्रान्ति सूत्र में ध्रुवाभिमुख मानते थे परन्तु इन्होंने स्पष्ट किया कि शर क्रान्तिवृत्त पर लम्ब रूप होता है। उदयान्तर इनका एक नवीन अविष्कार है। इनसे पूर्व के ग्रन्थकार मध्यम ग्रह को स्पष्ट करने हेतु ग्रह में भुजान्तर और चरान्तर दो संस्कार करने को लिखे हैं परन्तु भास्कराचार्य ने उदयान्तर नामक एक और संस्कार को मिलाकर तीन संस्कार से ग्रह को संस्कृत करने को लिखा है। प्रथम आर्यभट के पश्चात से भास्कराचार्य पर्यन्त का काल ज्यौतिष का चरमोत्कर्ष काल माना जाता है। इसी काल में बगदाद के खलीफा भारत से ज्योतिषियों को ले गये। उस काल में ज्यौतिष ग्रन्थों का अरबी और लैटिन भाषा में अनुवाद हुआ। अरब और ग्रीक के लोग ज्यौतिषशास्त्र में भारतीयों के शिष्य बने और

१. राजमार्त्तण्ड श्लोक ३९९-४०१।

अयनगति पर विस्तृत विचार हुआ। भास्कराचार्य के ग्रन्थों की ख्याति अपने देश में ही नही अपितु विदेशों में भी है।

प्रस्तुत ग्रन्थ—प्रस्तुत ग्रन्थ "करणकुतूहल" एक करण ग्रन्थ है जिसका आरम्भकाल शक ११०५ अर्थात् ईशवीय सन् ११८३ है। इसको "ग्रहागम कुतूहल" भी कहा जाता है। इसमें क्षेपक शक ११०४ के फाल्गुनकृष्ण ३० (चैत्र कृ. ३०) वृहस्पतिवार के सूर्योदयकाल के हैं। भास्कराचार्य ने अपने समय में प्रचलित सिद्धान्तों में उदयान्तरादि संस्कार करके ग्रहादि स्पष्ट करने की विधि को इस करण ग्रन्थ में समायोजित किया। इसमें उदयान्तर-अब्दबीज आदि कई एक संस्कारों का उल्लेख है। इससे ग्रह प्रायः सूक्ष्म आते हैं। इस ग्रन्थ में मूलतः १० अधिकार हैं। नीरदाध्याय नामक ११वाँ अध्याय प्रक्षिप्त है। जिसे भास्कराचार्य के पश्चात् जोड़ा गया है। किस आचार्य ने इस अध्याय को जोड़ा यह ज्ञात नहीं हो सका है। इन दश अधिकारों के १३० श्लोक तथा ११वाँ नीरदाध्याय के छैः श्लोकों को मिलाकर इस करणग्रन्थ में कुल १३६ श्लोक हैं।

पहले इसी करणग्रन्थ के आधार पर पंचाङ्ग बनाये जाते थे, परन्तु कालान्तर में मकरन्द सारणी ग्रहलाघव आदि ग्रन्थों के निर्माण के पश्चात् इसके द्वारा पंचाङ्गनिर्माण का प्रचलन क्रमशः कम हो गया। अभी जोधपुर आदि कुछ नगरों में इसके आधार पर "चण्डू" आदि पंचाङ्ग बनाये जाते हैं। इस ग्रन्थ में ज्या साधन की जो प्रक्रिया है उसके कारण ग्रहगणित में काफी सौविध्य हो जाता है। मन्दफल-शीघ्रफल-शर-वलन-लम्बन आदि के साधन में ज्या के कारण काफी सरलता है। ज्या की साधन विधि से ही भुजज्या या कोटिज्या का आनयन करके जो जो दुरूह विषय है उन सबों को सरल कर दिया गया है। ज्या के कारण ही इसकी गणित प्रक्रिया में काफी सरलता है। तात्पर्य यह कि ग्रहलाघव की अपेक्षा कुछ स्थलों पर इसकी गणित प्रक्रिया में काफी सरलता है, परन्तु कालान्तर में इसके द्वारा गणितागत ग्रहों में स्थूलता आने लगी जिसके फलस्वरूप यह ग्रन्थ उपेक्षित हो गया। इसके द्वारा पंचाङ्ग निर्माण की प्रक्रिया धीमी पड़ जाने के कारण इस ग्रन्थ की लोकप्रियता घट गई। किसी विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में भी इसका समावेश न होने से यह ग्रन्थ विगत कई एक वर्षों से प्रकाशित भी नहीं हो सका, जिससे यह लुप्तप्राय हो गया था।

मेरा शोधकार्य पंचाङ्ग निर्माण सम्बन्धी करणग्रन्थों पर ही था, जिसके दौरान मैंने उन करणग्रन्थों का संग्रह करना प्रारम्भ किया जिनके द्वारा पंचाङ्गों

का निर्माण होता रहा है। अन्य करणग्रन्थों की प्रतियाँ तो सरलता से प्राप्त हो गईं परन्तु करणकुतूहल की एक जीर्ण-शीर्ण प्रति प्राप्त हुई जिसमें "सुमतिहर्ष" कृत गणककुमुदकौमुदी नाम्नी संस्कृत टीका थी। मैंने सरस्वती ग्रन्थालय वाराणसी से महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी जी की उपपत्ति युक्त टीका "वासना विभूषण" को भी सुमतिहर्ष की संस्कृत टीका के साथ युक्त करके मुद्रित कराने का विचार किया। वाराणसी के नागरीप्रचारिणी सभा के ग्रन्थालय में भी विश्वनाथ दैवज्ञ की एक उदाहरणात्मक टीका है, परन्तु उसमें से कुछ लिख पाना असंभव है क्योंकि वहाँ ग्रन्थालय के नियमानुसार दुर्लभ ग्रन्थों में से क्रमशः कुछ लिखना वर्जित है। बाध्य होकर मैंने इन्हीं दो टीकाओं (गणककुमुदकौमुदीवासनाविभूषण) को संशोधित और सम्पादित करके मुद्रित कराना प्रारम्भ किया। पूरे पुस्तक के मुद्रित हो जाने के पश्चात् चौखम्बा संस्कृत सीरीज (कृष्णदास अकादमी) के सदस्य श्री वृजमोहनदास जी ने इसको अपने प्रकाशन में शामिल करने का प्रस्ताव किया और कहा कि यदि इसकी हिन्दी टीका भी कर दें तो उसे पुस्तक के अन्त में दे दिया जायेगा। इसके हिन्दी अनुवादमें भी काफी कठिनाइयाँ हुई परन्तु आधुनिक समय के पंचाङ्ग कर्त्ताओं में अग्रगण्य पं० श्री हीरालाल मिश्र जी से स्थल-स्थल पर काफी सहयोग मिला। एतदर्थ मैं उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ।

मेरे शोध कार्य के निर्देशक डा० रामचन्द्रपाण्डेय जी "ज्यौतिष विभागाध्यक्ष काशी हिन्दूविश्वविद्यालय" प्रारम्भ से ही मेरा उत्साह वर्द्धन करते रहे जिसके फलस्वरूप मैं इस ग्रन्थ को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर सका। इस ग्रन्थ के सम्पादन या टीका आदि में जो कुछ त्रुटियाँ हुई हों उसे सुहृद विद्वज्जन क्षमा करेगें। आगे जो संस्करण निकलेगा उसमें इस पुस्तक को मैं सोदाहरण प्रस्तुत करने का प्रयास करूँगा। इति।

वसन्तोत्सव
(होली)
संवत् २०४७

विद्वज्जनानुचर
सत्येन्द्र मिश्र

विषयानुक्रमणिका

मध्यमाधिकारः १

स्पष्टाधिकारः २

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीमद्भास्कराचार्यप्रणीतं

करणकुतूहलम्

महामहोपाध्यायसुधाकरद्विवेदिसुमतिहर्षकृत-टीकाद्वयसमुपेतम्

मङ्गलाचरणम्—

गणेशं गिरं पद्मजन्माच्युतेशान् ग्रहान्भास्करो भास्करादींश्च नत्वा ।
लघुप्रक्रियं प्रस्फुटं खेटकर्म प्रवक्ष्याम्यहं ब्रह्मसिद्धान्ततुल्यम् ॥ १ ॥

सुमतिहर्षः—

श्च्योतच्छैलशिलोच्छलज्जलकणै राकामबाणाम्बुधौ,
मग्नस्तन्मुखपङ्कजं कमलवद्रेजे सरोजश्रिया ।
तत्राप्यद्भुतधैर्ययुक्सुरवरैर्यः स्तूयते कोटिशो
मित्रामित्रसमस्वभावविभवः श्रीपार्श्वराट् सश्रिया ॥

भास्करनामाहं ग्रन्थकारो गणपतिं सरस्वतीं ब्रह्मविष्णुशिवान् सूर्यादीन् ग्रहांश्च प्रणम्य खेटानां ग्रहाणां कर्म मध्यादिविधानं कथयिष्यामीति संघटना। अप्रामाण्यशंकानिरासाय विशेषणं ब्रह्मसिद्धान्ततुल्यम् । ब्रह्मसिद्धान्तेनावगतार्थत्वमाशंक्याह । लघ्वी प्रक्रिया कर्त्तव्यता यस्मिंस्तत् प्रक्रियालाघवेन प्रस्फुटं सुगममित्यर्थवानेव (अतः) अस्यारम्भः। ननु सिद्धान्तादपि खेटकर्मैव मुख्यत्वेन साध्यग्रहगणितमिति नाम्ना प्रसिद्धत्वात्तदस्य शास्त्रस्य किं नामोच्यते । तत्र गणितशास्त्रं त्रिधा सिद्धान्ततन्त्रकरणत्वेन तल्लक्षणम् । यत्र कल्पादेरारभ्य गताब्दमासदिनादेः सौरसावनचान्द्रमानान्यवगम्य सौरसावनगताहर्गणान्मध्यमादीनां कर्मोच्यते तत्सिद्धान्तलक्षणम् । वर्तमानयुगादेर्वर्षाण्येव ज्ञात्वोच्यते तत्तन्त्रलक्षणम् । वर्तमानशकमध्येऽभीष्टदिनादारभ्यैवं ज्ञात्वोच्यते तत्करणलक्षणम् । ननु नमस्कारस्य विघ्नविघाते कथं सामर्थ्यम् । उच्यते । नमस्कारपुण्येन विघ्नाः प्रहन्यन्त इति । यत्रापि च नमस्कारमन्तरेणापि निर्विघ्नशास्त्रपरिसमाप्तिर्दृश्यते तत्रापि मानसिकप्रणि-

धानरूपोऽयं घटत एवेति सफलो नमस्कारव्यापारः किं च मङ्गलाभिधेयमिति तत्र मंगलमभिहितं नमो वचनेनाभिधेयं चात्र शास्त्रे ग्रहाणां मध्यमस्पष्टादिस्वरूपं वाच्यं प्रयोजनं च शिष्यानुग्रहः परमिदमैहिकमुक्तम् । पारत्रिक सम्यक् ज्ञानप्रकाशत्वेनोभयोरपि निःश्रेयसावाप्तिरिति वासनाभाष्यतोऽवसेया । काचिच्चतुरचित्तचमत्करकारिणी युक्तिरन्तरा दरीदृश्यते । अथोदाहरणोपयोगित्वाद्ग्रन्थारम्भे कल्पादितो गताब्दादि लिख्यते तत्र कल्पगताब्दाः१९७२९४८२८४ ॥ अधिमासाः ७२७६६१६८९ ॥ अवमगणः १४५५२२५४५४ ॥ उदये सावनोऽहर्गणः ७२०६३ ३६००७४५२ ॥ १ ॥

सुधाकरः—

वैदेहीप्रियपादपङ्कजं कमनीयं कमलालिलालितम् ।
मनसि निधाय वदामि वासनां वरभास्करकृत खेटकर्म्मणः ॥

तत्र निर्विघ्नार्थं मङ्गलं ततः खेटकर्म्म प्रवक्ष्यामीति श्रीभास्करः ॥ स्पष्टार्थम् ।

अहर्गणसाधनम्—

शकः पञ्चदिक्चन्द्रहीनोऽर्कनिघ्नो मधोर्यातमासान्वितोऽधो द्विनिघ्नात् ।
रसाङ्गान्वितात्स्वाभ्रखाङ्कांशहीनाच्छराङ्गैरवाप्ताधिमासैर्युगूर्ध्वः ॥ २ ॥
खरामाहतो याततिथ्यन्वितोऽधस्त्रियुक्तात्खरामाभ्रशैलांशयुक्तात् ।
युगाङ्गैरवाप्तावमोनस्तदूर्ध्वो भवेज्जीववारादिकोऽहर्गणोऽयम् ॥ ३ ॥

सुमतिहर्षः—

यस्मिन्नभीष्टाब्दमासदिने ग्रहाणां मध्यमाद्यं साधयितुमिष्यते तत्तत्समयकः शकः । शकनृपगताब्दपिण्डः पञ्चदिक्चन्द्रैः पञ्चोत्तरैरेकादशशतैर्हीनः कार्यः यच्छेषं ते ग्रन्थारम्भस्य गताब्दाः सौरा भवन्ति, स गताब्दगणोऽर्कैर्द्वादशभिर्निघ्नो गुणितः सौरमासगणो जातः स मधोश्चैत्रादिगतमासैर्युक्तः सएवाधो द्वितीयस्थाने धार्यस्ततोऽधः स्थितो द्वाभ्यांगुणितो रसाङ्गान्वितः षट्षष्टिभिर्युतः स्वकीयेनाभ्रखांकांशेन नवशतांशेन हीनः कार्यस्तस्माच्छरांङ्गैः पञ्चषष्टिभिर्भागेऽपहृते यदाप्तं तेऽधिमासाः अनेन प्रकारेण कदाचित्पतितोऽधिमासो न लभ्यते कदाचिदपतितोऽपि लभ्यते तत्र स्पष्टोधिमासोऽधिमासः स्फुटः

स्यादित्यनेन तन्निश्चयं कृत्वा तथा गताधिमासेषु सैकता निरेकता वा कार्या । उक्तञ्च सिद्धान्तशिरोमणौ—

"स्पष्टोऽधिमासः पतितोप्यलब्धो यदा यदा वाऽपतितोऽपि लब्धः ।
सैकैर्निरेकैः क्रमशोऽधिमासैस्तदा दिनौघः सुधिया प्रसाध्यः ॥"

तैरेवाधिमासैरूपरिस्थितोंऽको युक् युतः कार्यश्चान्द्रमासो जातोऽसौ खरामैस्त्रिशद्भिर्गुणितः सन् शुक्लपक्षमादीकृत्य मासस्य गतदिनैर्युतश्चान्द्रोऽहर्गणो भवति स द्विः स्थाप्यस्ततस्त्रिभिर्युतः स्वकीयेन रामाभ्रशैलांशेन त्र्युत्तरसप्तशतांशेन युत्तस्तस्माद्युगाङ्गैश्चतुःषष्टिभिराप्ताऽवमानिऽवमेऽप्यधिमासवत्सैकता निरेकता वा कार्या । उक्तञ्च— "अभीष्टवारार्थमहर्गणश्चेत्सैको निरेकस्तिथयोऽपि तद्वत्" इति तैरवमैरुपरिस्थितश्चान्द्रोऽहर्गणो हीनः कार्यः स च गुरुवारादिकोऽहर्गणो भवति, ग्रन्थारम्भादारभ्यैते भूदिना अर्कसावना इति एतावन्तः सूर्योदया जाताः ।

उक्तञ्च—

'इनोदयद्वयान्तरं तदर्कसावनं दिनम्,
तदेव मेदिनीदिनं भवासरस्तु भभ्रमः'
इत्यहर्गणसिद्धिः ।

अथोदाहरणम्—

संवत् १६७६ चैत्रादिवर्षे शाके १५४१ चन्द्रे ज्येष्ठकृष्ण १४ रवौ घट्यादिः ५४।२० अश्विनी नक्षत्रं घट्यादिः २७।२६ सौभाग्यो योगो घट्यादिः ४४।१२ अत्र दिने गतघटी १।० समये ग्रहाणां साधनं तत्र प्रथमाहर्गणार्थं यथा शकः १५४१ पञ्चदिक्चन्द्रै ११०५ हीनः गताब्दपिण्डेऽ ४३६ यमर्के १२ र्गुणितः ५२३२ चैत्रतो गतचान्द्रमासेन १ युतो ५२३३ ऽधो ५२३३ ऽस्माद्द्विगुणितात् १०४६६ रसाङ्गान्वितात् १०५३२ स्वशब्देनाधः स्थिता १०५३२ दभ्रखाङ्कै ९०० र्भक्तो लब्धेनो ११ परिस्थाङ्कः १०५३२ ऊनः १०५२१ शराङ्गैः ६५ भक्ताल्लब्धाधिमासै १६१ रुपरिष्ठो ५२३३ युतश्चान्द्रमासगणो जातो ५३९४ ऽयं खरामै ३० र्गुणितः १६१८२० शुक्लप्रतिपदादिगणनया गततिथिभि २८ र्युत १६१८४८ श्चान्द्रगणोऽयमध १६१८४८ स्त्रिभि

३ युतः १६१८५१ स्वशब्देनाद्यो १६१८५१ रामाभ्रशैलै ७०३ र्भक्तो लब्धेनो २३० परिष्ठो १६१८५१ युतो १६२०८१ युगाङ्गै ६४ र्भक्तो लब्धावमै २५३२ रुपरिष्ठो १६१८४८ हीनो जातोऽहर्गणः १५९३१६ सप्तभक्ते शेषं ३ बृहस्पतितो गणनाकृते शनिर्गत उदये रविः ।।२, ३।।

सुधाकरः—

स्पष्टार्थमेतत् । अत्रोपपत्तिः—पञ्चशून्येशशको ग्रन्थारम्भकालिकः शकस्तेनोनेष्टशके ग्रन्थारम्भात्समागणो जातः । ततो मासीकरणं सुगमम् ।

ततः कलेर्गताब्दा रविभिर्विनिघ्ना इत्यादिनाऽधिमासानयनं स्पष्टम् । अथ ग्रन्थारम्भे कल्पगत वर्षगणः १९७२९४८२८४ अतो द्विघाब्दा द्विरामैः खरामैश्च भक्ता इत्यादिना अधिमासशेषं मासात्मकं $\frac{२}{६०}$ ग्रन्थारम्भे स्पष्टमानेनाधिमासो न पतति तेन वास्तवाधिशेषमानं मासात्मकम् $१+\frac{२}{६०}$ येनाङ्केन पञ्चषष्टिगुणेन स्वनागाङ्कगजांश हीनेन समभिदं स्यात्सोऽङ्को विलोमेन षट्षष्टिर्जातः अत उपपन्नमधिमासानयनं यथोक्तम् । अत्राधिमासानयने नागाङ्कगजस्थाने शतनवकं गृहीतं स्वाल्पान्तरात् । अथानुपातेन, एतासु ७०३ × ६४ तिथिषु क्षयाहाः ७०४ एते भवन्ति तत इष्टतिथिसम्बन्धिक्षयाहमानम् $\frac{\text{इ. ति.} \times ७०४}{७०३ \times ६४}$ अनेन क्षयाहानयनमुपपन्नम् । अथ स्वपञ्चांशहीनाब्दखाङ्गेन्दुभाग इत्यादिना त्रिंशद्दिनोत्थक्षयशेषरहितं वास्तवक्षयशेषं $\frac{३}{६०}$ अत्राप्यादावेव तिथिसंस्कारयोग्या संख्या विलोमविधिना त्रिमिताऽऽनीतेति शेषं चाति सरलमिति ।।२, ३।।

क्षेपकाः—

विशो गो यमा विश्वतुल्याः खमर्के विधौ खेन्दवोऽङ्काश्विनः पञ्चखाक्षाः ॥
विधूच्चेऽब्धयोऽक्षेन्दवोऽर्का नवाक्षा नवात्यष्टितत्त्वा ग्रहाश्चन्द्रपाते ॥ ४ ॥

कुजेऽश्वाः कुदस्रा जिनाः क्ष्वक्षितुल्या बुधे द्वौ कुनेत्राणि शक्राः खरामाः ॥
गुरौ क्षेपको द्वौ कृताः खङ्कुबाणाः सितेऽष्टौ धृतिर्मार्गणाः पञ्चबाणाः ।।५।।

युगान्यग्नयस्त्र्यब्धयः शैलचन्द्राः शनौ चेति राश्यादिना क्षेपकेण ॥
द्युपिण्डोत्थखेटो युतः स्वेन मध्यो भवेदुद्गमेऽर्कस्य लङ्कानगर्य्याम् ॥ ६ ॥

सुमतिहर्षः—

सूर्यादीनां राश्यादिक्षेपकाः ।

सूर्यः—१०।२९।१३।००, चन्द्रः—१०।२९।५।५०, विधूच्चम्—४।१५।१२।५९, चन्द्रपातः—९।१७।२५।९, भौमः—७।२१।२४।२१, बुधः—२।२१।१४।३०, गुरुः—२।४।०।५१, शुक्रः—८।१८।५।५५, शनिः—४।३।४३।१७ ।

द्युपिण्डोत्थखेट इति वक्ष्यमाणप्रकारेणाहर्गणादुत्पन्नो ग्रहो राश्यादिः। राश्यादिना स्वक्षेपकेण युतो मध्यमसूर्योदयकालिकक्षितिजासन्नलंकादेशीयो मध्यमो ग्रहः स्यादित्यर्थः । उक्तञ्च । 'दशशिरः पुरि मध्यमभास्करे क्षितिजसन्निधिगे सति मध्यमः' इति ।। ४-६ ।।

अथ मध्यमग्रहानयनम् । तत्र तावन्मध्यमत्वं किमुच्यते ? ग्रहस्य क्षेत्रात्मकनियतपूर्वगत्या द्वादशराशिभोगो भगणसंज्ञा इत्युच्यते । एवं कल्पे यावत्कृत्या द्वादशराशिभोगास्तावन्तस्तपनस्य भगणाः सम्भवन्ति । तत्र वर्तमानभगणस्य यावान् भागो राश्याद्यो भुक्तः स मध्यमो ग्रहसंज्ञ इत्युच्यते ।।

सुधाकरः—

स्पष्टार्थमेतत् । अत्रोपपत्तिर्ग्रन्थारम्भकालिकग्रहाणां 'खाभ्रखार्कैर्हृताः कल्पजाताः समा' इत्यादिना बीजकर्म्म संस्कृतानां क्षेपसंज्ञाः कृता इत्यतिसुगमा ।। ४-६ ।।

मध्यम सूर्यबुधशुक्राणां साधनम्—

अहर्गणो विश्वगुणस्त्रिखांकैर्भक्तः फलोनो द्युगणो लवाद्याः ॥
रविज्ञशुक्राः स्युरथाब्दवृन्दाद्वेदांगलब्धेन कलादिनोनाः ॥ ७ ॥

सुमतिहर्षः—

अहर्गणो द्विः स्थाप्यस्तत्रैकस्थो विश्वैस्त्रयोदशभिर्गुणितस्त्रिखांकैस्त्र्युत्तरनवशतैर्भक्त आप्तेनांशादिनोपरिस्थितोऽहर्गणो हीनोंऽशादयो रविबुधशुक्रा भवन्ति अत्र भाज्यभाजकयोर्ग्रहानयनेऽपवर्त्यमध्ये बीजान्यन्तर्भूतान्युक्तानि तानि सान्तरितानि तन्निरासार्थङ्करणगताब्दपिण्डाद्वेदाङ्गैश्चतुःषष्टिभिर्भागे हृते यदाप्तं कलादिकं तेन हीनाः कार्याः ।।

यथाहर्गणः १५९३१६ अयं द्वितीयस्थाने स्थितः १५९३१६ एकत्रस्थो विश्वै १३ र्गुणित २०७११०८ स्त्रिखाङ्कै ९०३ र्भक्तो लब्धमंशाः २२९३ शेषं ५२९ षष्टिगुणः ३१७४० भाजकेन ९०३ भक्ते लब्धाः कलाः ३५ शेषं १३५ षष्टिगुणं ८१०० भाजकेन भक्ते लब्धाः कलाः ८ कलाद्यानयनमेव परिपाटी सर्वत्र ज्ञेया। अंशाद्येना २२९३।३५।८ हर्गणो १५९३१६ हीनः १५७०२३ अत एकमंशं गृहीत्वा षष्टिकलाः कृत्वा ३५ पातिते शेषं २५ अस्यैकं गृहीत्वा षष्टिविकलाः कृत्वा विकलाः ८ शुद्धे शेषम् ५२ एवमंशादिः १५७०२२।२४।५२ ॥

अथाब्दबीजसंस्कारः—

गताब्दा ४३६ वेदाङ्गै ६४ र्भक्ता लब्धेन कलादिना ६।४८ पूर्वागतकलासु हीनाः १५७०२२।१८।४ त्रिशद्भक्तं लब्धं ५२३४ शेषमंशाः २ राशीनां ५२३४ द्वादशभक्ते लब्धं भगणः ४३६ शेषं द्वौ राशी २ एवं भगणादिः भगणः ४३६ राश्यादिः २।२।१८।४ स्वक्षेपेण राश्यादिना १०।२९।१३।० युतः १२।३१।३१।४ भागानां त्रिशद्भक्ते लब्धेनो १ परि राशिस्थाने युतः १३ द्वादशभक्तः लब्धेन भगणस्थाने युतः ४३७ एवं राश्यादिः १।१।३१।४ लङ्कायां सूर्योदये मध्यमो रविरयमेव बुधः शुक्रश्च ज्ञेयः एषा परिपाटी सर्वत्र ग्रहानयने ज्ञेया। अथ गणितोपयुक्तमङ्कशोधनं यथोक्तं बीजदत्तैः —

"गुण्ये गुणे नवहृते परिशेषघाते, नन्दैर्हृते भवति यः परिशेषराशिः।
घातेनगुण्यगुणयोर्नवशेषितेन, साम्येन तस्य निगदेद्गणितस्य शुद्धिम्"॥

यथा गुण्योऽहर्गणः १५९३१६ नवभक्ते शेषं ७ गुणकः १३ नवभक्ते शेषम् ४ उभयोः शेषयोः ७।४ हतिः-- नवहृतः शेषम् १ अथ गुणिताङ्कः २०७११०८ नवभक्ते शेषम् १ उभयोः साम्ये गुणितोऽङ्कः २०७११०८ शुद्ध एवं सर्वत्र। अथ भागहारशोधनं पाटी गणिते प्रोक्तं--

हाराप्त्या नवशेषस्तद्यत्तेनाढ्यशेषनवशेषः,
भाज्याङ्को नवशेषस्तुल्यः स्यात्तदा शुद्धः॥ इति।

भाज्ये नवभिर्हृते यच्छिष्टं तदेवाप्तिः भाजकयोर्नवभिः शेषितयोर्मिथो वधेन युक्तस्य शेषस्य नवभागे शेषे तत्तुल्यं स्यात्तदावाप्तश्च शेषशुद्धम्। यथा भाज्ये २०७११०८ नवभक्ते शेषम् १ भाजकेऽपि

९०३ नवभक्ते शेषम् ३ लब्धमपि २२९३ नवभक्ते शेषम् ७ भाजकशेषयोर्घाते २१ शेषम् ५२९ युतम् ५५० नवभक्तं शेषं, पूर्वशेषेण १ तुल्यं ततो लब्धम् २२९३ शेषञ्च ५२९ शुद्धमेव सर्वत्रापि प्रायशः सूर्यभगणानां गताब्दानां च साम्यं कदाचिदनन्तरम् ॥ ७ ॥

सुधाकरः—

स्पष्टार्थम्। अत्रोपपत्तिः। दिनगतिरहर्गणगुणिता तद्भागा दिनगणोत्पन्ना ग्रहा अंशादिकाः स्युः। तत्राचार्य्येण दिनगतेः खण्डं कृत्वा सर्वे गुणहराः साधिता यथार्कस्य दिनगतिर्भागादिका

$$\frac{\text{क. र. भ.}\times \text{१२}\times\text{३०}}{\text{क. कु.}}=\frac{\text{४३२००००००००}\times\text{१२}\times\text{३०}}{\text{१५७७९१६४५००००}}$$

$$=\frac{\text{३८४०००}}{\text{३८९६०९}}$$ अस्य सविस्तररूपम्

$$\cfrac{\text{१}}{\text{१}+\cfrac{\text{१}}{\text{६८}+\cfrac{\text{१}}{\text{२}+\cfrac{\text{१}}{\text{५}+\cfrac{\text{१}}{\text{१}+\cfrac{\text{१}}{\text{४२}+\cfrac{\text{१}}{\text{३}+\cfrac{}{\text{३}}}}}}}}}$$

ततोऽस्मादासन्नमानानि

$\frac{\text{१}}{\text{१}}, \frac{\text{६८}}{\text{६९}}, \frac{\text{१३७}}{\text{१३९}}, \frac{\text{७५३}}{\text{७६४}}, \frac{\text{८९०}}{\text{९०३}}$, इत्यादि। अत्राचार्येणेद $\frac{\text{८९०}}{\text{९०३}}$ मासन्नमानं गृहीतं ततोऽस्य स्वरूपान्तरं कृतं तद्यथा $\frac{\text{८९०}}{\text{९०३}}=\frac{\text{९०३}}{\text{९०३}}-\frac{\text{१३}}{\text{९०३}}=\text{१}-\frac{\text{१३}}{\text{९०३}}$ इयमेव भागात्मिका गतिर्दिनगणगुणाजातो

लवादिको रविः $=\text{अ}-\frac{\text{१३ अ}}{\text{९०३}}$ अस्मादेकस्मिन्सौरवर्षे ३६५।१५।३०। २२।३० दिनाद्यहर्गणे रविः=३६०।०।०।२।१५ तत्र वास्तव रविः ३६०=अनयोरन्तरं ०।०।०।२।१५ $=\frac{\text{९ क}}{\text{४}\times\text{६०}\times\text{६०}}=\frac{\text{१}}{\text{१६००}}$ तथा खाभ्रखार्कैर्हृताः कल्पजाताः समा इत्यादिना क ग व =१९७२९४७१७९+११०५+शे=१९७२९४८२८४+शे तक्षणेन जातं ४२८४+शे अत्र व्यक्त खण्डोत्थफलं क्षेपमध्ये पूर्वमेव संस्कृतं शेषसम्बन्धि फलं $\frac{\text{३ शे}}{\text{२००}}$ इदमेव फलमेकस्मिन्वर्षे जातं कलादिकम् $=\frac{\text{३}}{\text{२००}}$ पूर्वानीतान्तरसंस्कारेण जातमेकस्मिन्वर्षे शोधनफलं $=\frac{\text{३}}{\text{२००}}+\frac{\text{१}}{\text{१६००}}=\frac{\text{२५}}{\text{१६००}}=\frac{\text{१}}{\text{६४}}$ अनुपातेनाभीष्टवर्षे जातं $\frac{\text{अ व}}{\text{६४}}$ अत उपपन्नं सर्वम् ॥

अथान्तरानीतशेषमानं ४२८४+शे=६००० यावत्तावदेवाचार्योक्तविधिना निरन्तरो रविरन्यथा सान्तर एव धीमद्भिर्बोध्यं तदन्तरं तु १७१६ एतद्वर्षं गणनानन्तरं ग्रन्थारम्भाद्भविष्यतीति सर्वं निरवद्यम् । एवं सर्वेषां ग्रहाणामानयनप्रकाराणामासन्नामानादिना स्वधिया सुधिया वामना विधेयेत्यलं पल्लवितेन ॥

मध्यमचन्द्रानयनम्—

अह्नां गणः शक्रगुणो विहीनः, स्वात्यष्टि भागेन लवादिरिन्दुः ।
अहर्गणात्खाभ्ररसाष्टभक्तादाप्तेन भागादिफलेन हीनः ॥ ८ ॥

सुमतिहर्षः—

अह्नामिति । अस्योदाहरणार्थः—यथाहर्गणः १५९३१६ शक्रैश्चतुर्दशभिर्गुणितः २२३०४२४ स्वात्यष्टि १७ भागेन शक्रगुणोऽहर्गणः, हीनः, अत्यष्टिभिः १७ सप्तदशभिर्भक्तो लब्धेन पूर्ववदंशादिना १३१२०१।२४।४२ शक्रगुणोऽहर्गणः २२३०४२४ हीनः २०९९२२२। ३५।१८ अथ संस्कारो यथाहर्गणात् १५९३१६ खाभ्ररसाष्टषड्शीतिशतैः ८६०० भक्तादाप्तेनांशादिना १८।३१।३० पूर्वागतो २०९९२२२

हीनः २०९९२०४।३।४८ पूर्ववद्भगणादिः ५८३१।१।१४।३।४८ स्वक्षेपेण १०।२९।५।५० युतश्चन्द्रो मध्यमः स्यात् । भगणः ५८३२ । राश्यादि ०।१३।९।३८ ॥ ८ ॥

उच्चानयनम्—

गणो द्विधा गोभिरिनाभ्रवेदैर्लब्धैक्यमंशादि भवेद्विधूच्चम् ॥

सुमतिहर्षः—

गणोऽहर्गणः १५९३१६ द्विधा स्थानद्वये स्थाप्य एकत्र गोभि ९ र्भक्तो लब्धमंशादिः १७७०१।४६।४० अपरत्र गणः १५९३१६ इनाभ्रवेदैर्द्वादशाधिकचतुः सहस्रैः ४०१२ भक्ताल्लब्धांशादिना ३९।४२।३५ युतम् १७७४१।२९।१५ पूर्ववद्भगणादिः ४९।३।११।२९।१५ स्वक्षेपेण ४।१५।१२।५९ युतं जातं चन्द्रोच्चम् ४९।७।२६।४२।१४ ॥

पातानयनम्—

द्विधाङ्कचन्द्रैः खखभैर्दिनौघादाप्तांशयोगो भवतीन्दुपातः ॥ ९ ॥

सुमतिहर्षः—

द्विः स्थितादहर्गणा १५९३१६ देकत्रांकचन्द्रैरेकोनविंशतिभिर्लब्धमंशादिः ८३८५।३।९ अपरत्र खखभैः सप्तविंशतिशतै २७०० र्भक्तो लब्धमंशादिः ५९।०।२१ अनयोरंशादिफलयोर्योगः ८४४४।३।३० पूर्ववद्भगणादिः २३।५।१४।३।३० स्वक्षेपेण ९।१७।२५।९ युतो जातः मध्यमः पातः २४।३।१।२८।३९ ॥ ९ ॥

भौम बुधशीघ्रोच्चानयनम्—

रुद्रघ्नो द्युचयो द्विधा शशियमैर्वेदाब्धिसिद्धेषुभि-
र्भक्तोंऽशादिफलद्वयं तु सहितं स्यान्नेदिनीनन्दनः ॥
वेदघ्नो द्युचयः स्वकीयदहनाब्ध्यंशेन युक्तो भवे-
द्भागादिक्ष्वचलं गणात्क्षितियमेन्द्राप्तांशकैर्वर्जितम् ॥ १० ॥

सुमतिहर्षः—

द्युगणोऽहर्गणः १५९३१६ रुद्रैरेकादशभि ११ र्गुणितः १७५२४७६ एकत्र शशियमैरेकविंशतिभिर्भक्तोंशादिः ८३४५१।१४।१७ अपरत्र वेदाब्धिसिद्धेषुभिश्चतुश्चत्वारिंशच्चतुःशताधिकद्विपञ्चाशत्सहस्रैः ५२४४४ भक्तोंऽशादिः ३३।२४।५८ अनयोः फलयोर्योगः ८३४८४।३९।१५ पूर्व-

वद्भगणादिः २३१।१०।२४।३९।१५ स्वक्षेपेण ७।२९।१४।२१ युतो जातो मेदिनीनन्दनो भौमः २३२।६।१६।३।३६ ॥

द्युचयोऽहर्गणो १५९३१६ वेदैश्चतुर्भि ४ र्गुणितः ६३७२६४ स्वकीयेन दहनाब्ध्यंशेन त्रिचत्वारिंशांशेन ४३ वेदघ्नोऽहर्गणोऽधः स्थाप्यः ६३७२६४ त्रिचत्वारिंशता ४३ भक्तो लब्धमंशादि १४८२०।५।३४ रूपरिष्ठोऽङ्को ६३७२६४ युतो जातमंशादिबुधशीघ्रोच्चम् ६५२०८४।५।३४ एतदहर्गणात् १५९३१६ क्षितियमेन्द्राप्तांशकैरेकविंशत्युत्तरचतुर्दशशतैः १४२१ भक्ताल्लब्धमंशादिना ११२।६।५५ हीनम् ६५१९७१।५८।३९ जातो भगणादिरयम् १८११।०।११।५८।३९ स्वक्षेपेण २।२१।१४।३० युतं जातं बुधोच्चम् १८११।३।३।१३।९॥ १०॥

गुरोरानयनम्—

गणो द्विधार्कैर्भयमाब्धिभिश्च भक्तः फलांशान्तरमिन्द्रमन्त्री ॥

सुमतिहर्षः—

अहर्गणो १५९३१६ द्विधैकत्रार्कैर्द्वादशभि १२ र्भक्तो १३२७६।२०।० ऽन्यत्र भयमाब्धिभिः सप्तविंशत्युत्तर द्विचत्वारिंशच्छतैः ४२२७ भक्तः ३७।४१।२४ अनयोः फलांशयोरन्तरम् १३२३८।३८।३६ भगणादिः ३६।९।८।३८।३६ स्वक्षेपेण २।४।०।५१ युतो जातो ३६।११।१२।३९।२७ मध्यम् इन्द्रमन्त्री गुरुः ॥

शुक्रशीघ्रोच्चानयनम्—

नृपाहतोऽह्नां निचयो द्विधासौ भूबाणवेदाद्रिभिरभ्रचन्द्रैः ॥ ११ ॥
भक्तो लवाद्यं फलयोर्यदैक्यं तज्जायते दैत्यगुरोश्चलोच्चम् ॥

सुमतिहर्षः—

अह्नां दिनानां निचयो गणो नृपैः, षोडशभिः आहतो गुणितोऽयं पुनर्भूबाणवेदाद्रिभिरेकपञ्चाशदुत्तरचतुःसप्ततिशतैः भक्तस्तथा यमाभ्रचन्द्रैः दशभिश्चेति द्विधा प्रकारद्वयेन भक्त एवं लब्धस्य फलद्वयस्य यदैक्यं योगस्तद्दैत्यगुरोः शुक्रस्यांशादिकं चलोच्चं जायते ॥

यथाहर्गणः १५९३१६ नृपैः १६ हतः २५४९०५६ एकत्र भूबाणवेदाद्रिभिः ७४५१ भक्तः ३४२।६।३३ अपरत्र दशभक्तोंशादिः २५४९०५।३६।० उभयोरैक्यम् २५५२४७।४२।३३ पूर्ववद्भगणादिः ७०९।०।७।४२।३३ स्वक्षेपेण ८।१८।५।५५ युतो जातं शुक्रशीघ्रोच्चम् ७०९।८।२५।४८।२८ ॥ ११ ॥

शनेरानयनम्—

भक्तोऽभ्ररामैस्तुरगांगरामनन्दैर्द्विधांशादिफलैक्यमार्किः ॥ १२ ॥

सुमतिहर्षः—

यथाहर्गणः १५९३१६ द्विधैकत्राभ्ररामैस्त्रिंशद्भिः ३० भक्तो लब्धम् ५३१०।३२।० अपरत्र तुरगाङ्गरामनन्दैः सप्तषष्ट्युत्तरत्रिनवतिशतैः ९३६७ भक्तो लब्धम् १७।०।२९ उभयोरैक्यमंशादिः ५३२७।३२।२९ प्राग्वद्भगणादिः १४।९।१७।३२।२९ स्वक्षेपेण ४।३।४३।१७ युतो जातो १५।१।२१।१५।४६ मध्यमार्किः शनिर्मध्यमः ॥ १२ ॥

ग्रहाणां मध्यमा गतिः—

नन्दाक्षा भुजगा रवेः शशिगतिः खांकाद्रयोऽक्षाग्नय-
स्तुंगस्यांगकलाः कुवेदविकलाः पातस्य रामा भवाः ॥
माहेयस्यमहीगुणा रसयमाक्षस्येषुसिद्धा रदाः
पञ्चेज्यस्य सितस्य षण्णवमिताश्चाष्टौ शनेर्द्वे कले ॥ १३ ॥

सुमतिहर्षः—

रवेः सूर्यस्य नन्दाक्षा एकोनषष्टिः कलाः भुजगा अष्टौ विकलाः ५९।८ गतिः। शशिनश्चन्द्रस्य गतिः खांकाद्रयो नवत्युत्तरसप्तशतकलाः अक्षाग्नयः पञ्चत्रिंशद्विकलाः ७९०।३५। अङ्गाः षट् कलाः कुवेदा एकचत्वारिंशद्विकलाः ६।४१ चन्द्रोच्चस्य। रामास्त्रयो भवा एकादश चन्द्र पातस्य गतिः ३।११। महीगुणा एकत्रिंशत्कला रसयमाः षड्विंशतिविकला भौमस्य ३१।२६। इषुसिद्धाः पञ्चचत्वारिंशदधिकद्विशतीकला रदाः द्वात्रिंशद्विकला बुधशीघ्रस्य २४५।३२। पञ्चकला ईज्यस्य गुरोः ५।०। षण्णवतिकला अष्टौ विकलाः शुक्रशीघ्रोच्चस्य ९६।८। कलाद्वयं शनेः २।०। अनया भुक्त्या युतोऽग्रिमदिनस्य मध्यमो भवति। इयं भुक्ति रल्पोत्तरत्वात्सुखार्थं प्रतिविकलां विहायाचार्येणोक्ता विशेषश्चात्रैकमहर्गणं प्रकल्प्याहर्गणो विश्वगुण इत्यादिना स्वस्वकरणविधिना कृते स्वस्वगतयो भवन्ति। उक्तञ्च—

"महीमितादहर्गणात्फलानि यानि तत्कलाः।
भवन्ति मध्यमाः क्रमान्नभः सदां द्युभुक्तयः॥"

इति परमियं गतिः कक्षाया लघुमहत्त्वेन कलादिकाग्रहणाद्भिन्ना भवति। योजनात्मिका तु दिनगतिः सर्वदा सर्वेषाम् ११८५८।४५ समानैव ज्ञेया। कल्पे १८७२०६९२००००००० एतावन्ति योजनानि सर्वे समाना भ्रमन्तित्यूह्य चन्द्रोच्चं विनान्येषां मन्दोच्चानां गतयो लिख्यन्ते ग्रन्थान्तरात्। वर्षैः सप्ततिभिर्विकलैका रवेर्मन्दोच्चस्य गतिः। द्वादशभिर्वर्षैर्विकलैका भौमस्य। बुधस्य वर्षैर्द्वादशभिः। बृहस्पतेश्चतुर्भिः। शुक्रस्य पञ्चभिः। शनेरेकादशभिर्वर्षैरेका विकला। पुनरुक्तं संवत्सरायुतैः १०००० तेषां गतयः स्युः कलादिकाः प्रायशस्त्रयोदशभिर्वर्षैरेका विकला भौमपातस्य गतिः। साधिकैः षड्भिर्वर्षैरेका विकला बुधपातस्य गतिः। किञ्चिन्न्यूनैश्चतुः पञ्चषड्भिर्वर्षैरेका विकला गुरुपातस्य। किञ्चिन्न्यूनैश्चतुर्भिर्वर्षैरेका विकला भृगुपातस्य। किञ्चिन्न्यूनैःषड्भिर्वर्षैरेका विकला शनिपातस्य ॥ १३ ॥

सुधाकरः—

स्पष्टार्थः। वासनाचातिसुगमा ॥१३॥

भूमध्यरेखामाह (रेखापुराणि)—

पुरी रक्षसां देवकन्याथकाञ्ची सितः पर्वतः पर्य्यलीवत्सगुल्मम् ॥
पुरी चोज्जयिन्याह्वया गर्गराटं कुरुक्षेत्रमेरू भुवो मध्यरेखा ॥ १४ ॥

सुमतिहर्षः—

लङ्कापुर्य्यां सूत्रस्यैकमग्रं बद्ध्वान्यदग्रं मेरुशिरसि धार्यमियं मध्यरेखातः सूत्राधो यानि नगराणि तानि मध्यरेखा नगराणीत्यर्थः ॥१४॥

देशान्तरसंस्कारविधिः—

रेखा स्वदेशान्तरयोजनघ्नी गतिर्ग्रहस्याभ्रगजैर्विभक्ता ॥
लब्धा विलिप्ता खचरे विधेया प्राच्यामृणं पश्चिमतो धनं ताः ॥ १५ ॥

सुमतिहर्षः—

प्राचीप्रतीचीसूत्रं स्वदेशस्थं भूमध्यरेखान्तर्गतं यत्स्थानं तस्मान्मध्यरेखास्थानात्स्वदेशस्यान्तरे यावन्ति योजनानि तैर्ग्रहस्य भुक्तिगुणिताभ्रगजैरशीतिभिः भक्ता लब्धा विकला मध्यरेखातः पूर्वदेशे ग्रहे हीनः पश्चिमे धनं विधेयं, यथा पारम्पर्यत्वाद्गर्गराट् मध्यरेखावशात्पश्चिमदेशे ३० योजने शिवपुरी अतो योजनैः ३० सूर्यमध्यगतिः ५९।८

गुणिता १७७४ अभ्रगजैः ८० विभक्ता लब्धं विकला २२ रवेर्देशान्तरं पश्चिमत्वाद्धनमेवं चन्द्रादीनामपि मध्यगत्या कृत्वा पत्रे लिखितम्। रेखा—

"पलश्रुतिघ्ना रविभाजिता च त्रिलिप्तिकाः प्राच्यपरेऽस्तमाद्यम्"। पाठोऽसंगतो यथा मध्यदेशे सूर्यः १।१।३१।४ विकलाः २२ धनं देशान्तरशुद्धः १।१।३१।२६ एवं सर्वे ज्ञेयाः ॥ १५ ॥

सुधाकरः—

अथानुपातः। स्पष्ट भूपरिधियोजनैर्गतिविकलास्तदा देशान्तरयोजनैः किं तत्राचार्येण स्पष्टभूपरिधिः अष्टचत्वारिंशच्छतसमो गृहीतस्ततो जातं विकलादिकं देशान्तर सम्बन्धिफलं $= \frac{\text{ग. क.} \times ६० \times \text{दे. यो.}}{४८००}$

$= \frac{\text{ग. क.} \times \text{दे. यो.}}{८०}$ अत उपपन्नं यथोक्तम् ॥ १५ ॥

ग्रहाणां बीजसंस्कारः—

अब्दा गजाश्वैस्त्रिरसैर्विभाजिता ऋणं विलिप्तासु शशीज्ययोः क्रमात् ॥
विश्वैः खरामैर्द्वियमैश्च खेचरैः पातोच्चसौम्यास्फुजितां धनं तथा ॥ १६ ॥

सुमतिहर्षः—

अब्दाः करणगताब्दाः गजाश्वैरष्टसप्ततिभिः भक्ता लब्धं शशिनश्चन्द्रस्य विकला स्वर्णं स्यात्। एवं त्रिरसैस्त्रिषष्टिभिर्लब्धं गुरोर्विकलास्वर्णम्। अथ विश्वैस्त्रयोदशभिः खरामैः त्रिंशद्भिः द्वियमैर्द्वाविंशद्भिः खेचरैर्नवभिः लब्धं क्रमेण पातचन्द्रोच्चबुधशुक्राणां विकलासु धनं भवेत्। करणगताब्दाः ४३६ गजाश्वैः ७८ भक्ता लब्धं विकलाश्चन्द्रस्यर्णम् ५ पुनरब्दाः ४३६ त्रिरसैः ६३ भक्ता लब्धं विकलाः ६ गुरोर्ऋणम्। अब्दाः ४३६ विश्वैर्लब्धं विकलाः ३३ पातस्य धनम्। अब्दा ४३६ त्रिंशद्भक्तं लब्धं विकलाः १४ चन्द्रोच्चस्य धनम् अब्दाः ४३६ द्वियमैः २२ भक्ता लब्धं विकलाः १९ बुधशीघ्रोच्चस्य धनम्। अब्दाः ४३६ खेचरैः ९ भक्ता लब्धं विकलाः ४८ शुक्रशीघ्रस्य धनम्। रविभौमशनीनां नास्तीदङ्कर्म्म। लोकैरब्दबीजत्वेन व्यवह्रियते। षट्कर्मणां नामान्युच्यन्ते देशान्तरम् १, अब्दबीजम् २, रामबीजम् ३, भांशफलम् ४, उदयान्तरम् ५, चरकर्म ६ तत्र देशान्तरमुक्तमब्दबीजं तु ग्रन्थकृता क्षेपेष्वेव दत्तम्। अथ ग्रन्थारम्भतो यावत्प्रमाणं बीजं

तत्पत्रे लिखितं परं स्वल्पान्तरत्वादुपेक्षितं रामबीजमाधुनिकगणकैरुक्तं तल्लिख्यते।

"कलाद्वयं धनं सूर्ये चन्द्रे तिथिकला ऋणम्।
भौमे स्वं कलिकाशीतिर्बुधे सप्तशती धनम्॥
गुरावृणं खनन्दैका तथा शुक्रे खभानि च।
शनौ धनं खनन्दाश्च त्रिंशत्स्वर्णोच्चपातयोः॥
एवं कृतेऽधुना खेटा जायन्ते च तदा ध्रुवम्।
नलिकायन्त्रयोग्याश्च ग्रहणादिषु सर्वदा"॥

एतान्यपि सान्तराणि ज्ञात्वा रामचन्द्राचार्यैः कृतास्तान्यपि लिख्यन्ते—

"कलाद्वयं चाथ रवौ धनं स्यादृणं च चन्द्रे कृतराम लिप्ताः।
भौमेऽभ्रविश्वप्रमिताः कलाःस्वं बुधेऽस्य शीघ्रे धनमभ्रषट् च॥ १॥
गुरावृणं खाङ्कशशिप्रमाणाः सितस्य शीघ्रे त्रिशती ऋणं च।
मन्दे च खाष्टाश्वि धनप्रमाणास्त्रिस्त्रमुच्चे ऋणमत्र पाते"॥ २॥

इत्युभयं यन्त्रतो ज्ञेयम्। भांशफलं चन्द्रस्यैव। उदयान्तरं रविचन्द्रयोरेव। चरकर्म सर्वेषाम्। उक्तं च करणप्रदीपे—

"यात च देशान्तरमाब्दकं च भुजान्तरं केऽपि वदन्ति रामम्॥
प्रमाणमत्रागम एव खेटाः स्युः संस्कृतास्तैरिह कर्मयोग्याः"॥इति॥

कानिचित्कर्माणि मध्यमेषु दीयन्ते कानिचित्स्फुटेषु चरदलसंस्कारविधिः स्फुटक्रियानन्तरं सद्भिः। अत्र देशान्तराब्दबीजरामबीजानि मध्यमेषु देयानि भांशफलं मध्यमचन्द्र एव। ग्रन्थकृतोदयान्तरचरकर्मणि स्पष्टतामननूद्योक्ते तेन स्पष्टेषु दीयत इति स्वयमूह्यं किं बहुना। अथ प्रकृतमुच्यते—'अब्दा गजाश्वैः' इत्यादिकर्म देशान्तरं रामबीजं च ग्रहेषु दत्तं यन्त्रतो ज्ञेया औदयिका मध्यमाः॥ १६॥

लंकायामुदयकालिका ग्रहाः—

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
१	०	७	३	६	३	११	८	१
१	१३	२६	१	१६	३	१२	२१	२१
३१	९	४२	२८	३	१३	३९	४९	१५
४	३८	२४	३९	३६	१०	२७	२८	४८

कलादिरामबीजम्—

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
२	१५	३०	३०	८०	७००	१९०	२७०	९०
धनम्	ऋणम्	ध.	ऋ.	ध.	ध.	ऋ.	ऋ.	ध.

देशान्तरं कलादिः—

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
०	४	०	०	०	१	०	०	०
२२	५६	२	१	१२	३२	२	३६	१
ध.	ध.	ध.	ध.	ध.	ध.	ध.	ध.	ध.

अब्दबीजं विकलादिः

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
०	५	१४	३३	०	१९	६	४८	०
	ऋ.	ध.	ध.		ध.	ऋ.	ध.	

अंशादि रामबीजम्—

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
०	०	०	०	२	१	३	५	४
२	३४	३०	३०	१०	०	१०	०	४०
ध.	ऋ.	ध.	ऋ.	ध.	ध.	ऋ.	ऋ.	ध.

त्रिकर्मसंस्कृताः सूर्यादिग्रहाः—

सू.	च.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
१	०	७	३	६	३	११	८	१
१	१२	२७	०	१८	४	९	१६	२५
३३	४०	१२	५९	१३	१५	२९	१०	५५
२६	२९	४०	१३	४८	१	२३	५२	४९

गतिः—

सू.	चं.	उ.	पा.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
५९	७९०	६	३	३१	२४५	५	९६	२
८	३५	४१	११	२६	३२	०	८	१०

इति करणकुतूहलवृत्तावेतस्यां सुमतिहर्षरचितायां गणककुमुदकौमुद्यां विवृतग्रहमध्यमानयनं प्रथमोऽध्यायः॥ १॥

सुधाकरः—

स्पष्टार्थमिदमुपपत्तिश्च एकराशिवर्षे खाभ्रखार्केहृता इत्यादिनानीतेन विकलात्मकफलेन दिनगणोत्थावास्तवावास्तवग्रहान्तरसंस्कृतेन स्फुटा यथा चन्द्रस्य संस्कृतविकलात्मकबीजकर्म्मज्ञानार्थं प्रथमं दिनगतिर्भागात्मिका $\frac{१४०००८०}{१०६२५७}$ अस्य विततमानं=

$$१३+\cfrac{१}{५+\cfrac{१}{१+\cfrac{१}{२+\cfrac{१}{२९+\cfrac{१}{१+\cfrac{१}{२+\cfrac{१}{३+\cfrac{१}{३+\cfrac{१}{६}}}}}}}}}$$

अस्मादासन्नमानानि $=\frac{१३}{१}, \frac{६६}{५}, \frac{७९}{६}, \frac{२२४}{१७}$, इत्यादि ।

दिनगणोत्थग्रहानयने तत्राचार्येणेदं गृहीतं $\frac{२२४}{१७}$ अस्य स्वरूपान्तरं $\frac{२२४}{१७}= १४- \frac{१४}{१७}$ अस्य वास्तवेन सहान्तरं कृत्वा स्वल्पान्तराद्द्वितीयखण्डं $\frac{१}{८६००}$ एतन्मितं गृहीतं तत एकस्मिन् रविवर्षे निर्णीतानयनात् साधितो विधुभंगणाद्यः=१३।४।१२।४६।२८।३०।४६।२० वास्तवचन्द्रो भगणाद्यः= $\frac{५७७५३३००००००}{४२१०००००००००} = \frac{१९२५११}{१४४००} =$

१३।४।१२।४६।३०।०।०।० अनयोरन्तरं विकलादिकं धनं १।२९।१३।४० तथा चैकस्मिन्वर्षे विकलादिकमृणं बीजकर्म्म=१।३० अनयोरन्तरमृणं $=०।०।४६।२० = \frac{१३९}{३\times ६०\times ६०} = \frac{१}{७८}$ एकवर्षे, अभीष्टवर्षे त्विदं $\frac{अ व}{७८}$ अत उपपन्नं चन्द्रस्य बीजकर्म्म । एवं सर्वेषां ज्ञेयमिति ।

मध्यमाधिकारस्योपसंहारः—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्धबुद्धिवल्लभे नभोगमध्यसाधनम् ॥ १ ॥

सुधाकरः— स्पष्टम् ।

श्रीकृपालुतनयेन वासनावरविभूषणे वरा ।
खेटमध्यगणितस्य वासना सूक्तियुक्तिसहिताऽत्रसञ्ज्ञता ॥

इति करणकुतूहलवासनाविभूषणे मध्यमाधिकारः ॥ १ ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदिकृतयोष्टीकयोः
मध्यमाधिकारः प्रथमः ।

स्पष्टाधिकारः–२

मन्दोच्चम्—

मन्दोच्चमर्कस्य गजाद्रिभागा भौमादिकानां सदलाष्टसूर्याः ॥
तत्त्वाश्विनः सार्द्धयमाद्रिचन्द्राः क्वष्टौ शशाङ्काङ्गयमाः[1] क्रमेण ॥ १ ॥

सुमतिहर्षः—

अष्टसप्तत्यंशा राशिद्वयमष्टादशांशाः २।१८ सूर्यस्य मन्दोच्चम् । चन्द्रोच्चन्तु गणो द्विघेत्यादिनोक्तम् । भौमस्य सदलाष्टसूर्यास्त्रिंशत्कलाधिकाष्टाविंशत्युत्तरशतांशाः राशिचतुष्टयम् ४ अष्टांशाः ८ त्रिंशत्कलाः भौमस्य मन्दोच्चम् । तत्त्वाश्विनः पञ्चविंशत्युत्तरद्विशतांशाः पञ्चदशांशाधिकसप्तराशयो बुधस्य मन्दोच्चम् ७।१५ । सार्द्धास्त्रिंशत्कलाधिका यमाद्रिचन्द्रा द्विसप्तत्युत्तरशतांशा द्वाविंशत्यंशाधिकराशिपञ्चकं गुरोः ५।२२ क्वष्टौ ८१ एकाशीत्यंशा एकविंशत्यंशाधिकराशिद्वयं शुक्रस्य २।२१, शनेः पाठद्वयं शशाङ्काङ्गयमाः २६१ एकषष्ट्युत्तरद्विशतांशाः राशयोऽष्टौ ८ एकविंशत्यंशाः २१ शनेः । वा मतङ्गाग्नियमा इति पाठः । अष्टविंशत्यंशाधिकराशिसप्तकम् ७।२८ अत्र हेतुरुच्यते सिद्धान्तशिरोमणौ—शनिमन्दोच्चस्य कल्पे युगेषवो ५४ भगणास्तत्पक्षे मतङ्गाग्नियमाः इति पाठः। मन्दोच्चस्य कुसागराः ४१ भगणा इति पाठस्तत्पक्षे शशाङ्काङ्गयमाः २६१ उत्पद्यन्ते । यत्पक्षे युगेषवो भगणा इत्यार्यसिद्धान्तमतं तथा चोक्तम्—सवितुरमीषाञ्च तथा धात्रादिसदग्निसिच्च मन्दोच्चमिति । तथा च सूर्यसिद्धान्ते—गोऽग्नयः शनिमन्दस्य तत्पक्षे शनेर्मन्दोच्चम् ७।२८।३७ एतदेवार्यभटसम्मतम् । अथ मृगांककरणप्रदीपे करणभाष्यादिषु मतङ्गाग्नियमाः २३८ इति मन्दोच्चं गृहीतं क्रमेण तद्वाक्यमिति महीधरा हस्तिकरा नृपाः खम् ७।२८।१६।० मन्दोच्चकानि कुञ्जरानलकराः २३८ शनेर्लवाः कीर्तितां इति निजमृदूच्चसम्भवा निजमृदूच्चं सम्भवति मन्दोच्चं तु मतङ्गाग्नियमा इति शनेर्विशेष इत्याचार्यस्यैव पक्षेऽङ्गीकृतम् । उक्तं च—

१. मतङ्गाग्नियमाः, पाठ भेदः ।

"ज्योतिषमागमशास्त्रं विप्रतिपत्तौ न योग्यमस्माकम् ।
स्वयमेव विकल्पयितुं किन्तु बहूनां मतं वक्ष्ये" ॥ इति वचनम् ॥१॥

मन्दोच्चानि—

सू.	भौ.	बु.	गु.	शु.	श.
२	४	७	५	२	८
१८	८	१५	२२	२१	२१
०	३०	०	३०	०	०
०	०	०	०	०	०

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् । मन्दोच्चानां स्थिरत्वात्स्वकाल एव आचार्य्येण प्रसाध्य पठितानि तानीति स्फुटैव वासना ।

शीघ्रोच्चाः—

कुकुञ्जरा वेदकृतास्त्रिदस्राः समाह्यो विश्वमिताः पराख्याः ॥
भौमादिकानामथमध्यमोऽर्कः शीघ्रोच्चमिज्यारशनैश्चराणाम् ॥ २ ॥

सुमतिहर्षः—

एकाशीतिः ८१ चतुश्चत्वारिंशत् ४४ त्रयोविंशतिः २३ सप्ताशीतिः ८७ त्रयोदश १३ परमाः क्रमेण भौमादीनां पराख्याः एते भौमादीनां परमफलानि जीवारूपाणि एतेषां धनूंषि परमशीघ्रफलानि तद्यथा भौमस्य ४२।४० बुधस्य १।३४।४० गुरोः १।० शुक्रस्य ४।६।५० शनेः ६।११।५ अथ ग्रहाणां शीघ्रोच्चं कथयति—बुधशीघ्रोच्चं शुक्रस्य च मध्यमाधिकारे प्रोक्तम्, अन्येषां गुरुभौमशनीनां मध्यमोऽर्कः शीघ्रोच्चं ज्ञेयम् ॥ २ ॥

मन्दशीघ्रकेन्द्रयोः धनर्णत्वम्—

ग्रहोनमुच्चं मृदु चञ्चलं च केन्द्रे भवेतां मृदुचञ्चलाख्ये ।
त्रिभिस्त्रिभिर्भैः पदमत्र कल्प्यं स्वर्णं फलं मेषतुलादिकेन्द्रे ॥ ३ ॥

सुमतिहर्षः—

देशान्तराब्दबीजविशुद्धेन ग्रहेण हीनं मृदूच्चं मन्दोच्चं चलमुच्चं शीघ्रोच्चं क्रमान्मन्दकेन्द्रं शीघ्रकेन्द्रं स्यात्, तथा च द्वादशराशीनां पदचतुष्टयं भवति तेषां प्रथमतृतीययोर्विषमसंज्ञा द्वितीयचतुर्थयोः

समसंज्ञा, अथ मेषादिषट्कगते केन्द्रे फलं मध्यमग्रहे मन्दस्पष्टे च धनं तुलादिकेन्द्रे ऋणम् ॥ ३ ॥

भुजकोट्यानयनम्—

त्र्यूनं भुजः स्यात्त्र्यधिकेनहीनं भार्द्धं च भार्द्धादधिकं विभार्द्धम् ॥
नवाधिकेनोनितमर्कभं च भवेच्च कोटिस्त्रिगृहं भुजोनम् ॥ ४ ॥

सुमतिहर्षः—

राशित्रयादूनं यदि केन्द्रं तदा स एव भुजः स्यात् यदि राशित्रयादूर्ध्वं केन्द्रं तर्हि तेन हीनं राशिषट्कं भुजः राशिषट्कादधिकं केन्द्रं विभार्द्धं राशिषट्कहीनं भुजः स्यात् नवराश्यधिकेन केन्द्रेण हीना द्वादशराशयः भुजः अथ भुजेन हीनं राशित्रयं कोटिः स्यात् ॥ ४ ॥

भौमादीनां मन्दोच्चस्पष्टीकरणम्—

भौमाशुकेन्द्रे पदयातगम्यस्वल्पस्य लिप्ताः खखवेदभक्ताः ।
लब्धांशकैः कर्कमृगादिकेन्द्रे हीनान्वितं स्पष्टमसृग्मृदूच्चम् ॥५॥
लब्धांशकानां त्रिलवेन हीनः स्पष्टः परः स्यात्क्षितिनन्दनस्य ॥५½॥

सुमतिहर्षः—

भौमस्य शीघ्रकेन्द्रं कृत्वेति मन्दस्पष्टात्तु यत् शीघ्रकेन्द्रं कृत्वेति तद्ग्राह्यम् यदुक्तं सिद्धान्तशिरोमणौ—"मन्दस्फुटोऽस्माच्चलकेन्द्रपूर्वम्' इति, नरपतावपि—"कार्यं चोच्चफलं प्राग्वद्द्वितीये मन्दकर्मणि । तेन संस्कृतमंदोच्चं संस्कृतं स्यात्परिस्फुटम्" ॥ इति ।

लक्ष्मीदासमृगांककारिभिरित्थमेव प्रतिपादितम्, अतो मध्यममन्दोच्चेन प्रथमफलानयनं ततः स्पष्टान्मन्दोच्चादानेयमिति पूर्वाचार्यमतमस्माकमप्येतदेवाभिमतम् । अथ शीघ्रकेन्द्रस्य त्रिभिस्त्रिभिर्भैः पदमिति पदे कल्पिते तस्य यातं तच्च राशित्रयात्पतितं तद्गम्यं तयोर्गतगम्ययोर्यदल्पं तस्य कलाः कार्यास्ताश्चतुःशतैः भक्ता लब्धमंशादिकं फलं तेन कर्कादिराशिषट्के गते भौमशीघ्रकेन्द्रेऽसृग्मृदूच्चं भौमस्य मन्दोच्च हीनं कार्यं मकरादिषट्कगते तु युतः सन् स्फुटं भौममन्दोच्चं स्यात् । अथ स्वल्पस्य लिप्ताभ्यः खखवेदैर्लब्धफलस्यांशादिफलस्य त्रिलवेन तृतीयभागेन भौमस्य पराख्यो भौमपरो हीनः सन् भौमस्य परः स्फुटः स्यात् ॥ ५, ५½ ॥

सुधाकरः—

स्पष्टम् । अत्रोपपत्तिः । भौमादिकानां परमशीघ्रफलानां खार्कमिते व्यासार्द्धे जीवा आकल्य ता एव परसंज्ञाः पठिता इति सुगमा । अथ "भौमाशुकेन्द्रपदगम्यगताल्प जीवा त्र्यंशोनशैलगुणिताऽर्द्धयुत्तस्य राशेर्मौव्योद्धृतेत्यादिना" भौमस्य मन्दोच्चसम्बन्धिसंस्कार मानं

$$=\frac{\text{२०}\times\text{अं}\times\text{२}}{\text{८५}\times\text{३}}=\frac{\text{२०}\times\text{अं}\times\text{६०}\times\text{२}}{\text{८५}\times\text{३}\times\text{६०}}=\frac{\text{२०}\times\text{२}\times\text{अं क}}{\text{८५}\times\text{३}\times\text{६०}}$$

$$=\frac{\text{२}\times\text{अं क}}{\text{८५}\times\text{३}\times\text{३}}=\frac{\text{२ अं क}}{\text{७६५}}=\frac{\text{अं क}}{\text{३८३}}\text{ वा,}$$

स्वाल्पान्तरात् $\frac{\text{अं क}}{\text{४००}}$, अत उपपन्नं मूलोक्तं तथा लब्धांशकैर्विरहितः परिधिरित्यादिना वास्तवपरिधिः=प्रापरि-अं' ततोऽनुपातेन परमानं

$$=\frac{\text{१२० (प्रापरि-अं)}}{\text{३६०}}=\frac{\text{प्रापरि}}{\text{३}}-\frac{\text{अं}}{\text{३}}$$

$=\text{पू प}-\frac{\text{अं}}{\text{३}}$ अत उपपन्नं सर्वं यथोक्तमिति ॥ ५½ ॥

ज्यासाधनम्—

रूपाश्विनौ विंशतिरंकचन्द्रा अत्यष्टितिथ्यर्कनवेषुदस्राः ॥ ६ ॥
ज्याखण्डकान्यंशमितेर्दशाप्तं स्युर्भुक्तखण्डान्यथ भोग्यनिघ्नाः ॥
शेषांशकाः खेन्दुहृता यदाप्तं तद्भुक्तखण्डैक्ययुतं भवेज्ज्या ॥ ७ ॥

सुमतिहर्षः—

एकविंशतिः, विंशतिः, एकोनविंशतिः, सप्तदश, पञ्चदश, द्वादश, नव, पञ्च, द्वि मितानि नव खण्डानि—

ज्याखण्डानि—

१	२	३	४	५	६	७	८	९
२१	२०	१९	१७	१५	१२	९	५	२
२१	४१	६०	७७	९२	१०४	११३	११८	१२०

एतानि नव ज्याखण्डानि, यस्य ज्या साध्या तस्यांशाः कार्यास्तेभ्यो दशभिर्यावल्लब्धं तावन्ति भुक्तखण्डानि शेषमंशादि भोग्येनाग्रिमखण्डेन गुणितं दशभिर्भक्तमाप्तं भुक्तखण्डानां पूर्वलब्धानामैक्यं युतं ज्या भवेत् यत्र दशभिर्भागो न लभ्यते तत्र प्रथमखण्डो भोग्यः ॥ ७ ॥

धनुः करणम्—

विशोध्य खण्डानि दशघ्नशेषादशुद्धलब्धं धनुरंशकाद्यम् ॥
विशुद्धसंख्याहतदिग्युतं स्याद्व्यस्तैर्दलैर्व्यस्तधनुर्ज्यके स्तः ॥ ८ ॥

सुमतिहर्षः—

यस्य ज्यायां धनुः साध्यते तस्या आद्यखण्डादारभ्य यावन्ति खण्डानि शुध्यन्ति तावन्ति विशोध्य शेषाद्दशगुणादशुद्धखण्डेन भक्ताल्लब्धं तद्विशुद्धसंख्यया गुणितैर्दशभिर्युतमंशाद्यं धनुः स्यात्, अथ व्यस्तैर्वैपरीत्येन स्थितैर्दलैरेवं खण्डाः २।५।९।१२।१५।१७।१९।२०।२१। यथोक्तविधिनोत्क्रमधनुरुक्तं ज्या च स्यात्, परमत्र प्रयोजनमनयोर्नास्ति, प्रसङ्गादुक्तम् । अथाल्पान्तरत्वाल्लाघवायाचार्येणोक्तमपि भोग्यखण्डस्पष्टीकरणं सिद्धान्तशिरोमणौ—

यातैष्ययोः खण्डकयोर्विशेषः शेषांशनिघ्नो नखहृत्तदूनम् ।
युक्तं गतैष्यैक्यदलं स्फुटं स्यात् क्रमोत्क्रमज्याकरणेऽत्र भोग्यम् ॥

यथा चतुर्विंशत्यंशानां २४ ज्यायां साध्यमानायां दशाप्ता लब्धं २ शेषं ४ गतखण्डं २० भोग्यखण्डं १९ अनयोरैक्यात् ३९ अर्द्धं १९।३० क्रमज्यात्वादूनितं १९।१८ स्फुटं भोग्यखण्डं जातं ततो भोग्यनिघ्नाः शेषांशका इत्यादि कर्म स्फुटं भोग्यखण्डेन कार्यमिति कृते जाता ज्या ४८।४३ इयं परमक्रान्तिज्या ज्ञेया, अथ धनुः करणे भोग्यखण्डस्फुटीकरणं सिद्धान्ताद्यथा—

"विशोध्य खण्डान्यवशेषकार्द्धनिघ्नं गतैष्यान्तरमेष्यभक्तम् ।
फलोनयुग्भोग्यगतैष्यखण्डं चापार्थमेवं स्फुटभोग्यखण्डम् ॥"

इत्यादिना गतैष्ययोरन्तरम् १ शेषांशैः ४ गुणितम् ४ नखैः २० भक्तम् ०।१२ अनेन भक्तं 'फलोनयुग्भोग्यगतैष्यखण्डं चापार्थमेवं स्फुटभोग्यखण्डम्' ॥ यथा जिनांशज्यायां ४८।४३ धनुःकरणे विशोध्यखण्डानि २१।२० शेषम् ७।४३ अस्यार्द्धेन ३।५२ गतैष्यान्तरम् १ गुणितम् ३।५२ गम्येन १९ भाजितम् ०।१२ लब्धेन गतैष्यार्द्धम् १९।३० क्रमधनुःकरणत्वादूनम् १९।१८ स्फुटभोग्यखण्डं जातम्, अशुद्धलब्धमित्ययं विधिरनेन कार्यः जातं धनुः २४ इत्यन्यच्च सूक्ष्मतामिच्छता विधेयम् ॥ ८ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थमुपपत्तिश्च सरला ॥

मन्दफलसाधनम्—

सूर्यादिकानां मृदुकेन्द्रदोर्ज्या दिग्घ्नी विभाज्याथ खपञ्चबाणैः ॥
नागाग्निदस्रैर्गिरिपूर्णचन्द्रैर्वस्वङ्कभूभिर्वसुनेत्रनेत्रैः ॥ ९ ॥

युगाष्टशैलैर्मुनिपञ्चचन्द्रैः फलं लवाः केन्द्रवशाद्धनर्णम् ॥
कार्यं ग्रहे सूर्यविधू स्फुटौ स्तो मन्दस्फुटाख्या इतरे स्युरेवम् ॥ १० ॥

सुमतिहर्षः—

सूर्येति । सूर्यादीनां मन्दकेन्द्रस्य भुजः कार्यः स्वस्यांशमितेर्दशाप्तमित्यनेन ज्या कार्या सा दिग्घ्नी दशगुणा सा सूर्यस्य सम्बन्धिनी चेत्तदा खपञ्चबाणैः ५५० सार्द्धपञ्चशतैर्भाज्या लब्धमंशादिफलम् १।३४।३२ अनेन संस्कृतो मध्यमोऽर्कः १।१।३३।२६ जातो मन्दफलसंस्कृतः सूर्यः १।३।७।५८ अस्माज्जातं चरमृणम् ८६ अनेन संस्कृतः स्पष्टोऽर्कः—१।३।६।३२ सा ज्या चेच्चन्द्रस्य तर्हि नागाग्निदस्रैरष्टत्रिंशदुत्तरद्विशत्या २३८ भाज्या लब्धमंशादिफलं स्यात्, भौमस्य गिरिपूर्णचन्द्रैः सप्तोत्तरशतेन १०७ भाज्या, बुधस्य वस्वङ्कभूभिर्यूनद्विशत्या १९८, गुरोर्वसुनेत्रनेत्रैरष्टाविंशत्युत्तरद्विशत्या २२८, शुक्रस्य युगाष्टशैलैश्चतुरशीत्युत्तरसप्तशत्या ७८४, शनेर्मुनिपञ्चचन्द्रैः सप्तपञ्चाशदुत्तरशतेन १५७, एतदंशादिफलं केन्द्रवशाद्धनर्णं कार्यं मेषतुलादिकेन्द्रे क्रमाद्धनर्णं मध्यग्रहे कार्यम्, एवं कृते रविचन्द्रौ स्फुटौ भवतः, इतरे भौमादयो मन्दस्फुटा भवन्तीत्यर्थः । अथैषां परमं मन्दफलं कलादि रवेः १३०।५०; चन्द्रस्य ३०२।३१, भौमस्य ६७२।५४, बुधस्य ३६२।१०, गुरोः ३१५।४३, शुक्रस्य ११०।०, शनेः ४५८।३३ इति ॥ १० ॥

सुधाकरः—

स्पष्टार्थमिदम् । अत्रोपपत्तिः । सिद्धान्तविधिना परममन्दफलान्यानीय ततोऽनुपातः कृतस्तद्यथा रवेः यदि खार्कमितया दोर्ज्यया परमफलं भागादिकं लभ्यते तदाऽभीष्टया किं जातं लवादिकं रवेर्मन्दफलं $\frac{\text{दो}\times\text{१३०}}{\text{१२०}\times\text{६०}}=\frac{\text{दो}\times\text{१०}}{\text{५५४}}$ अत्र मन्दफलं $\frac{\text{१२०}}{\text{६०}}$ अस्मात्
किञ्चिदधिकमस्त्यतो हरेह्याद्यस्थाने रूपं कृतं तस्माद्धराद्वास्तवासन्नमेव

फलमित्येवं सर्वेषामुपपत्तिर्ज्ञेया दोर्ज्यागुणकस्य दशांशेनापवर्त्तनं विधायेति शेषं स्फुटमेव ॥ १० ॥

मध्यमार्कोदयात् स्फुटोदयकरणम्—

भानोः फलं भैर्विहृतं च चन्द्रे मध्ये विधेयं रविवद्धनर्णम् ॥ १०½ ॥

सुमतिहर्षः—

भानोरिति । ज्यायाः खपञ्चबाणैः ५५० लब्धं भानोः फलं भैः सप्तविंशतिभिर्भक्तं फलमंशादि मध्यमचन्द्रे धनर्णं कार्यम्, रविफलं रवौ यदि धनं स्यात्तदा मध्यमचन्द्रे धनं कार्यम् ऋणं चेत्तदा ऋणमेव कार्यम् ततश्चन्द्रः स्पष्टो विधेयः अन्येषां स्वल्पान्तरत्वान्न कृतम् ॥१०½॥

सुधाकरः—

अत्रोपपत्तिः । यदि त्रिंशदंशैर्निरक्षोदयो लभ्यते तदा रविफलांशैः किम् पुनर्यदि षट्त्रिंशच्छतपानीयपलैश्चन्द्रगतिर्भागात्मिका तदा पूर्वानीतपलैः किं लब्धं संस्कारमानमंशात्मकं तद्रूपं च यथा—

$\frac{\text{नि उ} \times \text{र फ} \times \text{च ग फ}}{३० \times ३६०० \times ६०}$ अत्र मध्यममानेन सर्वत्रोपयोगित्वात् निरक्षोदयमानं पलात्मकं त्रिंशच्छतसमं गृहीतं तथा चन्द्रगतिः कलात्मिका स्वल्पान्तरादष्टशतसमा ततः संस्कारस्य स्वरूपान्तरं $= \frac{३०० \times ८०० \times \text{र फ}}{३० \times ३६०० \times ६०}$

$= \frac{८ \times \text{र फ}}{३६ \times ६} = \frac{\text{र फ}}{२७}$ अत उपपन्नम्॥ १०½ ॥

सूर्यादीनां गतिफलम्—

स्वभोग्यखण्डं नवहृत्खरांशोर्विश्वाहतं वेदहृतं हिमांशोः ॥ ११ ॥
द्विघ्नं नगाप्तं कुजसौम्ययोश्च खार्क्षैरिनैः खार्कमितैश्च भक्तम् ।
जीवादिकानां च गतेः फलं तत्स्वर्णं क्रमात्कर्कमृगादिकेन्द्रे ॥ १२ ॥

सुमतिहर्षः—

यस्य ग्रहस्य भुक्तिफलं साध्यं तस्य भुजज्याकरणे यद्भोग्यखण्डं तत्सूर्यसम्बन्धि चेत्तदा नव ९ भिर्भाज्यं लब्धं कलादिकं ग्राह्यं तत्सूर्यगतिफलं स्यात्, एवं चन्द्रस्य स्वभोग्यखण्डं विश्वै १३ र्गुणितं वेदै ४ र्भक्तं लब्धं चन्द्रस्य गतिफलं स्यात्, अथ द्वाभ्यां २ गुणितं सप्तभि ७ र्भक्तं कुजस्य गतिफलं स्यात्, एवं बुधस्य च केवलम्, गुरोः स्वभोग्यखण्डं खार्क्षैः पञ्चाशद्भिः ५० भक्तं लब्धं गुरोर्गतिफलं स्यात्, एवं शुक्रस्य स्वभोग्यखण्डमिनैर्द्वादशभि १२ र्भक्तं भृगुगतिफलं स्यात्, शनेः स्वभोग्यखण्डं खार्कमितै १२० र्भक्तं शनिगतिफलं स्यात् एवं स्वस्वगतिफलं स्वस्वमध्यगतौ कर्कादिमन्दकेन्द्रे सति धनं कार्यम्, मकरादिकेन्द्रे त्वृणं कार्यम्, एवं कृते रविचन्द्रयोः स्फुटा गतिर्भवति, भौमादिकानां तु मन्दस्फुटाख्या स्यात् ॥ १२ ॥

सुधाकरः—अथ गतिफलानयनेत्वनुपातः यदि दशभिरंशैर्भोग्यखण्डं लभ्यते तदा मृदुकेन्द्रगत्या भागादिकया किं लब्धमद्यतनस्वस्तन केन्द्रज्ययोरन्तरं ततो यन्मन्दफलं कलादिकं तदेवगतिफलं यथा रवेः गफ =
$\frac{\text{भो ख} \times ६० \times १० \times ६०}{१० \times ६० \times ५५१} = \frac{\text{भो ख}}{९}$ एवं सर्वेषामुपपत्तिर्ज्ञेयेति सर्वं निरवद्यमिति ॥

भौमादीनां शीघ्रफलसाधनम्—

कोटिज्या चलकेन्द्रजा परगुणा द्विघ्नी तयोनान्विता,
केन्द्रेकर्कमृगादिके परकृतिः खाभ्राब्धिशक्रैर्युता ॥
तन्मूलं श्रवणः परेण गुणिता दोर्ज्याथ कर्णोद्धृता,
तच्चापं चपलं फलं धनमृणं मन्दस्फुटे स्यात्स्फुटः ॥ १३ ॥

सुमतिहर्षः—

मन्दस्फुटं शीघ्रोच्चाद्विशोध्य यच्छेषं तच्छीघ्रकेन्द्रं भवति तस्य कोटिः साध्या तस्याश्च ज्या साध्या सा स्वकीयेन पराख्येण गुण्या सैव पुनर्द्वाभ्यां २ गुणिताधः स्थाप्या षष्टिभक्ता फलेनान्विता कार्या, अथ परस्य कृतिस्तेनैवाङ्केन तस्यैवाङ्कस्य गुणनं कृतिः सा परस्य कृतिः खाभ्राब्धिशक्रैश्चतुःशताधिकचतुर्दशसहस्रै १४४०० र्युताः कार्या एतादृशा परकृतिः कर्कादिशीघ्रकेन्द्रे सति परगुणा द्विस्था कोटिज्या हीना कार्या तस्येदम्मूलम् "त्यक्त्वान्त्याद्विषमात्" इति लीलावत्युक्तविधिना कृतश्रवणः कर्णसंज्ञकोऽङ्को बोद्धव्यः, अथ शीघ्रकेन्द्रस्य दोर्ज्या पराख्येण गुणिता कर्णसंज्ञकेन भक्ता लब्धस्य चापं धनुः विशोध्य खण्डानीत्यनेन कार्यं तदेव धनुः चञ्चलं शीघ्रफलं तत्फलं मन्दस्फुटे ग्रहे धनमृणं कार्यं मेषतुलादिकेन्द्रवशात्, मेषादिकेन्द्रे धनं तुलादिकेन्द्रे ऋणं तदा ग्रहः स्फुटः स्यात् ॥ १३ ॥

भौमस्य स्फुटगतिज्ञानम्—

तदुत्थमाद्येन चलेन मध्यश्चेत्संस्कृतः स्पष्टतरस्तदा स्यात् ।
दलीकृताभ्यां प्रथमं फलाभ्यां ततोऽखिलाभ्यामसकृत्कुजस्तु ॥ १४ ॥

सुमतिहर्षः—

तदुत्थेति । यत्स्फुटो जातस्तस्मादुत्थं तदुत्थं तेन तदुत्थेन मान्देन पुनस्तदुत्थचलेन चेन्मध्यमः संस्क्रियते तदासौ स्पष्टतरः स्यात् तदुक्तं भवति यः स्पष्टः कृतः स एव मध्यमः परिकल्प्यः तस्मात् प्रागुक्तप्रकारेण मन्दफलं संसाध्य मध्यमे संस्कार्यमित्यनयैव रीत्या स्पष्टतरः स्यात्, एवमसकृद्यावत् स्थिरः स्यात्, भौमस्य तु विशेषः प्रथमं मन्दफलेन दलीकृतेन शीघ्रफलेन दलीकृतेन चैवं दलीकृताभ्यां प्रथमं फलाभ्यां ततोऽखिलाभ्यां सम्पूर्णाभ्यामिति यस्तु दलीकृतमन्दफलाभ्यां संस्कृतस्तस्मान्मान्दं सकलं मध्यमे संस्कार्यं तस्माच्छीघ्रं संसाध्य तस्मिन्नेव सकलं शीघ्रं संस्कुर्यात् इति, पुनः पुनर्दलीकृताभ्यां ततोऽखिलाभ्यां संपूर्णाभ्यामिति, यस्तु दलीकृताभ्यां संस्कृतस्तन्मान्दं सकलं मध्यमे संस्कार्यं तस्माच्छैघ्र्यं संसाध्यं तस्मिन्नेव सकलं शैघ्र्यं संस्कुर्यादिति पुनः पुनर्दलीकृताभ्यां ततोऽखिलाभ्यामेवमसकृद्यावदविशेषः स्यात्तावदिति, एव भौमः स्पष्टतरः स्यात्, यैर्बुधादीनामपि दलीकृताभ्यां प्रथमं फलाभ्यामिति कृतं तदसत् लक्ष्मीदासगणकवचनम्, अथ भौमगतौ विशेषः दलीकृताभ्यामिति तथैवोक्तं सिद्धान्तशिरोमणौ—

"स्यात्संस्कृतो मन्दफलेन मध्यो, मन्दस्फुटोऽस्माच्चलकेन्द्रपूर्वम् ।
विधाय शैघ्र्येण फलेन चैवं खेटः स्फुटः स्यादसकृत्फलाभ्याम् ॥
दलीकृताभ्यां प्रथमं फलाभ्यां ततोऽखिलाभ्यामसकृत्कुजस्तु ।
स्फुटौ रवीन्दू मृदुनैव वेद्यौ शीघ्राख्यतुङ्गस्य तयोरभावात्" ॥

इत्यत्र दलीकृताभ्यामित्यादि यदुक्तं तत्कुजस्यैव न त्वन्येषामिति भौमः प्रथमाभ्यां द्वाभ्यां फलाभ्यामर्द्धीकृताभ्यां संस्कार्यं ततो द्वाभ्यां समग्राभ्यां संस्कृत्य स्पष्टो भवति किन्त्वसकृत् कर्मणा यावत्स्थिरो भवत्यपरे ग्रहाः समग्राभ्यां फलाभ्यां प्रथमाभ्यां च सकृदेव स्पष्टाः भवन्ति ॥ १४ ॥

सुधाकरः—

स्पष्टार्थम् । अत्रोपपत्तिः । खार्कमितां त्रिज्यां प्रकल्प्य "स्वकोटिजीवान्त्य फलज्ययोश्च, योगोमृगादावथकर्कटादावित्यादिना" कर्णाद्यानयनोपपत्तिः स्फुटा । अथ मूलावशेषकं सैकं षष्टिघ्नमित्यस्योपपत्तिः । कल्प्यते अवर्गाङ्कः=अ अस्य निरग्रमूलं=मू वास्तवमूलं=या+मू ततः $(\text{या}+\text{मू})^2=\text{अ}$

वा, $\text{या}^2 + २\ \text{या मू} + \text{मू}^2 = \text{अ}$

अथवा $\text{या}^2 + २\ \text{या मू} = \text{शे}$ ततः

$२\ \text{या}^2 + २\ \text{या. मू} = \text{या}^2 + \text{शे}$ ततः

$\text{या} = \dfrac{\text{या}^2+\text{शे}}{२\text{या}+२\ \text{मू}}$ अत्र या स्थाने स्वल्पान्तराद्रूपस्योत्थापने कृते

जातं $\text{या} = \dfrac{१+\text{शे}}{२+२\text{मू}}$ अधोऽवयवार्थं षष्टि गुणितमित्युपपन्नम् ॥१४॥

गतिस्पष्टीकरणम्—

गतेः फलेनैवतु संस्कृता या मध्या गतिर्मन्दगतिर्भवेत्सा ।
ग्रहस्य मन्दस्फुटभुक्तिवर्जिता स्वाशीघ्रकेन्द्रस्य गतिर्भवेत्सा ॥ १५ ॥
द्राक्केन्द्रभुक्तिर्गुणिताशु चापभोगज्यया खाब्धि गुणा च भक्ता ।
समघ्नकरणेन चलोच्चभुक्तेः शोध्या विशेषा स्फुटखेटभुक्तिः ॥ १६ ॥

सुमतिहर्षः—

द्राक्केन्द्रेति । मन्दस्फुटा गतिः शीघ्रोच्चभुक्तेः शोधयेत् शेषं द्राक्केन्द्रभुक्तिर्भवति सा शीघ्रचापभोग्यज्यया गुणिता शीघ्रमूलानि परमाणि करणशीघ्रफलार्थं चापकरणे यदशुद्धं खण्डं तेन गुण्या पुनः खाब्धिभिश्चत्वारिंशद्भिर्गुणिता सप्तघ्नकरणेन सप्तगुणेन कर्णसंज्ञकेन भक्ता लब्धं कलाद्यं शीघ्रोच्चभुक्तेः शोध्यं शेषं स्फुटाभुक्तिर्भवति यदा सप्तघ्नकरणाप्तफलस्याधिक्याच्छीघ्रोच्चभुक्तिस्तेन हीना न स्यात्, तदा विपरीतशुद्धया फलं शीघ्रोच्चभुक्त्या हीनं शेषं स्फुटभुक्तिस्तत्र वक्रगतिरिति ज्ञेयम्, तदा ग्रहो वक्रीत्यर्थः । कैश्चिद्गतीनामप्यसकृत्कर्मं कृतं तदसत् यतोऽन्त्यकर्मण्येव गतः साधनं प्राक्तनगतेरनुपयोगित्वात्, अथ विशेषश्चात्र यदा ग्रहाणां परमशीघ्रफलं तदा मध्यमैव गतिः स्पष्टा ज्ञेया यदुक्तं सिद्धान्तशिरोमणौ—

"कक्षामध्यगतिर्यत्रेखा प्रतिवृत्तसम्पाते ।
मध्यैव गतिः स्पष्टा परं फलं तत्र खेटस्य" ।

स्वशीघ्रोच्चसमे ग्रहे स्पष्टा शीघ्रगतिः परमोच्यते ॥ १६ ॥

सुधाकरः—अत्र आशुचापेन शीघ्रफलं ज्ञेयमन्यत्स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः—यदि दशभिरंशैर्भोग्यखण्डं तदा शीघ्रकेन्द्रगत्या किम् ! लब्धं शीघ्रफलस्य शीघ्रकेन्द्राधिकफलस्य च ज्ययोरन्तरं ततः कर्णाग्रे पूर्वलब्धसममन्तरं तदा त्रिज्याग्रे किम् पुनश्चापार्थं प्रथम ज्याखण्डेन दशांशास्तदाघुनानीतेन किं जाता स्पष्टा केन्द्रगतिः तत्कलारूपं

$$= \frac{\text{भो ख} \times \text{के ग} \times १२० \times १० \times ६०}{१० \times \text{शी क} \times २१ \times ६०} = \frac{\text{भो ख} \times \text{के ग} \times ४०}{७ \times \text{शी क}}$$

अत उपपन्नं यथोक्तं "फलांशखाङ्कान्तरशिञ्जिनीघ्नी" त्याद्युपपत्तौ यत्क्षेत्रं तदेवात्रापि बोध्यम् । शेषोपपत्तिश्चातिस्फुटा ।। १६ ।।

अयनांशानयनम्—

अथायनांशाः करणाब्दलिप्ता युक्ता भवास्तद्युतमध्यभानोः ॥ १७ ॥

सुमतिहर्षः—

अथानतये मङ्गलार्थं वा करणगताब्दतुल्याभिः कलाभिर्युक्ता भवा एकादशांशा अयनांशा भवन्ति विशेषश्चात्र यथाब्दादावयनांशाः ११। २४ ग्रन्थकृता चतुर्विंशतिविकलान्विहायांशा एव भवा एकादशमिता गृहीताः अथास्य साधनम्, एषामयनांशानां प्रतिवर्षमेकैककलाश्चाधिका उत्पद्यन्ते तत्पक्षे परमायनांशास्त्रिंशदंशाः ३० भवन्ति यत्पक्षे प्रतिवर्षं चतुःपञ्चाशद्विकलाः ५४ उत्पद्यन्ते तत्पक्षे सप्तविंशत्यंशाः परमायनांशा उत्पद्यन्ते, उक्तञ्च सूर्यसिद्धान्तटीकायां-प्रतिवर्षमेकलिप्ताषष्टिवर्षैरंशमेकमष्टादशवर्षशतैरेको राशिः षट्शताधिकैरेकविंशतिसहस्रैर्वर्षैर्भगणमेकं २१६०० चतुर्युगाब्दैरेभिर्वर्षैः ४३२०००० भगणशतद्वयम् २०० एवोत्पद्यते. अतः सूर्यसिद्धान्ते– त्रिंशदंशावधिचलनांशा जायन्ते प्राक् चलनेऽयनांशाः गणकैर्योज्यन्ते न तु कदापि पात्यन्ते साम्प्रतं विषमराशित्वात्प्राक् चलनं प्राक् चलिते ये भक्तभागास्ते वृद्धिमन्तोऽयनांशा ज्ञेयाः एवं प्रत्यक् चलनमग्रतः समराशौ भविष्यति तत्र ये भुक्तभागास्ते त्रिंशद्भिः ३० शोधिता अतएवापवृत्त्या शेषं ज्ञेयास्तथायनांशा भविष्यन्ति तद्युक्तादर्कतः क्रान्त्यादिकं साध्यम्,

"अयनांशाः प्रदातव्या लग्ने क्रान्तौ चरागमे ।
सत्रिभे वित्रिभे लग्ने दृक्कर्मणि सदा बुधैः ॥
कृते कर्मणि ते त्याज्या न त्याज्याः सूर्यपर्वणि" । पुनः

"युक्तायनांशादवमः प्रसाध्यः कालौ च खेटात्खलु भुक्तभागौ" इति । अतो यावन्तो गताब्दास्तावन्त्यः कला अयनांशा इत्युपपन्नं सविस्तरं ग्रन्थान्तरात्, यथात्र करणेगताब्दाः ४३६ कलाः षष्टिभक्ता ७।१६ अंशादि अनेनांशादिना भवा एकादशांशाः ११ अन्विताः १८।१६।० चैत्रात्प्रतिमासं पञ्च विकला वर्द्धन्ते ततो मासद्वयं गतं तेन दश १० विकलाः युक्ता एवमयनांशाः १८।१६।१० ।। १७ ।।

सुधाकरः– करणात् करणग्रन्थारम्भाद्ये अब्दास्तत्समा लिप्ता इति करणाब्दलिप्ताः शेषं स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । ग्रन्थारम्भे रुद्रलवमिता अयनांशा आसन् प्रतिवर्षं चैककला गतिश्च स्वल्पान्तरात्तत् उपपन्नमयनांशानयनम् ।

उदयान्तरमाह—

द्विघ्नस्य दोर्ज्याशिरहृद्विलिप्ता भानोर्विधोः क्वक्षिहृताः कलास्ताः ॥
स्वर्णं च युग्मौ जयदस्थितेऽर्के क्रमेण कर्मेत्युदयान्तराख्यम् ॥ १८ ॥

सुमतिहर्षः—

द्विघ्नस्येति–तैरयनांशैर्युक्तस्य मध्यमार्कस्य द्विगुणस्य भुजज्या पञ्चभि ५ भंक्ता लब्धा विकला समविषमपदस्थिते सायनेऽर्के क्रमेण धनमृणं वा रवौ कार्यं समपदस्थे सायनेऽर्के धनं कार्यं विषमपदस्थे सायनेऽर्के ऋणं सैव भुजज्यैकविंशतिभि ११ भंक्ता लब्धं कलादि सूर्यवच्चन्द्रे धनमृणं वा कार्यम् एतदुदयान्तराख्यं कर्मापरेषामन्येषां स्वल्पान्तरत्वान्न कृतं यथायनांशैः १८।१६।१० मध्यमोऽर्कः १।१।३३।२६ युतः १।१९।४९।३६ द्विगुणः ३।९।३९।१२ अस्य भुजः २।२०।२०।४८ अस्य ज्या ११८।४ पञ्च ५ भक्ता लब्धा विकलाः २३ रवेरुदयान्तरं सायनोऽर्को विषमपदे तेन स्पष्टे रवावृणं कार्यमेवमेषैव भुजज्या ११८।४ एकविंशतिभि २१ भंक्ता लब्धं कलादि ५।३७ सूर्यवत्स्पष्टे चन्द्रे ऋणं कार्यम् ।। १८ ।।

सुधाकरः—अथ 'मध्याद्रवेरयनभागयुताद्द्विनिघ्नाद्दोर्ज्या लघुर्गतिगुणा खनगाश्वि भक्ता' इत्यादिनोदयान्तर कर्मानीतं तद्यथा रवेः

$\frac{\text{दोर्ज्या} \times \text{६०}}{\text{२७०}} = \frac{\text{दोर्ज्या}}{\text{५}}$ एवं चन्द्रस्य कलादिकं फलं $\frac{\text{दोर्ज्या} \times \text{७९०}}{\text{२७०} \times \text{६०}}$ $= \frac{\text{दोर्ज्या}}{\text{२१}}$ अन्येषां ग्रहाणां स्वल्पान्तरान्नोक्तं गतेरल्पत्वादिति ॥ १८ ॥

चरकर्म—

अयनलवदिनैः प्राङ्मेष संक्रान्तिकालाद्-
भवति दिवसमध्ये याक्षभाक्षप्रभा सा ॥
दश गज दश निघ्नी साक्षभान्त्या त्रिभक्ता
प्रतिगृहचरखण्डान्यायनांशाढचभानोः ॥१९॥
भुजगृहमितयोगो भोग्यखण्डांशघातात्-
खगुणलवयुगस्वं स्वं चरं गोलयोः स्यात् ॥
चरपलगतिघातः षष्टिभक्तो विलिप्ताः
स्वमृणमुदयकाले व्यस्तमस्तग्रहेषु ॥२०॥

सुमतिहर्षः—

अयनेति । अयनांशोत्पन्नदिनैर्मेषसंक्रमपूर्वतो यद्दिनं तस्य मध्याह्ने द्वादशाङ्गुलशंकोर्या छाया साक्षप्रभा स्यात्, अथायनांशोत्थदिनानयनम्, अयनांशाः स्वद्विचत्वारिंशदंशेन हीनाः क्रियन्ते अयनदिनानि भवन्ति, अथ सूर्यस्य मेषादौ गतिः तस्मिन् ५९८ अयनांशाः संगुण्य षष्टया विभजेल्लब्धमयनदिनानि मध्यन्दिने मध्याह्नसमये द्वादशांगुलशंकोर्या छाया साक्षप्रभा भवति, साक्षप्रभा स्थानत्रयस्थिता दशभिरष्टभिर्दशभिश्च क्रमेण गुणिता ततोऽन्त्या या दशगुणा सा त्रिभिर्भक्ता त्रीणि चरखण्डानि भवन्ति एतावन्ति चरखण्डानि यावदष्टाङ्गुलाक्षभा तावत्समीचीनानि ततः परं सान्तराणीति विचार्य ततोऽयनांशैर्युक्तस्य सूर्यस्य स्फुटार्कस्य भुजः कार्यस्तद्भुजराशिसमसंख्यचरखण्डयोगो विधेयः एवं जातं चरं सौम्यगोले मेषादिराशिषट्कस्थे सायनेऽर्के ऋणमृणरूपं भवति चरं याम्यगोले तुलादिषट्के स्वं धनरूपम्, अथ पूर्वागतैश्चरपलैर्ग्रहस्य गतिर्गुण्या षष्टया भाज्या लब्धं विकला औदयिके स्वमृणमिति पूर्वोक्तवद्धनरूपत्वेन धनमृणरूपत्वेनर्णं विधेयं ग्रहे, अस्तकाले तु व्यस्तं धनत्वमृणमृणत्वं धनमेवं चरकर्मसंस्कृतो ग्रहः स्यात्, अस्य किमपि विशेषान्तरमुच्यते, औदयिके धनर्णं यथागतं

कुर्यात्, अस्ते व्यस्तं कुर्यात्, मध्याह्ने मध्यरात्रे च चरपलसंस्काराभावः दक्षिणोत्तरवृत्तस्यैकत्वादित्येवावगन्तव्यं परन्त्वेषां चतुर्णां स्थानानां व्यवधानस्थिते ग्रहे किं कार्यमित्युच्यते, उदयकालाद्घटीभिश्चाल्यते तस्य मध्याह्ने चास्तेप्यर्द्धरात्रे सर्वत्र तद्व्यवधानस्थे चौदयिकवज्ज्ञेयं गत्यर्द्धं कृत्वाऽस्तकालिकः कृतस्तस्माद्घटीभिश्चालितस्य व्यस्तमेव सर्वत्र ज्ञेयं गतिचतुर्थांशं दत्त्वा पादोनां च दत्त्वा दक्षिणोत्तरवृत्तस्थं च कृत्वा तस्माद्यावद्दिनावधि चाल्यते तत्र तस्यैव तत्फलाभाव इति ज्ञेयम् । अयनांशाः १८।१६।१० गोमूत्रिकया सूर्यगत्या ५८।३५ गुणिता १०७०।१७।५ षष्टया भक्ता लब्धानि दिनानि १७।५०।१७ अथवा स्वद्विचत्वारिंशदंशेन ०।२६।५ गुणितोऽयनांशैः १८।१६।१० हीनः कार्यः १७।५०।५ एभिर्दिनैर्मेषसङ्क्रमतः पूर्वदिनैर्मध्याह्ने द्वादशांगुलशंकोश्छाया शिवपुर्यामक्षभांगुलाद्या ५।३० त्रिस्था दशाष्टदशगुणा ५५। ४४।५५ अन्त्या त्रिभक्ता चरखण्डानि ५५।४४।१८ उदयान्तरसंस्कृतः स्पष्टोऽर्कः १।३।७।३४ अयनांशैः १८।१६।१० युतः १।२१।२३।४४ अस्य भुजोऽयमेव भुजगृहमितयोगः भुजे १ राशिस्तेनैकचरखण्डस्य योगः ५५ भुक्तं शेषांशाः २१।२३।४४ भोग्यखण्डेन ४४ गुणितं ९४१। २४।१६ त्रिशद्भक्तं लब्धेन ३१।२२ भुक्तचरखण्डयोगो ५५ युक्तः ८६।२२ सुगमत्वात् २२ त्यक्तमुत्तरगोले सायनार्कस्तेनर्णरूपाणि, अथ चरकर्मचरपलैः ८६ सूर्यस्पष्टा गतिः ५७।९ गुणिता षष्टया भक्ता लब्धं विकला ८२ एवं चन्द्रस्य विकला १२०३ भौमस्य ७ बुधस्य १४८ गुरोः १६ शुक्रस्य ८७ शनेः १० राहोः ४ राहुं विना सर्वेषामृणम्, वक्रिणि विपरीतमिति वचनाद्राहोर्वक्रत्वाद्धनमेवं सर्वकर्म स्पष्टा औदयिका यन्त्रे लिखिताः ।: २० ॥

तिथि-करण-नक्षत्र-योगसाधनम्—

विरविचन्द्रलवारविषड्हृताः पृथगितास्तिथयः करणानि च ॥
कुरहितानि बवाच्छकुनिप्रभृत्यसितभूतदलादि चतुष्टयम् ॥ २१ ॥
ग्रहकलाः सरवीन्दुकलाहृताः खखगजैश्चमयोगमिती क्रमात् ॥
अथ हृताः स्वगतैष्यविलिप्तिकाः स्वगतिभिश्च गतागतनाडिकाः ॥ २२ ॥

सुमतिहर्षः—

अर्कोनचन्द्रस्यांशा द्विस्था एकत्र ,रविहृता अपरत्र षड्हृता

द्वादशाप्ता इतागताः शुक्लपक्षप्रतिपदादितस्तिथयः द्वादशभिरंशैरेका तिथिः। उक्तं च—"अर्काद्विनिःसृतः प्राचीं यद्यात्यपहरञ्छशी।
तच्चन्द्रमानमंशैस्तु ज्ञेयाद्वादशभिः स्थितिः"। इति।

षडाप्ता एकरहिता निगदितकरणानि तानि बवाद्बवनामकरणात् शुक्लपक्षप्रतिपदुत्तरार्द्धाद्भवति कृष्णचतुर्दश्युत्तरार्द्धाच्छकुनादि चतुष्टय भवति, उक्तं च—चतुर्दश्यन्त्यार्द्धादि शकुनादि चतुष्टयं शकुनिचतुष्पदनागकिंस्तुघ्नं प्रथमे प्रतिपत्तिथ्यर्द्धाद्बवादिति, ग्रहकला इति यस्य ग्रहस्य नक्षत्रं जिज्ञासितं भवति तस्य कला अष्टशतैः भाज्याः लब्धसमान्यश्विनीतो गतनक्षत्राणि, चन्द्रार्कं योगस्य कला अष्टशतैः भक्ता लब्धसमा योगा गता विष्कुम्भादयः, अथ सर्वत्र भक्तादवशिष्टं तद्गतं तदेवं गतं स्वहरात्पतितं गम्यं भवति गतगम्ययोः विकलाः स्वभुक्त्या भक्ता गता गम्याश्च घटिका भवन्ति, यदि कलीकृतया भाज्यन्ते गम्यया प्रतिविकलया भाज्या लब्धा गता गम्याश्च घटिका भवन्तीति विशेषः, यथा सूर्यभुक्त्यूनयाप्तास्तिथिकरणघट्यस्तथा तस्यैव गत्याप्ता नक्षत्रघटिका रविचन्द्रयोगाप्ता योगघटिकाः, यथा रविणा १।३।६।१२ चन्द्रः ०।८।४७।२१ ऊनः ११।५।४१।९ अस्यांशाः ३३५।४१।९ द्वादशभक्ता लब्धं २७ गतास्तिथयः कृष्णद्वादशीगता शेषं ११।४१।९ त्रयोदश्यागतं स्वहरात्पतितं गम्यम् ०।१८।५१ अस्य प्रतिविकलाः ६७८६० गतस्य प्रतिविकलाः २५२४१४० सूर्यचन्द्र गत्यन्तरेण ७८१।५२ विकलीकृतेन ४६९१२ भक्ता लब्धं गतघटिकाः ५३।४८ अस्य गम्यस्य प्रतिविकलाः ६६८६० पूर्वभाजकेन ४६९१२ भक्ता लब्धा घटिका १।२६ तिथिपत्रे ५४।२० तद्दिनोच्चौदयिकौ रविचन्द्रौ अथ त्रयोदश्यागता तत्र को हेतुरुच्यते-मासान्तत्वाच्चतुस्त्रिंशत्कला रामबीजस्यर्णत्वात्तिथिः पञ्चदशकलाः रामबीजशुद्धाच्चन्द्रात्साधिता घटिकाद्वयेनाधिका यत्र तिथ्यादिसाधनं भवति तद्यथा अत्रैव दिने रविः १।३।६।१२ पञ्चदशकला रामबीजशुद्धाः स्पष्टचन्द्रः ९।७।२८ विरविचन्द्र इत्यादिना चतुर्दशी, एषा तिथिघट्यादि ५५।९ अथामावास्यामौदयिकश्चतुस्त्रिंशत्कला रामबीजासक्तौ स्पष्टो रविः १।४।१।२९ गतिः ५७।२८ चन्द्रः ०।३।१७।१६ गतिः ८४०।५० कर्मशुद्धौ, आभ्यां तिथिरमावास्यैव ५०।५१।९ तिथिपत्रेऽमावास्या ४८।४५ यदत्रान्तरं तद्रामबीजभक्तं नान्यदिति ज्ञेयम्, मया बालावबोधाय विस्तीर्योक्तं धीमन्तः स्वयमेव वदन्ति, अथ करणसाधनं विरविचन्द्रांशाः ३३५२ षट्भक्ता लब्धं करणानि ५५ एकोनानि ५४ सप्तभक्ते शेषं ५ बवादिगणने गतानि पञ्चकरणानि षष्ठं करणं भोग्यं वणिजमागतमस्य गतमंशादि ५।४१।९ स्वहरात्पतितं गम्यम् ०।१८।५१ गतस्य प्रतिविकला १२२८१४० विकलीकृतेन गत्यन्तरेण ४६९१२ भक्ता लब्धं गतघटिकाः २६।१० गम्यस्य प्रतिविकलाः ६७८६० विकलीकृतेन गत्यन्तरेण ४६९१२ भक्तं लब्धं गम्या घटिकाः १।२६। अथ चन्द्रनक्षत्रार्थं चन्द्रः ०।८।४७।२१ कलाः ५२७।२१ खखगजैः ८०० भक्तं लब्धं ० अश्विन्या एव गतम् ५२७।२१ अस्य प्रतिविकलाः १८९८४६० चन्द्रगत्या विकलारूपया ५०३६० भक्ता लब्धं गतघटिकाः ३७।४१ गतं स्वहरात्पतितं गम्यम् २७२।३९ प्रतिविकलाः ९५१५४० चन्द्रगत्या ५०३६० भक्ता लब्धं गम्या घटिकाः १९।२९। अथ सूर्यः १।३।६।१२ अस्य कलाः १९८६ अश्विनीतो गतनक्षत्रम् २ कृत्तिकाभोग्यमिदं शेषम् ३८६।१२ कृत्तिकाया गतमस्माद्यदि गतघटिका आनीयन्ते तदा भुक्ति समग्रकृत्तिका याति तदपेक्षया नक्षत्रचरणकलारूपया ३४४८ भक्ता लब्धं कृत्तिकाद्वितीयपादस्य दिनानि ३।१४।२४ गतं यदि गम्याः साध्यन्ते तदा शेषम् १८६।१२ स्वहरात् २०० पतितम् १३।४८ विकला ८२८ सूर्यगत्या ३४४८ भक्ते लब्धं गम्या दिनघटिकाः ०।१४।२४ एवं सर्वेषां ग्रहाणां गतं गम्यं दिनानि घटिका वा साध्याः स्वबुद्ध्या सर्वमूह्यम्। अथ योगार्थं रविचन्द्रयोगः १।११।५३।३३ अस्य कला अष्टशतैः ८०० भक्ता लब्धम् ३ भोग्यः सौभाग्ययोगः शेषम् ११३।३३ गम्यम् ६८६।२७ गतियोगेन ८९८६५। ४८ प्राग्वद्भक्तं लब्धं गम्यं घटिकादि ४५।५५॥

अथ ग्रहाणां भूमेरुपरिस्थितियोजनानि सूर्यस्य ६८९३७७ चन्द्रस्य ५१५६६१ भौमस्य १२९६६१८ बुधस्य १६६०३१ गुरोः ८१७६५३७ शुक्रस्य ४२०४०८ शनेः २०३१९०६८ नक्षत्रस्य ४१३६२६६७ ध्रुवस्य ८२७२५३१५। करणविवृतौ स्फुटतादिखेटानाम ॥ २१-२२ ॥

इति करणकुतूहलवृत्तौ स्पष्टाधिकारो द्वितीयः समाप्तः ॥ २ ॥

स्पष्टाधिकारस्योपसंहारः—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्धबुद्धिवल्लभे नभः सदां स्फुटक्रिया ॥ २ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् । सिद्धान्तयुक्त्या वासनाऽपि सर्वेषां प्राकाराणां चाति सुगमा ॥ १९-२२ ॥

श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणेवरा ।
स्पष्टखेट गणितस्य वासना सूक्तियुक्ति सहिताऽत्र सङ्गता ॥

इति करणकुतूहलवासनाविभूषणे स्पष्टाधिकारः ॥ २ ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः स्पष्टाधिकारः द्वितीयः ॥

त्रिप्रश्नाधिकारः—३

स्वदेशोदयसाधनं लग्नसाधनञ्च—

लंकोदया नागतुरंगदस्रा गोंऽकाश्विनो रामरदा विनाड्यः ॥
क्रमोत्क्रमस्थाश्चरखण्डकैः स्वैः क्रमोत्क्रमस्थैश्च विहीनयुक्ताः ॥ १ ॥

मेषादिषण्णामुदयाः स्वदेशे तुलादितोऽमी च षडुत्क्रमस्थाः ॥
तात्कालिकोऽर्कोऽयनभागयुक्तस्तद्भोग्यभागैरुदयो हतः स्वः ॥ २ ॥

खाग्न्युद्धृतस्तं रविभोग्यकालं विशोधयेदिष्टघटीपलेभ्यः ॥
तदग्रतो राश्युदयांश्च शेषमशुद्धहृत्खाग्निगुणं लवाद्यम् ॥ ३ ॥

अशुद्धपूर्वैर्भवनैरजाद्यैर्युक्तं तनुः स्यादयनांशहीनम् ॥
भोग्याल्पकाले खगुणाहतोऽर्कः स्वीयोदयाप्तांशयुतो विलग्नम् ॥ ४ ॥

सुमतिहर्षः—नागकुरंगदस्रा अष्टसप्ताधिकद्विशतानि पलानि मीनमेषयोर्लङ्कोदयप्रमाणम्, गोङ्काश्विनः वृषकुम्भयोः, रामरदाः मकरमिथुनयोर्विनाड्यः पलानि, एवं क्रमेण कर्कादीनाम्, एते षडुत्क्रमेण तुलाद्याः । अथ स्वदेशीयार्थमेते लंकोदयाः क्रमोत्क्रमस्थाः स्वैः प्रागुक्तप्रकारेण स्वदेशसाधितैश्चरखण्डैः क्रमोत्क्रमस्थैर्विहीनयुक्ता इत्यर्थः । एवं कृते मेषादिषण्णां राशीनामुदया भवन्ति, स्वदेशीया विलोमसंस्था अमी मेषोदयास्तुलादिषण्णां भवन्ति ॥ अथ श्लोकत्रयव्याख्या । यातैष्यनाडीगुणितेत्यग्रे वक्ष्यमाणप्रकारेण तात्कालिकं सूर्यं सायनांशं कृत्वा तस्य भागाद्यं यद्गतांशाद्यं त्रिशद्भिः शोधितं भोग्यांशादिकं कृत्वा तेन स्वोदयो यस्य राशौ सूर्यस्तस्य राशेः स्वोदयो गुणनीयस्ततः खाग्न्युद्धृतो यल्लभ्यते तद्रवेर्भोग्यकालमुच्यते, तदिष्टघटीनां पलेभ्यो विशोधयेत्, तच्छेषादग्रस्थराश्युदया यावन्तः शुध्यन्ति तावतो विशोधयेत्, तच्छेषं खाग्निगुणं कृत्वा शुद्धोदयेन भजेत् फलमंशादिर्ग्राह्यं ततोऽशुद्धराशेः पूर्वं यावन्तो मेषाद्या राशयस्तत्संख्यायां मूर्ध्नि युक्तं सद्राश्याद्यं लग्नं स्यात्, ततोऽयनांशहीनं कार्यम्, तत्स्पष्टलग्नं स्यात्, ग्रहाणां तात्कालिकीकरणे विशेष उच्यते—"षष्ट्या हता इत्यनेनोदयाद्गता गम्या वा घट्यः सावना ग्राह्याः, यदा ग्राह्यास्तदोदयासुभिः सूर्यभुक्तिर्गुण्या राशिकलाभि

१८०० र्भाजिता यदा स्वरूपे लब्धं तत्सहिता षष्टिर्हर इत्यर्थादवगन्तव्यम्" अथ लग्नार्थं तात्कालिक सूर्यकरणे विशेषः यदीष्टाः सावना घटिकास्तदा तात्कालिकत्वं कार्यं यदार्क्ष्यं तदा नेत्यर्थः । उक्तं च गोलाध्याये---

"लग्नार्थमिष्टघटिका यदि सावनास्ता-
स्तात्कालिकार्ककरणेन भवेयुरार्क्ष्यः ।
आर्क्षोदया हि सदृशीभ्य इहापनेया-
स्तात्कालिकत्वमथ न क्रियते यदार्क्ष्यः" ॥त्रि०बा०२७॥

अथ प्रकृतं भोग्याल्पकाल इति यद्यल्पेष्टकालस्तदैतदुक्तम्भवति—यदीष्टकालपलेभ्योऽर्कस्य भोग्यं न शुद्ध्यति तस्मिन्निष्टकाले खगुणाहते त्रिशद्भिर्गुणिते सति तत्स्वोदयेनाप्तमंशाद्यं तद्युतोऽयनांशहीनोऽर्को लग्नं भवति, यथेष्टघट्यः ११ आभिः सूर्यस्पष्टा गतिः ५७।२८ गुणिता ६३२।८ षष्टया ६० भक्तं लब्धं कलादि १०।३२ अनेनौदयिकोऽर्कः १।३।६।१२ युक्तः १।३।१६।४४ इष्टकाले जातस्तात्कालिकोऽर्कः १।३।१६।४४ अयनांशैः १८।१६।१० युक्तः १।२१।३२।५४ अस्य भागास्त्रिशद्भ्यः ३० शुद्धा जाता भोग्यांशाः ८।२७।६ स्वोदयो वृषस्तस्य पलानि २५५ भोग्यांशैर्गुणितानि २१५५।१०।३० खाग्निभक्ते लब्धं रविभोग्यकालः ७१ इष्टघटी ११ पलेषु ६६० शुद्धः शेषम् ५८९ तदग्रिमराशेर्मिथुनस्य पलानि ३०५ शुद्धानि शेषम् २८४ त्रिशद्गुणम् ८५२० अशुद्धकर्कराशिपलैः ३४१ भक्तं लब्धमंशादि २४।५९ अशुद्धः कर्कस्तस्य पूर्वं मिथुनस्तेन युतं राश्यादि ३।२४।५९।७ अयनांशैर्हीनम् ३।६।४२।५७ जातं लग्नम्, अथाल्पेष्टकाले कल्पितमिष्टम् १।० एतत्समयकः सूर्यः १।२१।२३।२२ भोग्यकालः ७३ इष्टकालपलेभ्यो ६० न शुध्यति तदा भोग्याल्पकालः ६० खगुणा ३० हतः १८०० स्वीयोदयपलैर्वृषपलैः २२५ भक्तः लब्धमंशादि ७।३।३१ सूर्यः १।२१।२३।२२ लब्धभागैर्युतः १।२८।२६।५३ अयनांशैः १८।१६।१० हीनं जातमल्पेष्टकाललग्नम् १।१०।१०।४३ ॥ १-४ ॥

लग्नादिष्टकालानयनम्—

अर्कस्य भोग्यस्तनुभुक्तयुक्तो मध्योदयाढ्यः समयो विलग्नात् ॥
यदैकभे लग्नरवी तदैतद्भागान्तरघ्नोदय खाग्निभक्तः ॥ ५ ॥

स्यादिष्टकालो यदि लग्नमूनं शोध्यो द्युरात्रादथवा रजन्याः ॥
रात्रीष्टकाले तु सषड्गसूर्याल्लग्नं ततोऽयुक्तवदिष्टकालः ॥ ६ ॥

सुमतिहर्षः—अर्कस्येति-तद्भोग्यभागैरुदयो हतः स्व इत्यादिनानीतो रविभोग्यकालस्तथा सायनलग्नभुक्तांशैर्लग्नोदयो हतः खाग्न्युद्धृतो लग्नभुक्तकालः अनयोर्योगः अर्कयुतराशेर्लग्नपर्यन्तं ये मध्यस्था उदयास्तैर्युतः एवं कृते लग्नादिष्टकालः स्यात् यथा लग्नं ३।६।४२।५७ सायन ३।२४।५९।७ अस्य भुक्तभागैः २४।५९।७ स्वोदयकर्कपलानि ३४१ गुणितानि ८५१९।५८।४७ त्रिशद्भक्ते लब्धं तनुभुक्तकालः २८३ अर्कभोग्य ७१ तनुभुक्तयोर्योगः ३५४ रविलग्नमध्ये मिथुनं तस्य पलैर्युतः ६५९ षष्ट्या भक्ते लब्धघटिकाः १०।५९ शेषत्यागात्पलोन एवमिष्टकालो जातः, यदैकभ इति यदा लग्नरवी एकराशिस्थितौ तदा तयोरंशविवरेणोदयो गुणितः खाग्निभक्तः आप्तोऽभीष्टकालः, यदैकराशौ सूर्याल्लग्नमूनं भवति तदा द्युरात्रादिति षष्टिघटिकाभ्यः शोध्यः सूर्योदयात्कालः स्यादिति घटिका भवन्ति, अथवा रजन्याः शोध्यः इति मानाच्छोध्यः स सूर्यास्तादिष्टघटिका इति रात्रिगतघटिका भवन्ति, यथा सायनं लग्नम् १।२८।२६।५३ सायनोऽर्कः १।११।२३।२२ अनयोरन्तरमधिकादूनः पात्य इत्यर्थः । अन्तरम् १७।३।३१ उदयस्पष्टवृषपलै २५५ गुंणितम् १७९९।५६ त्रिशद्भक्तं लब्धमिष्टकालपलानि ५९ अत्र लग्नमधिकन्तेनायमेवेष्टकालः, यदा प्रष्टुः सावनघटिका इष्टास्तदा तात्कालिकोऽर्कस्तदा तात्कालिकोऽर्कोऽसकृत्कर्त्तव्यः, यदार्क्ष्या इष्टास्तदौदयिकः सूर्यः सकृत् कालेन साध्यः, उक्तं चासकृत्कालश्चेत्सावनाः प्रष्टुरभीष्टनाड्यस्तदैव तात्कालिक लग्नम्, आर्क्ष्या यदेष्टघटिकाविलग्नमर्काच्च तत्रौदयिकात्सकृच्च । अथानुक्तमपि ऋणलग्नसाधनमुच्यते तात्कालिकसायनार्कभुक्तभागैः स्वोदयो हतस्त्रिशद्भक्तो लब्धं भुक्तकालस्तमिष्टकालपलेभ्यः शोधयेच्छेषात्तत्पश्चादुदयाः शोध्याः शेषं त्रिशद्गुणमशुद्धभक्तं लब्धमंशादिकमशुद्धराशेः शोध्यमयनांशहीनं राश्यादिलग्नं स्यात्, यथा रात्रिशेषघटी १० समयकोरविः १।२।५६।३८ सायनः १।२१।१२।४८ अस्य भुक्तभागैः २१।१२।४८ स्वोदयपलानि २५५ गुणितानि ५४०९ त्रिशद्भक्ते लब्धं रविभुक्तकालः १८० इष्टघटी १० पलेभ्यः ६०० विशोध्य शेषम् ४२० शेषात्पश्चादुदयराशिर्मेषस्तत्पलानि २२३ शुद्धानि शेषम्

१९७ त्रिशद्गुणम् ५९१० अशुद्धैर्मीनपलैः २२३ लब्धमंशादि २६।३०।८ एतदशुद्धराशेर्मीनतः शुद्धम् ११।३।२९।५२ अयनांशहीनम् १०।१५।१३।४२ जातमृणं लग्नम्, अथ भुक्तकालादिष्टेऽल्पे प्रकारः, भुक्ताल्पकाले खगुणाहतेऽर्कः स्वीयोदयाप्तांशहीनं लग्नं स्यात्, अयनांशहीनञ्चेति-अस्मादिष्टकालानयनम्, तत्रार्कस्य भुक्तम् १८० उदयस्पष्टवृषपलैः २५५ गुणितम् १७९९।५६ त्रिंशद्भक्तं लब्धमिष्टकालपलानि ५९ अत्र लग्नमधिकन्तेनायमेवेष्टकालः यदा प्रष्टुर्भुक्तं तनुभोग्यार्थं सायनलग्नस्य ११।३।२९।५२ भोग्यांशाः २६।३।८ स्वोदयमीनपलैः २२३ गुणिताः ५९०९।५९ त्रिशद्भक्ते लब्धम् १९७ तनुभोग्योऽर्कभुक्तः १८० अनयोर्योगः ३७७ लग्नात्सूर्यपर्यन्तमन्तरे राशिर्मेषस्तस्य पलैः २२३ युतः ६०० षष्टिभक्ते लब्धा घट्यः १० एवं शेषरात्रिगतघट्यः १० इष्टागताः, अथेष्टकालः षष्टिभ्यः शोध्यः प्राग्दिनस्योदयाद्गतघट्यः ५० जाताः, अथ यदा रात्रेरिष्टकालाल्लग्नं साध्यते तदा रविः सषड्भः कार्यस्तस्माल्लग्नं प्राग्वद्रात्रीष्टकाले साध्यं रात्रीष्टकालेऽपि सषड्भर्काच्च साधनीयम् ॥ ६ ॥

नतोन्नतसाधनम्—

चरपलयुतहीना नाडिकाः पञ्चचन्द्रा द्युदलमथ निशार्धं याम्यगोले विलोमम् ।
द्युदलगतघटीनामन्तरं तन्नतं स्यान्नतरहितदिनार्द्धञ्चोन्नतञ्जायतेऽत्र ॥ ७ ॥

सुमतिहर्षः—पञ्चचन्द्रनाडिकाः १५ द्विधा चरपलैर्हीनयुताः कार्या एकत्र हीनाः परत्र युताः सत्यो द्युदलन्निशार्द्धञ्च क्रमेण भवति, यत्र युतास्तत्र द्युदलं यत्र हीनास्तत्र रात्रिदलं तदुत्तरगोले मेषादिषड्राशिस्थितेऽर्क इत्यर्थः। याम्यगोले तुलादिषड्राशिस्थितेऽर्के विलोमं यत्र हीनास्तत्र दिनार्द्धं यत्र युक्तास्तत्र रात्र्यर्द्धं यथा-चरपल ८६ घटीभिः १।२६ उत्तरगोलत्वात्पञ्चचन्द्राः १५।० घट्यो युता जातं दिनार्द्धम् १६।२६ हीना जातं रात्र्यर्द्धम् १३।३४ एतद्रविसावनद्युदलञ्जातम् एवमन्यग्रहं सूर्यं प्रकल्प्य चरखण्डैश्चरं प्रसाध्य दिनमानं कार्यन्तत्स्वसावनदिनम्भवति, सूर्यस्य नक्षत्रसावनं दिनं विरूपयोगित्वाल्लिख्यते। तथा च सूर्यसिद्धान्ते—

"ग्रहोदयप्राणहता खखाष्टैकोद्धृता गतिः ।
चक्रासवो लब्धयुताः स्वाहोरात्रासवः स्मृताः ॥" स्प० ५९।

इति षड्गुणितानि पलान्यसवो भवन्ति, वृषराश्युदयासुभिः १५३० रविगतिः ५७।२८ गुणिता ८७९२४ राशिकलाभि १८०० र्भक्ता लब्धा असवः ४८ एतच्चतुर्थभागेन १२ षड्भक्ते पलरूपेण २ पञ्चदश १५ युताः १५।२ पूर्वागतचरपलैः ८६ उत्तरगोलत्वाद्युताः १६।२८ जातन्नाक्षत्रसावनदिनार्द्धमेतत्त्रिंशद् ३० घटिकाभ्यश्च्युतं जातन्नाक्षत्रसावनरात्र्यर्द्धम् १३।२२ दिनार्द्धस्य दिनगतघटीनाञ्च यदन्तरं तन्नतं स्यात्, गतघटिका दिनार्धमध्येन पतन्ति तदा प्राङ्नतम्, गतघटीषु दिनार्द्धञ्चेत्पतति तदा परनतमित्यर्थः। तेन नतेन हीनं दिनार्द्धमुन्नतम्भवति, अत्रास्मिन्कालसाधनादिष्वेतन्नतं ज्ञेयम्। अन्यत्र जातके त्वन्यथैव यथा दिनार्द्धम् १६।२६ इष्टघटीभिः ११ हीनञ्जातं प्राङ्नतम् ५।२६ तेन नतेन ५।२६ हीनं दिनार्द्धं १६।२६ जातमुन्नतम् ११।० ॥ ७ ॥

सुधाकरः—सिद्धान्तोक्त प्रकारेण वासनार्थौ द्वावपि स्फुटौ ॥

इष्टकालाच्छायानयनं छायाया इष्टकालानयनञ्च—

दिनदलं विशरं खहरो भवेन्नतकृतिः पृथगभ्रशरा हताः ॥
खखनवाद्यपृथक्स्थितया हृताः खहरतः पतितोऽभिमतो हरः ॥ ८ ॥
अथ नतं यदि पञ्चदशाधिकं दिनदलात्पतितं स हरस्तदा ॥
प्रथमखण्डहृतं दलितं चरं स्वगुणितं स्वषडंशविवर्जितम् ॥ ९ ॥
दशयुतं पलकर्णहतं हृतिर्हरहता श्रवणोऽङ्गुलपूर्वकः ॥
रवियुतोनित कर्णहतेः पदं द्युतिरिनद्युतिवर्गयुतेः श्रुतिः ॥ १० ॥
श्रुतिविभक्तहृतिस्तु हरो भवेत्स पतितः खहरादवशेषकम् ॥
पृथगिदं खखनन्दहतं हरात्खविषयैरवशेषविवर्जितैः ॥ ११ ॥
फलपदं हि नतं यदि शेषकं दिगधिकं हर एव तदोन्नतम् ॥
इति कृतं लघु कार्मुकशिञ्जिनीग्रहणकर्म विना द्युतिसाधनम् ॥ १२ ॥

सुमतिहर्षः—दिनार्द्धं विशरं पञ्चरहितं खहरो मध्याह्नकालीनो हरः स्यात्। अथ नतकृतिः नतेनैव गुणितन्नतं तनकृतिर्भवति सा पृथक् द्विधा स्थाप्या, एकत्राभ्रशरैराहता पञ्चाशद्भिर्गुणनीया ततः खखनवभिर्नवशतैर्युक्तया द्वितीयस्थानस्थितया नतकृत्या भाज्या लब्धं मध्याह्नकालीनहरात्पातयेत् शेषमिष्टकालिको हरः स्यात्, यथा दिनार्द्धम्

१६।२६ पञ्च ५ हीनम् ११।२६ खहरोऽग्रम्, अथ नतस्य ५।२६ गोमूत्रिकया नतेनैव गुणनं नतकृतिः २९।३१ पृथक् २९।३१ एकत्राभ्रशरैः ५० गुणिता १४७५।५० अपरत्र खनवत्या ९०० युक्तया नतकृत्या ९२९।३१ भक्ता सवर्णितया ५५७७१ सवर्णितौ ८८५६ लब्धं घट्यादि १।३५ खहरतः ११।२६ पतितः ९।५१ अयमिष्टहरः ॥

अथेष्टच्छायाकर्णमाह—अथ नतं यदि पञ्चदशघटीभ्योधिकं स्यात्तदा नतेन हीनं दिनार्द्धमेवेष्टहरः स्यात्, यथा नतम् १६ दिनार्द्धात्पतितम् ०।२६ अयमेवेष्टहरः प्रायः उदय एव भवति, प्रथमखण्ड इति चरपलानि प्रथमखण्डेन भाज्यानि लब्धस्यार्द्धं वा अथवा चरपलानामर्द्धं प्रथमचरखण्डेन भक्तं लब्धं तुल्यमेव, ततः स्वगुणितेनैव तदेव गुणितं स्वकीयेन षष्ठांशेन विवर्जितं दशभिर्युतं तत्पलकर्णेन गुणितं हृतिः स्यात् ॥

अथाक्षकर्णानयनम् - अक्षप्रभा भुजः शङ्कुः कोटिः तद्वर्गपदं कर्णः स्यादितीष्टहरेण भक्तः लब्धमङ्गुलादिरिष्टकर्णो भवति, यथा चरपलानि ८६ प्रथमचरखण्डेन ५५ भजेल्लब्धम् १।३३ अर्द्धम् ४६ अथवा चरपलानामर्द्धम् ४३ प्रथमचरखण्डेन हृतं ४६ तुल्यमेव, अस्य स्वगुणितं वर्गः ३५ अयं स्वकीयेन षडंशेन ६ रहितम् २९ दश १० युतम् १०।२९ पलकर्णेन हतमक्षकर्णार्थं पलभा ५।३० भुजः शङ्कुः १२ कोटिः भुजवर्गः ३०।१५ कोटिवर्गः १४४ अनयोर्योगः १७४।१५ अस्यमूलम् १३।१३ अक्षकर्णः अनेन दशयुतं १०।२९ गुणितम् १३८।३३ अयं हृतिरिष्टहरेण भक्तेष्टकर्णोङ्गुलादि १४।५ रवियुतोनितकर्णहतेः पदमिति कर्णो द्विस्थ एकत्रद्वादशयुतः २६।५ अन्यत्रोनः २।५३ उभयोर्घातस्य ५४।२० मूलम् ७।२३ इष्टघटीसमये द्वादशाङ्गुलशङ्कोर्द्युतिश्छाया जाता ७।२३। अथ छायात इष्टसमयज्ञानम्, इनद्युतिः श्रुतिविभक्त इति फलपदमिति इनो द्वादश १२ द्युतिश्छाया तयोर्वर्गयोगस्तस्य मूलं कर्णः श्रुतिः शेषा व्याख्या सुगमा ॥

उदाहरणम्, इन १२ वर्गः १४४ छायावर्गः ५४।३० अनयोर्योगस्य मूलम् १४।७ कर्णः, अनेन हृतिः पूर्वागता १३८।३२ भक्ता ९।४९ इष्टहरः ९।४९ खहरात्पतितः १।३७ इदमवशेषसंज्ञकं पृथक् खखनन्दैः ९०० गुणितं १४५५।० इदं द्वितीयस्थानस्थितेनावशेषेण १।३७ हीनैः

खविषयैः ५० जातैः ४८।२३ भक्तं लब्धस्य ३०।४ मूलं ५।२६ नतं जातं पूर्वागतसमानम् ५।२६ चेत्स्वल्पान्तरं तदा स्वल्पान्तरत्वान्न दोष एवं नतं ५।२६ दिनार्द्धात् १६।२६ शुद्धञ्जातमिष्टकालः ११।१० अथेष्टहारेण हीनस्य खहरस्य यदि शेषकं दिगधिकं दशभ्योऽधिकं स्यात्तदा हर एव नतं स्यात्, यथेष्टहरेण ०।२६ खहरो ११।२६ हीनः ११।० शेषकस्य दशाधिकत्वादिष्टहर एव ०।२६ उन्नतम्, अनेन हीनं दिनार्द्धम् १६ नततामितिकृतः लघु इत्यमुना प्रकारेण कार्मुकधनुः शिञ्जिनी तयोर्ग्रहकर्मसाधनप्रकारस्तेन विना लघुशीघ्रमिति स्वल्पकर्मणा छायासाधनं कृतमित्यर्थः ॥ ८-१२ ॥

सुधाकरः—खहरो मध्यहरः प्रथमखण्डं स्वदेशीयचरसम्बन्धि प्रथमखण्डं द्युतिः छाया शेषं स्पष्टार्थम्। अत्रोपपत्तिः। दिनदल पञ्चदशघट्यन्तरं चरघट्यस्तत्स्वरूपं उत्तरगोले, चघ = दि द-१५ तदंशाः = ६ दि द - ९० द्विगुणिताः स्वल्पान्तराज्जाता खार्क त्रिज्यायां चज्या = १२ दि द - १८० त्रिज्यायां युता जातान्त्या = १२ दि द - ६० = १२ (दि द - ५) तत्र दि द - ५ अस्य खहारसंज्ञाकृता, एवं दक्षिण गोले च घ = १५ - दि द तदंशाः = ९० - ६ दि द चज्या = १८० - १२ दि द त्रिज्यायाः शुद्धा जातान्त्या = १२ दि द - ६० = १२ (दि द - ५) अत्रापि दि द - ५ = ख. हा.। अतः खहरोपपत्तिः स्फुटा। अथान्त्या नतोत्क्रमज्याहीना इष्टान्त्या भवति तत्र ६ न का = न अं, न को अं = ९० - ६ न,

"दोः कोटिभागरहिताभिहताः खनाग-
चन्द्रास्तदीयचरणोनशरार्कदिग्भिः ।
ते व्यासखण्डगुणिता विहृताः फलं तु
ज्याभिर्विनापि भवतो भुजकोटिजीवे ॥"

इति श्रीपति प्रकारेण

$$\frac{(\text{१८०}-\text{६ न})\,\text{६ न}\times\text{१२०}}{\text{१०१२५}-\dfrac{(\text{१८०}-\text{६ न})\,\text{६ न}}{\text{४}}}=\frac{(\text{१८०}-\text{६ न})\,\text{६ न}\times\text{४८०}}{\text{४०५००}-(\text{१८०}-\text{६न})\,\text{६न}}$$

$$\text{एवं न कोज्या}=\frac{(\text{९०}+\text{६ न})(\text{९०}-\text{६ न})\,\text{४८०}}{\text{४०५००}-(\text{९०}+\text{६ न})(\text{९०}-\text{६ न})}$$

$$=\frac{(\text{१५}+\text{न})\,(\text{१५}-\text{न})\,\text{४८०}}{\text{११२५}-(\text{१५}+\text{न})\,(\text{१५}-\text{न})}=\frac{(\text{२२५}-\text{न}^{\text{२}})\,\text{४८०}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}$$

$$=\frac{\text{१२}\,(\text{९०००}-\text{४०}\,\text{न}^{\text{२}})}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}=\text{१२}\left(\text{१०}-\frac{\text{५०}\,\text{न}^{\text{२}}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}\right)\text{ ततो}$$

$$\text{नतकालस्योत्क्रमज्या}=\frac{\text{५०}\,\text{न}^{\text{२}}\times\text{१२}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}\text{ इष्टान्त्या}$$

$$=\text{१२}\left(\text{खह}-\frac{\text{५०}\,\text{न}^{\text{२}}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}\right)\text{ अथ यदि नतं पञ्चदशाधिकं}$$

तदा "वाणेन्दुनाड्यूननतात्क्रमज्या
त्रिज्यान्विता सैव नतोत्क्रमज्या" इत्यादिना

न उ ज्या = १२० + २ (६ न − ९०) = १२ न − ६०, च ज्या = १२ (दिद − १५) = १२ दिद − १८० अन्त्या = १२ दिद − ६० इष्टान्त्या = १२ (दिद—न) उभयत्र द्वादशगुणकस्येष्ट हरसंज्ञा कृता ततो ज्ञातमिष्टान्त्यायाः स्वरूपान्तरं = १२ × इ. ह. ।

अथ "पलश्रुतिघ्नस्त्रिगुणस्य वर्ग" इत्यादिना

$$\text{इ क}=\frac{\text{पक}\times\text{१२०}\times\text{१२०}}{\text{द्यु}\times\text{१२}\times\text{इह}}=\frac{\text{पक}\times\text{१२००}}{\text{द्यु}\times\text{इह}}\text{ अत्र द्युज्या}$$

ज्ञानार्थं चरज्ययानुपातः यदि प्रथमखण्डेन द्वादशभागाः क्रान्तिर्लभ्यते

$$\text{तदेष्टचरणे किं जाता क्रा}=\frac{\text{१२ च}}{\text{प्र. ख}},\quad\text{क्राज्या}=\frac{\text{२१}\times\text{१२ च}}{\text{१० प्र ख}}$$

$$\text{द्युज्या}^{\text{२}}=(\text{१२०})^{\text{२}}-\frac{\text{४४१}\times\text{१४४ च}^{\text{२}}}{\text{१००}\times\text{प्र ख}^{\text{२}}}\text{ आसन्न मूलेन}$$

$$\text{द्युज्या}=\text{१२०}-\frac{\text{४४१}\times\text{१४४ च}^{\text{२}}}{\text{१००}\times\text{प्रख}^{\text{२}}\times\text{२४०}}=\text{१२०}-\frac{\text{४४१}\times\text{३ च}^{\text{२}}}{\text{१००}\times\text{५}\times\text{प्रख}^{\text{२}}}$$

$$\text{ततः }\frac{\text{१२००}}{\text{द्यु}}=\frac{\text{१२००}}{\text{१२०}-\frac{\text{४४१}\times\text{३ च}^{\text{२}}}{\text{१००}\times\text{५}\times\text{प्रख}^{\text{२}}}}=\text{१०}+\frac{\text{४४१}\times\text{३ च}^{\text{२}}}{\text{१२०}\times\text{१०}\times\text{५}\times\text{प्र ख}^{\text{२}}}$$

$$=\text{१०}+\frac{\text{१३२३ च}^{\text{२}}}{\text{२५०}\times\text{२४ प्रख}^{\text{२}}}=\text{१०}+\frac{\text{५ च}^{\text{२}}}{\text{२४ प्र ख}^{\text{२}}}\text{ स्वल्पान्तरात्}$$

$$\text{अस्य स्वरूपान्तरं}=\text{१०}+\frac{\text{६ च}^{\text{२}}}{\text{२४ प्र ख}^{\text{२}}}-\frac{\text{च}^{\text{२}}}{\text{२४ प्र ख}^{\text{२}}}$$

$$=\text{१०}+\frac{\text{च}^{\text{२}}}{\text{४ प्र ख}^{\text{२}}}-\frac{\text{च}^{\text{२}}}{\text{४ प्रख}^{\text{२}}\times\text{६}}$$

$$=\text{१०}+\left(\frac{\text{च}}{\text{२ प्रख}}\right)^{\text{२}}-\left(\frac{\text{च}}{\text{२ प्रख}}\right)^{\text{२}}\times\frac{\text{१}}{\text{६}}\text{ ततः इष्टकर्णमानं}$$

$$=\frac{\text{प क}}{\text{इ ह}}\left\{\text{१०}+\left(\frac{\text{च}}{\text{२ प्रख}}\right)^{\text{२}}-\left(\frac{\text{च}}{\text{२ प्रख}}\right)^{\text{२}}\times\frac{\text{१}}{\text{६}}\right\}$$

अत उपपन्नं कर्णानयनम् ।

नत साधनम्—

अत्र "श्रुतिविभक्तहृतिस्तु हरो भवेत् स पतितः खहरादवशेषकं"

$$\text{विलोमेन यदि नतं पञ्चदशाल्पं तदा }\frac{\text{५०}-\text{न}^{\text{२}}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}\text{ इदं भवति}$$

$$\text{ततः समीकरणं }\frac{\text{५०}\,\text{न}^{\text{२}}}{\text{९००}+\text{न}^{\text{२}}}=\text{शे},$$

$$\therefore\ \text{५०}\,\text{न}^{\text{२}}=\text{९०० शे}+\text{शे न}^{\text{२}}$$

$$\text{ततः न}^{\text{२}}=\frac{\text{९०० शे}}{\text{५०}}+\frac{\text{शे न}^{\text{२}}}{\text{५०}}\text{ अस्य शेषरहितं पदं नतकाल-}$$

मानं स्यात्, परन्तु यदि उर्ध्वलिखित समीकरणे शे = १० तदा नतमानं पञ्चदशाधिकं तत्रेष्टहरः = दि द − न = उ का, अत उपपन्नं सर्वम् ॥

क्रान्तिखण्डवशात् क्रान्तिसाधनम्—

स्युः क्रान्तिखण्डानि यमांगरामाः क्वब्ध्यग्नयो गोनवबाहवश्च ।
षडश्विनः खेषुभुवो द्विबाणा युक्तायनांशग्रहबाहुभागाः ॥ १३ ॥
तिथ्युद्धृता लब्धमितानि तानि योज्यानि भोग्याहत शेषकस्य ।
तिथ्यशांकैः क्रान्तिकलाभवन्ति युक्तायनांशग्रहगोलदिक्काः ॥ १४ ॥

सुमतिहर्षः—स्युः क्रान्तीति-यमाङ्गरामा द्विषष्ट्यधिकं शतत्रयम् ३६२ क्वब्ध्यग्नय एकचत्वारिंशदधिकं शतत्रयम् ३४१ गोनवबाहवो

नवनवत्यधिकशतद्वयम् २९९ षट् अश्विनः षट्त्रिंशदधिकशतद्वयम् २३६ खेषुभुवः सार्द्धशतम् १५० द्विबाणा द्विपञ्चाशत् ५२ एतानि षट् खण्डकानि भवन्ति, अथ यस्य ग्रहस्य क्रान्तिश्चिकीर्षिता सोऽयनांशैर्युक्तः कार्यस्तदीयभुजस्य येंशास्ते तिथ्युद्धृताः पञ्चदशभिर्भक्ता लब्धसंज्ञकानि भुक्तखण्डानि योज्यानि तेषां भुक्तखण्डानां योग इत्यर्थः, ततो भोग्यखण्डगुणितशेषांशादेस्तिथ्यंशकेन योगो योज्यस्ताः क्रान्तिकलाः स्युः, युक्तायनांशो ग्रहो यादृशे गोले दक्षिणोत्तरौ तद्वशाद्यादिक् सा भवति सायनांशग्रहे दक्षिणगोले दक्षिणा क्रान्तिः, उत्तरगोलस्य उत्तराक्रान्तिरित्यर्थः ॥

उदाहरणम्-यथेष्टकालिकः सूर्यः १।२१।३२।५४ अस्य भुजः १।२१।३२।५४ अस्यांशाः ५१।३२।५४ पञ्चदशभक्ता लब्धखण्डानि ३ एषां त्रयाणां खण्डानां योगः १००२ भोग्यखण्डेन २३६ शेषांशाः ६।३२।५४ गुणिताः १५४५।२४ तिथि १५ भक्तं लब्धेन १०३।१ पूर्वखण्डयोगः १००२ युक्तः ११०५।५१ जाताः क्रान्तिकलाः षष्टि ६० भक्ता अंशादिः १८।२५।१ सायनो रविरुत्तरगोले तेनोत्तराः ॥ १३, १४ ॥

सुधाकर :—अत्र सायन पञ्चदशभागानां क्रान्तिकलाः प्रसाध्य क्रान्तिखण्डकानि पठितानीति सुगमा वासना ॥ १३, १४ ॥

प्रकारान्तरेण क्रान्तिसाधनम्—

भुजांशोननिघ्नाः खनागेन्दवस्तन्नगाप्तांशहीनैस्त्रिवेदाब्धिभिस्ते ।
कलाष्टादशोनैर्विभक्ता लवादिर्भवेत्क्रान्तिरेवं विना खण्डकैर्वा ॥ १५ ॥

सुमतिहर्ष :—खनागेन्दवोऽशीत्युत्तरशतम् १८० सायनांशग्रहस्य भुजांशोननिघ्नाः कार्याः ग्रहस्य भुजांशैरूनाः कार्याः भुजांशैरेव गुणिताः कार्यास्ते पृथगनष्टाः स्थाप्या एकत्र तेभ्यः नगाप्तांशैः सप्तसप्ततिभिः ७७ भक्ते लब्धेन रहितैरष्टादशकलोनैः १८ त्रिवेदाब्धिभिरंशैः ४४३ त्रिचत्वारिंशदधिकैश्चतुः शतैः ४४२।४२ द्वितीयस्थानस्थिताः भुजांशोननिघ्नाः खनागेन्दवो भाज्या लब्धमंशादिः क्रान्तिः स्यात्, पूर्वोक्तैः क्रान्तिखण्डैर्विना क्रान्तिर्भवतीत्यर्थः ॥

उदाहरणम्, यथा–सायनसूर्यस्य १।२१।३२।५४ भुजांशैः ५१।३२।५४ खनागेन्दवः १८० ऊनाः १२८।२७।६ एते भुजांशैरेव ५१।३२।५४

गुणिताः ६६२१।२८।९ द्विधा एकत्र सप्तसप्ततिभिः ७७ भक्ता लब्धेन ८५।५९।३५ अष्टादशकलोनास्त्रिवेदाब्धयः ४४२।४२ हीनाः ३५६।४२।२५ एभिरनष्टाः स्थापिताः ६६२१।२८।९ भक्ता लब्धमंशादिक्रान्तिरुत्तरा १८।३३।४५ प्रकारान्तरत्वात्स्वल्पान्तरम् ॥ १५ ॥

सुधाकर :—अत्र भुजज्या $= \dfrac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु} \times \text{४८०}}{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}}$

ततः क्रान्तिः $= \dfrac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु} \times \text{४८०} \times \text{२४}}{\text{१२०}\,\{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}\}}$

$$= \frac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}\ \text{९६}}{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}}$$

$$= \frac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}}{\text{४२२} - \frac{\text{१८}}{\text{६०}} - (\text{१८०} - \text{भु})\ \frac{\text{भु}}{\text{९६}}}$$

अत्र हरे वियोज्य वियोजकयोर्द्वयोरधिका संख्या गृहीता स्वल्पान्तरात्फलतुल्यत्वात् तेन—

$$\text{क्रा} = \frac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}}{\text{४४३} - \frac{\text{१८}}{\text{६०}} - (\text{१८०} - \text{भु})\ \frac{\text{भु}}{\text{७७}}}$$ अत उपपन्नं सर्वम् ॥१५॥

अक्षांश साधनम् –

दशाब्ध्यन्विताऽक्षप्रभाषष्टिभागोऽक्षकर्णान्वितस्तेन भक्ता प्रभा सा ।
खनन्दाहता दक्षिणाः स्युः पलांशाः पलः संस्कृतः क्रान्तिभागैर्नतांशाः ॥१६॥

सुमतिहर्ष :— स्वीयदेशीयाक्षभा दशाब्धिभिर्दशाधिकचतुःशत्या ४१० युक्ता कार्या ततः षष्टिभिर्भाज्या लब्धेन स्वदेशीयोऽक्षकर्णो युक्तो भाजकः स्यात्, खनन्दैर्नवतिभिर्गुणिताक्षभा भाजकेन भक्ता लब्धेन पलांशा अक्षांशाः स्युस्ते लङ्कायाः उत्तरतः सदा दक्षिणा एव ते पलांशाः क्रान्तिभागैः संस्कृताः भिन्नदिक्त्वेऽन्तरं समदिक्त्वे योगस्ते नतांशाः स्युः । यथाक्षभा ५।३० दशाब्ध्यन्विता ४१५।३० षष्टिभक्ता लब्धम् ६।५५ अक्षकर्णेन १३।१३ युक्तम् २०।८ हरो जातः, खनन्दैः ९० गुणिता

पलभा ४९५ हरेण २०१८ भक्ता लब्धमक्षांशाः २४।३५।९ दक्षिणा एभिरंशैर्ध्रुवः क्षितिजादुच्चः क्रान्तिभागा उत्तराः १८।३३।४५ भिन्नदिक्त्वादन्तरं जाताः नतांशाः ६।१।२४ अक्षांशाधिकत्वाद्दक्षिणाः ॥१६॥

इतिकरणकुतूहलवृत्तौ त्रिप्रश्नाध्यायः समाप्तः ॥ ३ ॥

सुधाकर :—अत्रोपपत्तिः । $\text{लं} = ९० - \text{अ}$,

$$\text{लंज्या} = \frac{(९० + \text{अ})(९० - \text{अ}) \times ४८०}{४०५०० - (९० + \text{अ})(९० - \text{अ})}$$

$$= \frac{\left(१५ + \frac{\text{अ}}{६}\right)\left(१५ - \frac{\text{अ}}{६}\right) \times १२ \times ४०}{११२५ - \left(१५ + \frac{\text{अ}}{६}\right)\left(१५ - \frac{\text{अ}}{६}\right)} \quad \text{अत्र } \frac{\text{अ}}{६} = \text{फ अतो}$$

$$\text{लम्बज्यामानं} = \frac{(९००० - ४० \text{फ}^२)१२}{९०० + \text{फ}^२}$$

$$= \frac{१२ \times १२०}{\text{प क}} \text{ वा, } \frac{२२५ - \text{फ}^२}{९०० + \text{फ}^२} = \frac{३}{\text{प क}}$$

छेद गमेन $२२५ \text{ प क} - \text{फ}^२ \text{ प क} = ९०० \times ३ + ३ \text{ फ}^२$

पक्षान्तर नयनेन, $२२५ \text{ प क} - ९०० \times ३ = \text{फ}^२ (\text{प क} + ३)$

$$\therefore \text{फ}^२ = \frac{२२५ (\text{प क} - १२)}{\text{प क} + ३}$$

$$\text{वा, फ}^२ = \frac{२२५ (\text{प क} - १२)(\text{प क} + १२)}{(\text{प क} + ३)(\text{प क} + १२)}$$

$$= \frac{२२५ \text{ वि}^२}{\text{प क}^२ + १५ \text{ प क} + ३६}$$

$$\text{ततः फ} = \sqrt{\frac{२२५ \text{ वि}^२}{\text{पक}^२ + १५ \text{ पक} + ३६}} = \frac{१५ \text{ वि}}{\sqrt{\text{पक}^२ + १५\text{पक} + ३६}}$$

अत्र $\sqrt{\text{पक}^२ + १५ \text{ पक} + ३६}$

$$= \sqrt{\text{पक}^२ + १५ \text{ पक} + ३६ - \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२ + \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२}$$

$$= \sqrt{\text{पक}^२ + \tfrac{४१}{३} \text{ पक} - \tfrac{४१}{३}\text{पक} + १५ \text{ पक} + ३६ - \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२ + \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२}$$

$$= \text{पक} + \tfrac{४१०}{६०} + \frac{\tfrac{४}{३} \text{ पक} + ३६ - \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२}{२ \text{ पक} + \tfrac{४१०}{३०}} \quad \text{स्वल्पान्तरात् अत्र भिन्न}$$

संख्याया अस्याः $\dfrac{\tfrac{४}{३} \text{ पक} + ३६ - \left(\tfrac{४१०}{६०}\right)^२}{२ \text{ पक} + \tfrac{४१०}{३०}}$ एक पलभायां मानं $= \tfrac{१}{६०}$

ततोऽनुपातेनेष्टपलभायां मानं $= \dfrac{\text{वि}}{६०}$ ततः पूर्वमूलस्य रूपान्तरं

$$= \text{पक} + \tfrac{४१०}{६०} + \frac{\text{वि}}{६०} \quad \text{ततः फ} = \frac{१५ \text{ वि}}{\text{पक} + \dfrac{४१० + \text{वि}}{६०}}$$

$$\text{षड्गुणितेन पलांशाः} = \frac{९० \text{ वि}}{\text{पक} + \dfrac{४१० + \text{वि}}{६०}}$$

अत उपपन्नं सर्वमिति ॥१६॥

त्रिप्रश्नाधिकारस्योपसंहारः—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्धबुद्धिवल्लभे त्रिप्रश्नतास्फुटक्रिया ॥ ३ ॥

सुधाकरः—

श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते, वासनावरविभूषणे वरा ।
सूर्य्यभादि गणितस्य वासना सूक्तियुक्ति सहिताऽत्र सङ्गता ॥

इति करणकुतूहलवासनाविभूषणे छायादिसाधनाधिकारः ॥३॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः त्रिप्रश्नाधिकारः तृतीयः ॥

चन्द्रग्रहणाधिकारः–४

नत साधनम्—

> **नतविहीन हतैः खगुणैर्हृताः खशरभानुभुवो दशवर्जिताः ॥**
> **रविहरः सविधोर्विदशांशको निजफलं निजहारहृतं क्रमात् ॥ १ ॥**
> **धनमृणं परपूर्वनते रवौ शशिनि पूर्वनते स्वमृणेफले ॥**
> **इतरथोभयतोऽपि फलक्षयः स्फुटतरौ ग्रहणेऽथ ततस्तिथिः ॥ २ ॥**
> **इति नतं क्रममौर्विकयोदितं क्रमजमेव हि जिष्णुजसम्मतम् ॥**
> **यदपरैः कृतमुत्क्रमजीवया वलनदृङ्नतकर्म न तन्मतम् ॥ ३ ॥**

सुमतिहर्षः— अथ चन्द्रग्रहणाधिकारो व्याख्यायते तत्रादौ परिपाटी लिख्यते—

संवत् १६७७ आषाढादिवर्षे शकः १५४२ मार्गशीर्षशुक्ला १५ पूर्णिमा बुधवासरे घट्यादिः ३८।२४ चन्द्रपर्वविलोकनार्थं श्रीब्रह्मतुल्योपरि गताब्दाः ४३७ अधिमासाः १६२ मासगणः ५४१४ अवमदिनानि २५४२ उदयेऽहर्गणः १५९८९३ अर्द्धगतियुक्ता औदयिकास्तेन तात्कालिका भवन्ति, अयनांशाः १८।१७।४२ रामबीजकलाः ३४ सचन्द्रेषु सर्वेषु प्रसिद्धत्वात्कृतं रवेर्मन्दफलमृणम् ०।३८।४ गतिफलं धनम् २।१३ चन्द्रमन्दफलमृणम् ४।१९।५२ चन्द्रगतिफलं धनम् ३९ चरपलानि याम्यगोलत्वाद्धनानि चरपलान्यस्तकालत्वादृणम् ६ अस्तात्पूर्णिमोत्थघट्यः ११।५२ दिनार्द्धम् १३।११ दिनमानम् २६।२२ रात्र्यर्द्धम् १६।४९ रात्रिः ३३।३८ अथेदं दृष्टमात्रायां तिथौ ग्रहणस्य सम्भवासम्भवज्ञानमुच्यते पर्वमालिनः –

> "दर्शान्तिमेकनाड्यूनं गतञ्चार्कान्हिशेषकं ।
> पञ्चभ्यः पूर्णिमान्ते चेदधिकं तत्र पर्वणि ॥"

द्युदलगतघटीनामित्यादिनोक्तेनेति—नतेन हीनैः पुनर्नतेनैव गुणितैः खगुणैस्त्रिंशद्भिः खशरभानुभुवः सार्द्धशतद्वयैकादशसहस्राणि भक्ते लब्धमंशादि दशभी रहितं रविहरः स्यात्, स एव रविहरः स्वदशांशेन

रहितश्चन्द्रहरः स्यात्, अथार्कमन्दफलं रविहरेण चेद्भक्तं तदा रविफलं कलादिकं रविनतफलम् ५ स्यात्, चन्द्रमन्दफलं चन्द्रहरेण भक्तं कलादिकं चन्द्रनतफलं स्यात्, रविनतफलं पश्चिमकपालस्थे रवौ धनं पूर्वकपालस्थेऽर्के ऋणम् अर्द्धरात्रान्मध्याह्नपर्यन्तं पश्चिमकपालमित्यर्थः, अथ चन्द्रग्रहणे तु रात्रिरेव दिनत्वेन व्यवह्रियत इति चन्द्रस्य वैपरीत्येन कपालव्यवस्था, मध्याह्नादर्धरात्रपर्यन्तं पूर्वकपालः, अर्द्धरात्रान्मध्याह्नपर्यन्तं पश्चिमकपाल इत्यर्थः, अथ चन्द्रे पूर्वकपालस्थे चन्द्रस्य मन्दफले ऋणे सति नतफलं चन्द्रे धनमर्थात्पश्चिमनते चन्द्रे फलेऽऋणे सत्यृणम्-इतरथा फले धने सत्युभयतः प्राक्कपालस्थे परकपालस्थे वा चन्द्रे नतफलमृणम, एवमेतौ ग्रहणे स्फुटतरौ विधाय ताभ्यामेवात्र तिथिः साध्या। कैश्चिदित्यत्रासकृदिदं कर्म कृतं परमनुक्तत्वान्नासकृत्क्रियते, तथा कैश्चिदपि सूर्याचन्द्रमसोर्भुक्तिरपि नतेन संस्कृता तच्चैवं रविगतिफलं रविहरेण भाज्यं लब्धेन रविचन्द्रविगतिरपि संस्कार्या, चन्द्रगतिफलं चन्द्रहरेण भाज्यं लब्धं प्राक्कपालस्थे चन्द्रे गतिफले ऋणे भुक्तौ धनम, अन्यथा ऋणमित्यर्थः। एतन्नतकर्म सूक्ष्ममिच्छतान्यत्रापि तिथ्यानयने सूर्याचन्द्रमसोः पृथङ्नतं विधाय कर्त्तव्यम्, उक्तं च, "इदं ग्रहाणां नतकर्म युक्तं स्वल्पान्तरत्वान्न कृतं तदाद्यै"रिति ग्रहणदृग्गणितयोरेकत्वप्रयोजनायावश्यं कर्त्तव्यमिति भावः। इति नतं क्रमज्यानतक्रमं सिद्धान्ते प्रोक्तम्, तदेवानेन प्रकारेण मयोक्तम्, "खशरभानुभुव" इत्यङ्कानयनं क्रमज्ययोत्पन्नमित्यर्थः। ब्रह्मगुप्ताचार्यस्य मते तदेव सम्मतम्, यत्कैश्चिद्वलननतदृक्कर्म उत्क्रमज्यया कथितं तदस्माकं न मतम्, चन्द्रमसो दिनं रात्रिरिति वचनात् सूर्यस्य रात्रिदलं चन्द्रदिनार्द्धमिति, रात्रिदलम् १६।४९ इष्टघटी पूर्णिमाघटी ११।५१ उभयोरन्तरम ४।५७ प्राङ्नतमुन्नतम् २५।३ सूर्यस्य नतार्थं रात्रिशेषे गते वा भवति समये चेज्जन्म तत्तद्घटीभिः संयुक्ते वासरार्द्धे खलु नतघटिकाः प्राक्प्रतीच्यो भवेयुरिति सूर्यस्य २५।३ पश्चिमेऽर्थाच्चन्द्रोन्नतमेव सूर्यस्य नतम्, नतेन ४।५७ हीनाः खगुणाः २५।३ नतेनैव ४।५७ गुणिताः १२४।० सूर्यनतेन २५।३ त्रिंशत् हीनाः ४।५७ सूर्यनतेनैव गुणिता १२४।० एवमेभिः खशरभानुभुवः ११२५० भक्ता लब्धमंशादि ९०।४३।३२ दशवर्जितम् ८०।४३।३२ रविहरोऽयं स्वदशांशेन ८।४।२१ ऊनो जातश्चन्द्रहरः ७२।३९।१२ रविमन्दफलम्

०।३८।४ रविहरेणाप्तमंशादि ०।०।२८ चन्द्रमन्दफलम् ४।१९।५२ चन्द्रहरेण लब्धम् ०।३।३४ प्राक्कपालत्वात्फलस्यर्णत्वाद्धनम्, गतेः स्वल्पान्तरत्वान्नतफलमुपेक्षितम्, नतफलसंस्कृतोऽर्कः ८।०।४।१७ चन्द्रः १।२७।३५।१८ आभ्यां तिथिरेष्या ११।३८ ॥ १-३ ॥

सुधाकर :—स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । तिथ्यन्तनाडीनतबाहुमौर्व्येत्यादिनैव तत्र नत कालानां जीवा श्रीपतिप्रकारेण साधिता तद्यथा रवौ नतकर्म्मसंस्कारमानं

$$= \frac{(\text{१८०} - \text{६ न})\,\text{६ न} \times \text{४८०} \times \text{रफ}}{\text{४९२०}\{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{६ न})\,\text{६ न}\}}$$

$$= \frac{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न} \times \text{४८०} \times \text{र फ}}{\text{४९२०}\{\text{११२५} - (\text{३०} - \text{न})\,\text{न}\}}$$

$$= \frac{\text{४८०} \times \text{र फ}}{\text{४९२}\left\{\frac{\text{११२५०}}{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न}} - \text{१०}\right\}}$$

$$= \frac{\text{रफ}}{\frac{\text{११२५०}}{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न}} - \text{१०}} \quad \text{स्व.},$$

अत्र हरस्य हार संज्ञाकृता एवं चन्द्रस्य

$$\frac{\text{४८०} \times \text{च फ}}{\text{४३६}\left\{\frac{\text{११२५०}}{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न}} - \text{१०}\right\}}$$

$$= \frac{\text{च फ}}{\frac{\text{४३६}}{\text{४८०}}\left\{\frac{\text{११२५०}}{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न}} - \text{१०}\right\}}$$

$$= \frac{\text{च फ}}{\frac{\text{९}}{\text{१०}}\left\{\frac{\text{११२५०}}{(\text{३०} - \text{न})\,\text{न}} - \text{१०}\right\}}$$

शेष वासना सुगमा ।

तात्कालिक ग्रहसाधनम्—

यातैष्यनाडीगुणिता द्युभुक्तिः षष्ट्याहृता तद्रहितो युतश्च ।
तात्कालिकः स्यात्स्वचरः शशीनौ पर्वान्त एवं समलिप्तकौ स्तः ॥ ४ ॥

सुमतिहर्ष :—यातैष्येति—गतगम्येष्टघटीभिर्ग्रहस्य दिनभुक्तिर्गुण्या षष्ट्या भाज्या लब्धेनौदयिको ग्रहस्तात्कालिकोऽन्यो वा गतफलेन रहितो गम्येन युतो वक्रिणि विपरीतमेवं तात्कालिकः स्पष्टौ चरफलेन संस्कृतौ, एवं तात्कालिकौ रविचन्द्रौ कृतौ समलिप्तकौ स्तः । अत्र पर्वान्तिघटीकरणे शेषत्यागो भवति, तेन चन्द्रो गतिबाहुल्यादल्पान्तरं भवति, अतो विभान्विन्दोरंशा द्वादशभिर्भाज्याः शेषांशा हरात्त्याज्यास्तेषां कलास्ताभिश्चन्द्रसूर्ययोर्गती पृथक् भुक्त्यन्तरेणाप्तेन कलाफलेन युतौ समन्वितौ समलिप्तिकौ स्तः ।

यथैष्यघटीभिः ११।३८ रविगति ६१।२१ गुणिता ७१३।४२ षष्ट्या भक्ता लब्धेन कलादिना ११।५३ युतः, एवं गम्यघटीभिश्चन्द्रगतिः ८२९।३५ यातघटी ३।११ गुणिते षष्ट्या भक्ते कलादिफलेन युतौ गम्यत्वात्स्वल्पान्तरत्वाद्विकलाभेदेऽपि न दोषः । अमावास्यायां रविचन्द्रौ राश्यादिसमौ पूर्णिमायां च षड्राश्यन्तरे लवादिसमौ तात्कालिकश्चन्द्रः २।०।१६।८ सूर्यः ८।०।१६।१० पातः ४।१।३६।१५ ॥ ४ ॥

शर साधनम् —

सपाततात्कालिकचन्द्रदोर्ज्या त्रिघ्नी कृताप्ता च शरोऽङ्गुलादिः ।
सपातशीतद्युतिगोलदिक्स्यान्मेषादिषड्भं खलु सौम्यगोलः ॥ ५ ॥

सुमतिहर्ष :—सपातेति—तात्कालिकपातेन सहितस्य तात्कालिकचन्द्रस्य भुजज्या कार्या सा त्रिभिर्गुणिता कृतैश्चतुर्भिर्भक्ता लब्धमंगुलादिः शरः स्यात् । सपातचन्द्रस्य गोलवशाद्दिग्यस्य तादृशः सपातचन्द्रे सौम्यगोलस्थे सौम्यशरः याम्यगोलस्थे याम्यशरः सगोलः कथं दिगित्याह–मेषादीति–मेषादिराशिषड्भं सौम्यगोलः, अपरं तुलादिषड्भं याम्यगोलः यथा पातः ४।१।३६।१५ चन्द्रः २।०।१६।८ संयुतः सपातचन्द्रः ६।१।५२।२३ भुजः ०।१।५२।२३ ज्या ३।५६ त्रिघ्नी ११।४८ कृताप्ता २।५७ शरोंऽगुलादिः सपातचन्द्रो दक्षिणगोले तेन दक्षिणः ॥ ५ ॥

अयनज्ञानं प्रकारान्तरेण शरानयनञ्च—

याम्योऽपरं कर्कमृगादिषट्के ते चायन दक्षिणसाम्यकस्तः ।
खाश्वाः शराङ्गानि रसेषवोऽग्नि वेदाश्च धिष्ण्यानि खगाः शरस्य ॥ ६ ॥
खण्डानि तैः क्रान्तिवदत्र साध्यो बाणः कलादिस्त्रिहृतोऽङ्गुलादिः ।

सुमतिहर्ष :—मकरादिषट्कमुत्तरायणं कर्कादिषट्कं दक्षिणायनं भवति । खाश्वाः ७० शराङ्गानि पञ्चषष्टिः ६५ रसेषवः षट्पञ्चाशत् ५६ अग्निवेदास्त्रिचत्वारिंशत् ४३ धिष्ण्यानि सप्तविंशतिः २७ खगा नव ९ एतानि शरस्य खण्डानि षट्, तैः क्रान्तिवत् क्रान्तिसाधनोक्तविधिना बाहुभागास्तिथ्युद्धृता इत्यादिना कलादिः शरो भवति त्रिभिर्विभक्तेऽङ्गुलादिः स्यात् ।

अथ सपातचन्द्रः ६।१।५२।२३ भुजः ०।१।५२।२३ अस्यांशाः १।५२।२३ पञ्चदशभिर्भागो न पतति तेन भुक्तशरखण्डाभावः, भोग्यप्रथमखण्डेन ७० भुजांशाः १।५२।२३ गुणिताः १३१।६ पञ्चदशभिर्भक्तं लब्धं कलादिः ८।४४ त्रिहृतोऽङ्गुलादिः २।५५ विधिभेदादल्पान्तरः अंगुलादिशरस्यैवात्रोपयोगस्तस्माद्भुक्तमग्रे सर्वत्र कलादेरूपयोगः ॥६ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् । तात्कालिकीकरणवासना चातिसुगमा शरानयनं तु त्रैराशिकेन त्रिज्यया परमशरस्तदेष्टदोर्ज्यया किं ततोऽङ्गुलार्थं कलादिकः शरस्त्रिभक्तस्तत्स्वरूपं च $= \frac{२७० \times \text{दोर्ज्या}}{१२० \times ३}$

$= \frac{३ \times \text{दोर्ज्या}}{४}$ शरस्य प्रकारान्तरे तु पञ्चदशभागलभ्यानि कलात्मकानि शरखण्डकानि पठितानीति ॥

चन्द्र-सूर्य-भूभा बिम्बसाधनम्—

बिम्बं विधोः स्यात्स्वगतिर्युगाद्रिभक्ता रवेर्दस्रहता शिवाप्ता ॥ ७ ॥
त्रिघ्नीन्दुभुक्तिस्तुरगांगभक्ता भूभार्कभुक्त्यद्रि लवेनहीना ।
राहुः कुभामण्डलगः शशांकं शशांकगश्छादयतीनबिम्बम् ॥ ८ ॥

सुमतिहर्षः — चन्द्रस्य स्फुटभुक्तिर्युगाद्रिभिश्चतुःसप्ततिभि ७४ र्भक्ता लब्धं चन्द्रबिम्बांगुलानि स्युः, रविस्पष्टागतिर्दस्राभ्यां २ गुणिता शिवैरेकादशभि ११ र्भक्ता लब्धं रविबिम्बं स्यात् । अथ चन्द्रभुक्तिस्त्रिगुणा तुरगाङ्गैः सप्तषष्टिभि ६७ र्भक्ता सूर्यभुक्तेः सप्तांशेन ७ हीना भूभा छायाबिम्बं स्यात् । भूछायावद्विधुकक्षा तावद्वर्तते, यथा चन्द्रगतिः ८२९।३५ युगाद्रि ७४ भक्ता लब्धं चन्द्रबिम्बम् ११।१२ अंगुलादिः ।

रविगतिः ६१।२१ दस्रहता १२२।४२ शिव ११ भक्ता लब्धं रविबिम्बम् ११।९ चन्द्रगतिः ८२९।३५ त्रिगुणा २४८८।४५ तुरगांग ६७ भक्ता लब्धम् ३७।३२ रविभुक्तेः ६१।२१ सप्तमांशेन ८।४५ हीनं भूछायाबिम्बम् २८।२२ । स्वस्वयोजनबिम्बानयनम् – स्वस्वपातकलाभिः कक्षा गुणितां चक्रकला २१६०० भक्ता लब्धं योजनात्मकं बिम्बं भवति । एवं कृतरवेर्बिम्बं योजनात्मकम् ६५२२ चन्द्रस्य ४८० एवं सर्वेषां यथास्थानं प्रदर्शयिष्यामः । अथ छादकमाह राहुर्भूभामण्डलगश्चन्द्रं छादयति, चन्द्रमण्डलगः सूर्यबिम्बमाच्छादयति । अतश्चन्द्रग्रहणे चन्द्रबिम्बं छाद्यं भूभा छादिका । सूर्यग्रहणे सूर्यबिम्बं छाद्यं चन्द्रबिम्बं छादकः ॥ ८ ॥

ग्रासमान साधनम—

यच्छाद्यसंछादकमण्डलैक्यखण्डं शरोनं स्थगितं तदाहुः ।
छन्नं पुनश्छाद्यविवर्जितं तत्खच्छन्नमेतन्निखिलग्रहे स्यात् ॥ ९ ॥

सुमतिहर्षः —छाद्यच्छादकबिम्बमानयोर्योगस्यार्द्धं शरेण हीनं स्थगितं ग्रासप्रमाणं छन्नमित्यर्थः । तच्चेच्छरोनं भवति तदा ग्रहणाभावः छन्नं छाद्यमानेन हीनं सदङ्गुलादिखच्छन्नं स्यात्, एतत्तुल्यमाकाशं बिम्बादुपरि छादयति, परमखच्छन्नं नवाङ्गुलासन्नम्, छन्नं विंशत्यङ्गुलासन्नम् एतत्सर्वग्रहणे सम्भवति । यथा छाद्यं चन्द्रबिम्बम् ११।१२ छादकं भूभाबिम्बम् २८।२२ उभयोरैक्यार्द्धम् १९।४७ यदा शराभावस्तदा परममानैक्यखण्डमङ्गुलविंशत्यासन्नम् १९।४७ शरेण २।५७ हीनं स्थगितम् १६।५० छन्नं चैतच्छाद्यमानेन ११।१२ विवर्जितं जातं खच्छन्नम् ५।३८ । अथ विंशोपकार्थं क्षेपकश्लोकः —

"छन्नं नख २० गुणं कृत्वा छाद्यमानेन भाजितम्"

छन्नं १६।५० विंशति २० गुणम् ३३६।४० छाद्येन ११।१२ भक्तं लब्धं विंशोपका भवन्तीति व्यवहारः ३०।३ परमविंशोपकाश्चत्वारिंशदासन्ना भवन्ति ॥ ९ ॥

सुधाकरः —स्पष्टार्थम् । अत्रोपपत्तिर्भानोर्गतिः स्वदशभागयुतार्द्धितावेत्यादिनैव तत्र कलात्मकं बिम्बं प्रसाध्य त्रिभिर्भक्तमङ्गुलकरणार्थं तत्र चन्द्रस्य स्पष्टमेव रवेः वि.$= \frac{११ \text{ र ग}}{६०}$ गुणकाधापवर्तनेन र. वि.=

$\frac{२ र ग}{११}$ । भूभा साधने तु भानोर्गतिः शरहता रविभिर्विभक्ता इत्यादि-

नाड्गुलकरणेन भूभा $= \frac{२ च ग}{१५ \times ३} - \frac{५ र ग}{१२ \times ३}$

$= \frac{२ \times ३ च ग}{१५ \times ३ \times ३} - \frac{५ र ग}{३६}$

$= \frac{२ \times ३ च}{१३५} - \frac{५ र ग}{३६} = \frac{३ च ग}{६७} - \frac{र ग}{७}$

अत उपपन्नं बिम्बानयनं शेषोपपत्तिर्विमला ।

स्थिति-विमर्दघट्योरानयनम्—

द्विघ्नाच्छराच्छन्नयुताहतात्पदं खाष्टेन्दुनिघ्नं विवरेण गत्योः ।
भक्तं स्थितिः स्याद्घटिकादिरेवं खच्छन्नतो मर्दमपि प्रजायते ॥ १० ॥

सुमतिहर्षः —पूर्वानीतः शरो द्वाभ्यां गुणनीयश्छन्नेन युतः पुनस्तच्छन्नेन गुणितस्तस्मात्पदं मूलं ग्राह्यं तन्मूलं खाष्टेन्दुभिरशीत्युत्तरशतेन गुणितं चन्द्रसूर्यस्फुटभुक्त्यन्तरेण भक्तं लब्धं घटिकादिस्थितिर्भवति, छन्नवत्खच्छन्नेनैव विमर्दं भवति, यतो भूभा सूर्यगत्या पूर्वतो यात्यतो रविगतिर्गृहीता। यथा शरः २।५७ द्विघ्नः ५।५४ छन्नेन १६।५२ युतः २२।४४ छन्नेनैव गुणितः ३८२।४० मूलम् १९।३४ खाष्टेन्दुभिः १।८० गुणितम् ३५२२।० चन्द्रसूर्ययोर्गत्यन्तरेण ७६८।१४ भक्तं लब्धम् ४।३५ मध्यस्थितिर्घटिकादिका, परमास्थितिः पञ्चघटिकासन्ना, एवं खच्छन्नतो मर्दः, द्विगुणशरः ५।५४ खच्छन्नेन ५।३८ युतः ११।३२ खच्छन्नेन गुणितः ६४।५८ पदं ८ खाष्टेन्दुगुणम् १४४० भुक्त्यन्तरेण ७६८।१४ भक्तं लब्धं मर्दघटिका १।५५ परमविमर्दः घटिकाद्वयासन्नः ॥ १० ॥

पंचकाल साधनम्—

विक्षेपतो नागयुगैर्विभक्ता नाड्यादिकं यत्फलमत्र लब्धम् ।
द्विष्ठा स्थितिस्तेन युता विहीना स्यातां क्रमात्स्पार्शिकमोक्षके ते ॥११॥
ओजे पदे पातयुतो विधुश्चेद्युग्मेऽन्यथैवं स्थितिवद्विमर्दे ।
सूर्योदयादस्तमयाच्च गम्यो मध्यो ग्रहः पर्वविरामकाले ॥ १२ ॥

स्थित्या विमर्देन च वर्जितेऽस्मिन्स्तः स्पर्शसम्मीलनके क्रमेण ।
युक्तेऽथ तस्मिन्स्थितिमर्दकाभ्यां मुक्तिस्तथोन्मीलनकं निजाभ्याम् ॥१३ ॥

सुमतिहर्षः —विक्षेपत इति शरात्किंलक्षणान्नागयुगैः ४८ विभक्ता नाड्यादिकं फलं लब्धं तेन फलेन द्विष्ठा स्थितिरेकत्र युतान्यत्र हीना सती क्रमेण स्पर्शमोक्षयोः स्थिति भवतः, अत्रैतस्मिन्नेव चन्द्रग्रहणे न तु सूर्यग्रहणे चेद्यदि पातयुतो विधुरोजपदे स्यात्तदैवम्, अथ यदि सपातचन्द्रो युग्मे पदे स्यात्तदा फलयुता मोक्षस्थितिः फलहीना स्पर्शस्थितिर्भवति एवं स्थितिवद्विमर्देऽपि साध्ये, अत्र भास्थे स्पर्शमोक्षशरादेतत्कर्म साधितम्, तद्वचनं च विक्षेपत इति मध्यविक्षेपान्न भवति, स्वस्वविक्षेपादिति ज्ञेयम्, मध्यविक्षेपादेतत्कर्म कर्तुं न युज्यते यतो मध्यस्थितयोः सममन्तरं न भवति। शरस्यान्यदिक्त्वात् तस्मात्स्वमौक्षिके ते ।

स्वविक्षेपादिति सम्भवतीति मया तु वृद्धसम्प्रदायमनुसृत्योदाह्रियते। यथा मध्यशरः २।५७ नागयुगैः ४८ भक्तः लब्धेन ०।३ मध्यस्थितिः ४।३५ द्विष्ठा ४।३५ सपातचन्द्रो विषमे पदे तेन युता सती स्पर्शस्थितिः ४।३८ हीना सती मोक्षस्थितिः ४।३२ एवं लब्धफलेन ०।३ मध्यविमर्दः १।५५ पुनः सन् १।५८ स्पर्शविमर्दः, हीनः सन् १।५२ मोक्षमर्दः ।

सूर्योदयादिति-सूर्यग्रहणे सूर्योदयाच्चन्द्रग्रहणे सूर्यास्तमयाद्गावि, ऐष्ये पर्वावसानकाले दर्शपूर्णमास्यन्ते स्फुटमध्यग्रहा स्यात्, चन्द्रग्रहणे स मध्यग्रहः पूर्णमास्यन्तः सूर्यग्रहणे स एव लम्बनसंस्कृतः स्फुटदर्शान्तः, अथ स्पार्शिकस्थित्या स्पार्शिकविमर्देन च वर्जिते हीने पर्वान्ते तिथ्यन्ते यथाक्रमं स्पर्श सम्मीलनकं च स्यात्, अथ निजाभ्यां स्वीयाभ्यां मौक्षिकाभ्यां युक्तेऽस्मिन् पर्वान्तिकाले क्रमेण मोक्षसमुन्मीलनकं च स्यात्, उभयोश्छाद्यच्छादकयोर्मण्डले सम्पर्कः सम्मीलनमिति, छायावृत्ताखिलग्रसनंछाद्यबिम्बादर्शनमित्यर्थः । मध्यग्रहमिति यावत्, शराङ्गुलमानेन छादनाच्छादनं छन्नमित्यर्थः। तन्मध्यग्रहणमेतस्मादधिकं न छाद्यते इत्युन्मीलनमिति, मध्यग्रहणान्मुच्यमाने छाद्यबिम्बस्पर्शनमात्रं मोक्ष इत्युभयोर्बिम्बयोः पृथग्भावः छाद्यबिम्बाधिको यावद्ग्रासः, स्पर्शस्थित्या ४।३८ पर्वान्तकालम् ११।३८ हीनो जातः स्पर्शकालः ७।० स्पर्शमर्देन १।५८ रहितो जातः सम्मीलनकालः ९।४० तिथ्यन्तः ११।३८ मोक्षस्थित्या ४।३२ युक्तो जातो मोक्षकालः १६।१०

स एव पर्वान्तिकालः ११।३८ मोक्षमर्देन १।५२ युक्तो जातः उन्मीलनकालः १३।३० स्पर्शकालः ७।० मोक्षकालः १६।१० अनयोर्द्वयोरन्तरम् ९।१० जातस्पर्शमोक्षयोरन्तरकालः घट्यादिः पुण्यकालग्रहस्थितिः ॥ ११-१३ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । तत्रैकघटिकायां मध्यमा शर गतिः

$$= \frac{\text{७९३} \times \text{२} \times \text{२७०}}{\text{६०} \times \text{१२०} \times \text{६०}} = \text{१}'$$

मध्यमगत्यन्तरं चैकघटीभवं रवीन्द्वोः $= \frac{\text{७३३}}{\text{६०}} = \text{१२}'$

अथ कल्प्यते य=स्थित्यर्धघटी, तदौजपदे सपातचन्द्रे स्पर्शशरः= ३ म श − य ततो "मानार्धयोगान्तरयोः कृतिभ्यामित्यादिना" स्थित्यर्ध कलावर्गः $= \text{९ मा}^{२} - (\text{३ म श} - \text{य}^{२}) = \text{९}(\text{मा}^{२} - \text{म श}^{२}) +$ $\text{६ म श. य} - \text{य}^{२}$ ततो गत्यन्तरवर्गेण भक्तं लब्धं स्थित्यर्धघटीवर्गमानं

$$= \frac{\text{९}(\text{मा}^{२} - \text{म श}^{२}) + \text{६ मश. य} - \text{य}^{२}}{\text{१४४}} = \text{य}^{२}$$

वा, $\text{१४५य}^{२} - \text{६ म श. य} = \text{९}(\text{मा}^{२} - \text{म श}^{२})$

$= \text{९}(\text{मा} + \text{म श})(\text{मा} - \text{म श})$

$= \text{९}(\text{६} + \text{२ म श})\text{६}$ उभयोर्मूलाभ्यां

$\text{य} - \frac{\text{६ मश}}{\text{१४५} \times \text{२}} = \frac{\text{३ मू}}{\text{१२}}$ स्वल्पान्तरात्

$$\therefore \text{य} = \frac{\text{६ मश}}{\text{१४५} \times \text{२}} + \frac{\text{३ मू}}{\text{१२}} = \frac{\text{मश}}{\text{४८}} + \frac{\text{१८० मू}}{\text{७२०}}$$

मौक्षिकेऽपीयं क्रिया धनर्णव्यत्यासेन विमर्दार्धेऽपि तथैव साध्ये युग्मपदे सपातचन्द्रे विपरीता क्रिया भवति शरस्य ह्रासात् शेषं स्पष्टम् ॥

वलनानयनम्—

खाङ्काहतं स्वद्युदलेन भक्तं स्पर्शे विमुक्तौ च नतं लवाः स्युः ।
तज्ज्याहताश्चाक्षलवा विभक्तास्त्रिभज्यया प्रागपरे नते स्यात् ॥ १४ ॥

सौम्यान्तकाशा वलनं ग्रहस्य युक्तायनांशस्य तु कोटिजीवा ।
बाणैर्विभक्तायनदिक्तथान्यद्भागाद्यमेकान्यदिशोस्तयोस्तु ॥ १५ ॥
योगान्तरज्याहतमानयोगखण्डं त्रिभज्याहृतमङ्गुलाद्यम् ।
स्फुटं भवेत्तद्वलनं रवीन्द्वोः प्राग्ग्रासमोक्षे विपरीतदिक्के ॥ १६ ॥

सुमतिहर्षः—स्पर्शविमुक्ते मोक्षे च यन्नतं तत् खाङ्कैर्नवतिभिः ९० स्वदिनार्द्धेन चन्द्रग्रहणे रात्र्यर्द्धेन रविग्रहणे दिनार्द्धेन भक्तं नतांशाः स्युः, तेषां नतांशानां ज्यया गुणिताः स्वदेशाक्षांशास्त्रिज्यया विंशत्युत्तरशतेन १२० भक्ता लब्धं स्पर्शमोक्षवलनमंशादिः स्यात्, पूर्वनते प्राक्कपाले सौम्यं वलनम्, अपरनते प्रत्यक्कपालेऽन्तकाशं याम्यं वलनम् । अयनांशयुक्तस्य तात्कालिकग्रहस्य रवेश्चन्द्रस्य वा कोटिज्या बाणैः पञ्चभिर्भक्ता लब्धमंशाद्यमायनं वलनं स्यात्, तच्चायनदिक्, यदि सायनो ग्रहः सौम्येऽयने तदा सौम्यम्, यदि याम्येऽयने तदा याम्यम्, तयोरक्षवलनायनवलनयोरेकदिशि योगो भिन्नदिशि वियोगः कार्यः तस्य योगस्यान्तरस्य च या ज्या तया गुणितं छाद्यछादकमानैक्यार्द्धं त्रिज्यया भक्तं स्फुटं वलनं भवति, योगपक्षे सैव दिक्, अन्तरपक्षेऽधिकवलनसम्बन्धिनी भवति । तच्च वलनं रवीन्द्वोः प्राग्ग्रासमोक्षे विपरीतदिक्कम् इति, प्राग्ग्रासं स्पर्शवलनं रवेर्ग्रहणे विपरीतं देयं याम्यं चेत्सौम्यं ज्ञेयम्, सौम्यं चेद्याम्यमिति, इन्दोर्ग्रहणे मोक्षवलनं विपरीतं याम्यञ्चेत्तदा सौम्यम्, सौम्यं चेत्तदा याम्यम् । विशेषश्चात्र खमध्ये पाताले चाक्षजवलनाभावः, वलनं चतुर्विंशत्यंशप्रमाणम्, कर्कादौ मकरादौ च वलनाभावः सदोह्यम्, परमं स्पष्टवलनमङ्गुलपञ्चदशासन्नम् । यत्र षट्षष्टिपलांशास्तत्र परमं स्पष्टवलनं विंशत्यङ्गुलमुक्तप्रकारेण भवतीति ज्ञेयम् । इह सममण्डलं द्रष्टुः प्राची, सममण्डलादिष्टे नते काले विषुवन्मण्डलप्राची यावतायनश्चलति तावत्तद्दिक्कपालोद्भवं ज्ञेयम् । अथ विषुवन्मण्डलात्क्रान्तिमण्डलप्राचीं यावतायनश्चलति तदायनं तद्दिग्ज्ञेयम् । तयोर्योगवियोगात्स्फुटमिति । सममण्डलात्क्रांतिमण्डलं यावतायनश्चलति तत्स्फुटं वलनमिति । अथ ग्रस्तोदये ग्रस्तास्ते स्पर्शमोक्षवलनायनमुच्यते रात्रेः शेषे गते वा इत्यादिना जातकवचनान्नतमानीय खाङ्कहतं स्वदिनार्द्धेन भक्तं लम्बनतांशास्तेषां भुजं कृत्वा ज्या साध्या ततः प्राग्वदक्षवलनमानेयम् । उक्तं च पर्वमालायाम्,—

"स्वरात्रौ शेषजा नाड्यो द्युदलं स्पर्शमोक्षयोः ।
नतं स्यात्स्वदिनं प्राग्वत्तन्नाड्यः षड्गुणा लवाः ॥
तद्भुजज्या पलांशघ्नी त्रिज्याभक्ता लवादिकम् ।
वलनं स्यादुदग्याम्यं ग्रहणं प्राक्परस्थिते" ॥

पुनरुक्तम्,

रात्रेः शेषघटीयुक्तं दिनार्द्धं प्राङ्नतं रवेः ।
रात्रेर्गतघटीयुक्तं दिनार्द्धं प्रत्यङ्नतं रवेः ॥
दिनशेषघटीयुक्तं निशार्द्धं प्राङ्नतं भवेत् ।
सूर्योदयाद्युङ्निशार्द्धं प्रत्यगिन्दोर्नतं मतम् ॥

ततः खाङ्काहतमित्यादिकार्यम् । ब्रह्मतुल्यभाष्ये तु ग्रस्तोदये स्पार्शिकनतं ग्रस्तास्ते मौक्षिकं नतम् । स्वदिनार्द्धाद्यावदधिकं भवति तस्य स्वदिनार्द्धवशादंशान्प्रसाध्य नवते९०र्विशोध्य तज्ज्यां कृत्वाऽक्षांशैः सङ्गुण्य त्रिज्यया भाज्यं तदक्षजं वलनं स्यात् । ग्रस्तोदये सौम्यं ग्रस्तास्ते दक्षिणमिति । एतदुदाहरणं यथास्थानं दर्शयिष्यामः ।

अस्तात्स्पर्शघटी ७ चन्द्रदिनार्द्धम् १६।४९ अनयोरन्तरं स्पर्शनतं ९।४९ प्राक् खाङ्काहतं ८८३।३० स्वदिनार्द्धेन १६।४९ भक्तं लब्धं नतांशाः ५२।३२।१३ एषां ज्या ९५।२ अनयाक्षांशाः २४।३५।९ गुणिताः २३३६।२८।५८ त्रिज्यया १२० भक्ते लब्धमाक्षजवलनमंशादिः १९।२८।१४ प्राङ्नतत्वादुत्तरम्, अथायनांशाः स्पर्शकालः ७ यात्येष्यनाडीत्यादिना स्पार्शिकश्चन्द्रः १।२९।११।३८ सायनः २।१७। १९।२० कोटि ०।१२।४।४० ज्या २६।१ बाणैर्भक्ता लब्धमायनं वलनम् ५।१३ सौम्यायनत्वात्सौम्यम्, आसन्नाक्षयोरेकदिक्त्वाद्योगः २४।४०।४० अस्य ज्या ४९।५२ अनया चन्द्रभूभामानयोगखण्डम् १९।४७ हतम् ९८६।३१।४४ त्रिज्यया १२० भक्तं लब्धं स्पष्टवलनमङ्गुलादिः ८।१३।९ मोक्षकालघटी १६।१० चन्द्रदिनार्द्धयोरन्तरं प्राङ्नतम् ०।३९ खाङ्कै ९० र्गुणितम् ५८।३० चन्द्रदिनार्द्धेन १६।४९ भक्तं लब्धं नतांशाः ३।२८।४३ एषां ज्या ७।१८ अनयाक्षांशाः २४।३५।९ गुणिताः १७९।२८ त्रिभज्यया भक्ते लब्धम् १।२९।४४ प्राङ्नतत्वादुत्तरम । अथायनम्, मोक्षकालः १६।१० तात्कालिकश्चन्द्रः २।१।१८।४४ सायनः २।१९।२६।२६ कोटिः ०।१०।३३।३४ ज्या

२१।४७ बाणै ५ र्भक्ते लब्धम् ४।२१।२४ उत्तरायणत्वादुत्तरम् । अक्षजायनयोरेकदिक्त्वाद्योगः ५।५१।८ अस्य ज्या १२।१७ अनया मानयोगखण्डम् १९।४७ गुणितम् २५६।११ त्रिज्यया १२० भक्ते-लब्धं स्फुटवलनम् २।८।५ सौम्यम् ॥ १४-१६ ॥

स्पार्शिकमौक्षिकशरसाधनम्—

माध्यः शरस्त्वोजपदोद्भवश्चेत्स्थित्यग्निभागोनयुतो युतोनः ।
युग्मे विधोर्वा प्रथमान्त्यबाणौ चन्द्रग्रहे व्यस्तदिशः शराः स्युः ॥ १७ ॥

सुमतिहर्षः—माध्य इति मध्यग्रहणकालिकः शरो यदि विषमपदस्थसपातचन्द्रादुत्पन्नस्तदा मध्यस्थितितृतीयभागेनोनो रहितः सन् स्पर्शकालिकः शरो भवति । स्थिते तृतीयभागेन युतो मध्यकालीनः शरोन्त्यकालीनो मोक्षकालीनः शरो भवति । युग्मपदोद्भवश्चेत्तदा स्थितितृतीयभागेन युतः सन्स्पार्शिकः, हीनः सन्मौक्षिकः शरः स्यात् । एवं विधोश्चन्द्रग्रहणे न तु सूर्यग्रहणे । वा अथवा विधोस्तात्कालिकात्सपातचन्द्रात्प्रथमान्त्यबाणौ साध्यौ, ते स्पर्शमध्यमोक्षशराश्चन्द्रग्रहणे परिलेख कर्मणि विपरीतदिशो ज्ञेया नान्यत्र । उक्तं च, "नित्यशोऽर्कस्य विक्षेपा परिलेखे यथाक्रमम् । विपरीतं शशाङ्कस्य" इति ।

यथा मध्यस्थितिः ४।३५ तृतीयभागेन १।३१ ओजपदत्वान्माध्यः शरः २।५७ हीनो जातः स्पर्शशरः १।२६ मध्यशरः २।५७ स्थितितृतीयभागेन १।३१ युतो जातो मोक्षशरः ४।२८ इदं कर्म माध्यशरस्यैव । अथ प्रकारान्तरेण स्पार्शिकश्चन्द्रः १।२९।११।३८ तात्कालिकपातेन ४।१।३५।५३ युतः ६।०।४७।३१ भुजः ०।०।४७।३१ ज्या १।३९ त्रिघ्नी ४।५७ कृताप्ता शरो जातो याम्यः १।१४ स्पर्शकालीनः मोक्षकालिकः पातः ४।१।३६।२१ चन्द्रेण २।१।१८।४४ युक्तः ६।२।५५।५ भुजः ०।२।५५।५ ज्या ६।७ त्रिघ्नी १८।२१ कृताप्ता मोक्षशरो दक्षिणः ४।३५।० प्रकारान्तरभेदादल्पान्तरम् ॥ १७ ॥

सुधाकरः —स्पष्टार्थम् । उपपत्तिरपिसुगमा, अक्षजायनवलनयोरंशानुपातः, यथा

$$\text{अ. जा. व. अं} \quad \frac{\text{नज्या. अ. अं.}}{\text{त्रि}}$$

आ व अं = $\frac{२४. \text{खे को ज्या}}{१२०}$ = $\frac{\text{खे को ज्या}}{५}$

अथ स्पर्शमोक्षयोः शरार्थं त्वनुपातः घटिकयैकया एककला शरस्तदा स्थित्यर्धघटीभिः किं अङ्गुलार्थं त्रिभिर्भक्ताः शरकलाः। धनर्णवासना युग्मैवशात् सुगमा। अन्यच्चातिसरलम्।

परिलेख कथनम्—

ग्राह्यार्द्धसूत्रेण विधाय वृत्तं मानैक्यखण्डेन च साधिताशम्।
बाह्येऽत्र वृत्ते वलनं यथाशं प्राक्स्पार्शिकं पश्चिमतश्च मोक्षम्॥ १८॥
देयं रवेः पश्चिमपूर्वतस्ते ज्यावच्च बाणौ वलनाग्रकाभ्याम्।
उत्पाद्य मत्स्यं वलनाग्रकाभ्यां माध्यः शरस्तन्मुखपुच्छसूत्रे॥ १९॥

सुमतिहर्षः—समे भूतले पदादौ वा ग्राह्यस्य चन्द्रग्रहणे चन्द्रस्य रविग्रहणे रवेः बिम्बमानाङ्गुलस्यार्द्धेनाभीष्टस्थानकल्पितबिन्दोर्मण्डलं कृत्वा ग्राह्यग्राहकमानयोगार्द्धप्रमाणेन कर्काटकेन सूत्रेण वान्यद्वृत्तं तस्मादेव बिन्दोः कृत्वा तस्माद्बिन्दोरुपरि पूर्वापरं तथा दक्षिणोत्तरं रेखाद्वयं कर्त्तव्यम्। एवं साधितदिक्के बाह्येऽत्र वृत्ते वलनं देयं तच्च यथाशं दक्षिणस्यां याम्यं सौम्यमुत्तरस्याम्, प्राग्ग्रासमोक्षे विपरीत-दिक्त्वम् इति पूर्वं सम्प्रसार्य्य तत्रापि चन्द्रग्रहणे स्पार्शिकं वलनं प्राची-चिन्हात्, मौक्षिकं पश्चिमचिह्नाज्ज्ञेयम्, रविग्रहणे तु स्पार्शिकं पश्चिमतो मौक्षिकं पूर्वतः, ततश्चन्द्रग्रहे व्यस्तदिशः शराः स्युरिति पूर्वं सम्प्रसार्य्य स्पार्शिकमौक्षिकवलनाग्रचिह्नाभ्यां स्पार्शिकशराङ्गुलपरिमिते शलाके क्रमेण स्वदिगभिमुखे ज्यारूपेण देयः। स्पर्शवलनाग्रात्स्पर्शशरो देयः। मौक्षिकवलनाग्रान्मौक्षिकशरो देयो ज्यावत्। एवं धनुराकारे बाह्यवृत्ते रेखाप्रदेशे शरद्वयाग्रं चिन्हं विधाय मध्यशरार्थमाह—

उत्पाद्येति—वलनद्विकान्तरमितादिक् सूत्रस्यैकाग्रं स्पर्शवलन-स्योपरि धृत्वा तेन बिम्बार्द्धं कुर्यात्, अथ मौक्षिकवलनाग्रात्तेनैव सूत्रेण बिम्बार्द्धं कार्यं तयोर्बिम्बार्द्धयोर्यत्र सङ्गमस्तत्र मुखपुच्छे प्रकल्प्ये। अथ वलनाग्रकाभ्यां समतुल्यप्रमाणेन कर्काटकेन वृत्तद्वये कृते वृत्तयोः समासे मत्स्याकार उत्पद्यते तन्मध्यसूत्रे तन्मुखपुच्छसूत्रमिति, तस्यमुखात्केन्द्र-व्यापिनीं पुच्छपर्यन्तं रेखां कृत्वा॥ १८-१९॥

स्पर्श-मध्य-मोक्षस्थानकथनम्—

केन्द्राद्यथाशं स्वशराग्रकेभ्यो वृत्तः कृतैर्ग्राहकखण्डकेन।
स्युः स्पर्शमध्यग्रहमोक्षसंस्था अथाङ्कयेन्मध्यशराग्रचिन्हात्॥ २०॥

सुमतिहर्षः—केन्द्रादिति — तस्मात्केन्द्रान्मध्यस्थितबिन्दोर्मध्यशरः स्वदिगभिमुखो देयः, एवं शरत्रयाग्रं चिह्नयित्वा रविग्रहे ग्राहकस्य चन्द्रस्य खण्डकेन चन्द्रग्रहणे भूभायाः खण्डकेन मानार्द्धेन तत्केन्द्रादिति— कर्काटकेन स्पर्शशरचिन्हाद्वृत्तं कुर्यात्। तदभ्यन्तरे ग्राह्यवृत्ते यत्र स्पृशति तत्र स्पर्शो ज्ञेयः, एवं मौक्षिकशराग्रकृतवृत्तसम्पर्कान्मोक्षस्थानं ज्ञेयम्, मध्यशराग्रकृतवशान्मध्यग्रहणसंस्थानं ज्ञेयम्, तत्र यदा मध्यग्रासो ग्राह्यबिम्बमुल्लंघ्य यावद्बहिः पतति तावदाकाशं गृह्यते तत्र सर्वग्रहणं ज्ञेयम्, यदा तु ग्राह्यबिम्बैकदेशे गृह्णाति तदा तावदेव खण्डग्रहणम्, यदा ग्राह्यं न स्पृशति तदा ग्रहणाभावः॥ २०॥

इष्टग्रासकथन—

आद्यन्त्यबाणाग्रगते च रेखे ज्ञेयाविमौ प्रग्रहमुक्तिमार्गौ।
मानान्तरार्द्धेन विलिख्य वृत्तं केन्द्रेऽथ तन्मार्गयुतद्वयेऽपि॥ २१॥
भूभार्द्धसूत्रेण विधाय वृत्ते सम्मीलनोन्मीलनके च वेद्ये।
मार्गप्रमाणे विगणय्य पूर्वं मार्गाङ्गुलघ्नं स्थितिभक्तमिष्टम्॥ २२॥
इष्टाङ्गुलानि स्युरथ स्वमार्गे दद्यादमूनिष्टवशात्तदग्रे।
वृत्ते कृते ग्राहकखण्डकेन स्यादिष्टकाले ग्रहणस्य संस्था॥ २३॥

सुमतिहर्षः — अथ मध्यशराग्रबिन्दोः स्पर्शाग्रपर्यन्तं रेखां लिखेत्स ग्राहकस्य ग्रहणमार्गः, यतो मध्यशराग्रचिह्नादेव मोक्षशराग्रपर्यन्तं रेखां कुर्यात्स मोक्षमार्गः, शरत्रयं स्पर्शिनी सा रेखा धनुराकारा भवति, मानान्तरार्द्धेनेति—ग्राह्यग्राहकमानयोरन्तरस्य यदर्द्धं तत्प्रमितेन कर्का-टकेन केन्द्रे वृत्तं कुर्यात्, तस्य वृत्तस्य पूर्वविहितग्रहमार्गरेखायाश्च यत्र योगस्तत्र भूच्छायामानार्द्धमिति कर्काटकेन वृत्तं कुर्यात्, तद्बाह्यवृत्तं यत्र स्पृशति तत्र सम्मीलनमोक्षासनम्, सम्मीलनमिति वृत्तमोक्षमार्गयोर्यत्र योगस्तत्र भूच्छायामानार्द्धमिति कर्काटकेन वृत्ते कृते तेन ग्राह्यात्संस्पर्शात् सम्मीलनं ज्ञेयम्, स्पर्शासन्नमुन्मीलनमिति विशेषाश्चात्र छादकार्द्धसूत्रे-णेति नोक्तं भूभयैवोक्तं तस्मात्सूर्यग्रहणे सम्मीलनोन्मीलनयोरभावो

ज्ञेयः। कदाचित्स्वल्पान्तरमुच्यते तथापि बिम्बयोग एव भवति तत्तु खच्छन्नम्, उभयोश्छाद्यच्छादकयोर्बिम्बसाम्यात्। अथेष्टग्रासमोक्षग्रासः ॥

मार्गेति। कश्चित्पृच्छति स्पर्शकालादनन्तरमभीष्टकालगते मोक्षकालात्पूर्वं वाभीष्टकाले कियान्ग्रासस्तदा ग्रासमार्गरेखा मोक्षमार्गरेखाङ्गुलैः परिमीय तैर्मार्गाङ्गुलैरिष्टकालं गुणयेत्, ततः क्रमेण स्पर्शस्थितिमोक्षस्थितिघटिकाभिर्गुणयेत् तन्मितानीष्टाङ्गुलानि तान्यङ्गुलानि यथेष्टं स्वमार्गे दद्यात्, यथेष्टग्रास इष्टस्पर्शशरात्स्पर्शे मार्गे मोक्षशरान्मोक्षमार्गे इष्टाङ्गुलैश्चिह्नं कृत्वा तदग्र इष्टाङ्गुलाग्रचिन्हे ग्राहकमानार्द्धेन वृत्ते यावद्ग्राह्यमाच्छाद्यते तावदिष्टकाले ग्रहणस्य संस्थानं ज्ञेयम्। यथा स्पर्शादिष्टघटी १ स्पर्शमानाङ्गुलैः १९ गुणितैः १९ स्पर्शस्थित्या ४।३८ भक्ताल्लब्धम् ४।६ इष्टाङ्गुलानि।

अथ परिलेखं विना स्पर्शमध्यमोक्षज्ञानमुच्यते "सौम्यांशे यदि शायकोऽनलदिशि प्राच्यां शशाङ्कग्रहश्छन्नं पूर्वमथान्तकस्य दिशि तन्मुक्तिः क्रमाद्रक्षसाम्। याम्यश्चेद्विशिखस्तदेन्द्रककुभः स्पर्शः पुरारेर्दिशिच्छन्नं सौम्यदिशीदमुक्तमनला मुक्तीरिमाः स्युः क्रमात्" इति ॥

यया ग्राह्यार्द्धम् ५।३६ मानैक्यार्द्धम् १९।४६ स्फुटं स्पर्शवलनं सौम्यम् ८।२१।३ स्पष्टं मोक्षवलनं सौम्यम् २।८ परे दक्षिणेस्पर्शशरः १।१६ मध्यशरः २।२७ मोक्षशरः ४।४८ परः उत्तराभूच्छायामानार्द्धम् १४।११ मानार्द्धम् ८।३५ एवमत्र निपुणेन विचार्य परिलेखो विधेयः।

अथ ग्रस्तोदये चन्द्रस्पर्शनतायोदाहरणम्, शके १५२८ भाद्रपदपूर्णिमायां शनौ २६।३३ अब्दाः ४२३ अधिमासाः १५७ अवमानि २४५९ अहर्गणः १५४६९५० औदयिको मध्योऽर्कः ५।७।५९ चन्द्रः १०२५।३।३४ उच्चम् २।२२।३६।४४ पातः ६।२६।३।५४ औदयिकाः स्वदेशीयाः, चन्द्रस्य रामबीजम् ०।१५।० रवेर्मन्दफलमृणम् २।८।१२ चन्द्रमन्दफलं धनम् ४।२७।३४ स्पष्टोऽर्कः ५।४।५७।० चन्द्रः १०।२९।२७।५ अयनांशाः १८।३।२७ चरपलान्यृणानि १२ रविगतिः ५८।३५ चन्द्रगतिः ८१९।० चरपलसंस्कृतदिनार्द्धम् १५।१२ रात्र्यर्द्धम् १४।४८ एष्या तिथिः २६।२२ दिने पूर्णिमायां यातत्वान्नतफलार्थम्, नतानयनम्, दिनशेष घटीयुक्तमिति दिनशेषः ४।२२ रात्र्यर्द्धम् १४।४८ अनयोर्योगः

१९।० नतं प्राक्, एतावता मध्यान्हांशुमतार्थं एव विवरेत्यादिप्रकारेण सूर्योन्नतमेव चन्द्रनतम्, ततो नतविहीनहतैरित्यादिना नतफलं सूर्यस्य धनम् ०।२।५५ चन्द्रनतफलमृणम् ०।६।४६ नतफलसंस्कृतो मध्यग्रहणकालः समकलः सपाततात्कालिकेत्यादिना शरोऽङ्गुलादिः २।२४ ऋणे चन्द्रबिम्बम् ११।४ भूभा २८।० छन्नम् १७।१८ स्थितिः ४।३७ ऋणम्, अथ स्पर्शनतार्थमुदयाद्गतघट्यादि २२।२१ समये स्पर्शस्तेन दिनशेषः ८।३० चन्द्रस्य रात्रिशेष एवेत्यादिवत् २१ रात्रिशेषघट्यः ८।३ चन्द्रदिनार्द्धम् १४।४८ अनयोर्योगः २२।५१ स्पर्शनतं प्राक् खाङ्कैर्गुणितम् २००६।३० द्युदलेन १४।४८ भक्तं नतांशाः १३८।५७।९ राश्यादि ४।१८।५७।९ भुजः १।११।२।५१ ज्या ७८।३४ अक्षांशाः २४।३५।९ गुणिता १९३१।१०।३७ त्रिज्यया १२० भक्तं लब्धमाक्षवलनमुत्तरम् १६।५ भाज्यप्रकारे तु नतात् २२।५१ दिनार्द्धम् १४।४८ शुद्धम् ८।३ खाङ्कैर्गुणितम् ७२४।३० भक्तं चन्द्रदिनार्द्धेन लब्धं नतांशाः ४८।५७ नवतेः शुद्धाः ४१।३० पूर्वभुजांशसदृशमतः प्राग्वद्वलनमिति, अन्यत्यागवत्कार्यमिति तद्विशेषत्वाद्वलनबोधाय दर्शितम्, सुबुद्धिनामनवगतं किञ्चिन्नास्ति, एवं ग्रस्तास्तेऽपि नतदिक् स्वयमूह्यम्, सूर्यग्रहणेऽपि ग्रस्तोदये ग्रस्तास्ते वक्तव्यं तद्दिक्साधनम् ॥

इति श्रीकरणकुतूहलवृत्तौ चन्द्रग्रहणाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

अथोपसंहारः—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले।
विदग्धबुद्धिवल्लभे शशाङ्कपर्वसाधनम् ॥ ४ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् वासनापि सरला सिद्धान्तोक्तिवत।
श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणेवरा।
चन्द्रपर्वगणितस्य वासना सूक्तियुक्तिसहिताऽत्रसङ्गता ॥

इति करणकुतूहलवासनाविभूषणे चन्द्रग्रहणाधिकारः ॥ ४ ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः चन्द्रग्रहणाधिकारः चतुर्थः।

सूर्यग्रहणाधिकारः-५

नतोन्नतयोः स्वरूपम्—

दर्शान्तिकाले त्रिभहीनलग्नं कार्यं च तत्क्रान्तिपलान्तरैक्यम् ।
भिन्नैकदिक्त्वे नतभागकाः स्युः खाङ्कच्युतास्ते पुनरुन्नतांशाः ॥ १ ॥

सुमतिहर्ष—अत्रादौपरिपाटीलिख्यते—

संवत् १६५७ आषाढकृष्णे वर्षे शके १५२२ प्रवर्तमाने लौकिक-श्रावणवद्यामायां चन्द्रे २८।४६ अत्र दिने सूर्यपर्वविलोकनार्थं गताब्दाः ४१७ अधिमासाः १५४ अवमानि २४२३ औदयिकोऽहर्गणः १५२४ ३६ रामबीजादिबीजदेशान्तरशुद्धा मध्यमाः, सूर्यः ३।०।३६।३२ चन्द्रः २।२९।४०।२३ उच्चम् ६।११।२।५६ पातः २।२६।२० चन्द्रे राम-बीजं कलाद्यर्णम् १५ रविमन्दफलमृणम् ०।२८।३६ स्पष्टोऽर्कः ३।०। ६।३४ चन्द्रमन्दफलं धनं ४।४१।५० स्पष्टचन्द्रः २।२४।१।५७ पातः २।२६।५५ अयनांशाः १७।५७।२० चरपलानि १०३ ऋणमत-स्थितिघटी एष्या २८।४६ दिनार्द्धम् १६।४३ दिनम् ३३।२६ राज्यर्द्धम् १३।१७ रात्रिः २६।३४ द्युदलगतघटीनामिति, दिनार्द्धम् १६।४३ गतघटी २८।४६ अनयोरन्तरं पश्चिमनतम् १२।३ चन्द्रस्य सहचरत्वं तुल्यमेव यदा रात्रावमावास्यान्तो भवति तदा रात्रिशेषघटी-युक्तमित्युक्तवन्नतं साध्यम् । अथ नतफलार्थं नतविहीनहतैरित्यादिना नतेन १२।३ खगुणा हीनाः १७।५७ नतेनैव १२।३ गुणाः २१६ एभिः खशरभानुभुवः ११२५० भक्ता लब्धम् ५२।५ दश १० रहितं जातो रविहरः ४२।५ असौ ४२।५ स्वदशांशेन ४।१२ हीनो जातोंशादिश्चन्द्र-हरः ३७।५२ निजफलं निजहाहृतमिति सूर्यनतफलं कलादि ०।४० चन्द्रनतफलं कलादि ७।२२ रवौ पश्चिमनतत्वाद्धनं नतफलसंस्कृतो रविः ३।०।७।१४ चन्द्रस्य पश्चिमनतत्वाच्चन्द्रे २।२४।१।१७ ऋणं नतफल-संस्कृतश्चन्द्रः २।२३।५३।४५। अथ भुक्तेर्नतफलानयनमाह-रविगतिफलम् २।५५ हारेण ४२।५ हृतं फलं विकला ३ रविवद्भुक्तौ संस्कृते जाता रविगतिः ५६।५८ चन्द्रस्य गतिफलम् २९।१५ धनं हारेण भक्तं लब्धं कलादि ०।४६ अपरकपालत्वाद्भुक्तौ ८१९।५० ऋणं नतफलसंस्कृता

चन्द्रस्य गतिः ८१८।४ अतः स्पष्टातिथिरमावास्या एष्या घट्यः २९।२४ एतत्कालिकाः यातैष्यनाडीगुणिताद्युभुक्तिरित्यादिना जातौ समकलौ, एवं सर्वत्र ज्ञेयं धीमता ॥

दर्शान्तेति । तात्कालिकोऽर्क इत्यादिनामावास्यान्तकालीनं लग्नं संसाध्य राशित्रयेण हीनं कार्यं तेन वित्रिभलग्नेन समश्चेद्दर्शान्तकालिकः सूर्यो भवति तदा लम्बनाभावः, वित्रिभलग्नादूनेऽधिके वा रवौ लम्बनं स्यादिति ज्ञेयम्, विशेषोऽत्र वित्रिभलग्नशब्देन दशमं भलग्नं ततश्चानीतं सम्यग्वलनं भवति, सूर्यसिद्धान्तादौ दशमादेव साधितं यतो मध्याह्न-समान्ते दर्शान्ते नताभावात्सूर्य एव दशमो भावस्तदा लम्बनस्याभावः, वित्रिभादानीतं कदाचिन्मध्याह्नासन्नकाले ग्रहणादिकं न मिलति तदा दशमादानीयते तदेव वास्तवं परं ग्रन्थकृता कदाचिदपेक्षया स्थूलपक्षो-ऽप्यङ्गीकृतः, यदा लग्ने राशित्रयं न शुध्यति तदाचक्रं दत्वा विशोध-येत् । उक्तं च—

"भत्रयं चेन्न शुध्येत चक्रं दत्वा विशोधयेत् ।
सूर्यादूनस्तदा वाच्यो वित्रिभस्त्वधिकोऽपि सन् ॥

अथ वित्रिभलग्नस्य सायनांशस्य क्रान्तिः कार्यांशादिस्तस्याः क्रान्तेः स्वदेशीयांशानां भिन्नदिक्त्वेऽन्तरमेकदिक्त्वे योगः कार्यस्तेषां दिगन्तरे-ऽधिकस्यैव दिक्, योगे सैव दिङ्नतांशाः स्युस्ते नतांशाः खाङ्केभ्यो नवतिभ्य ९० श्च्युताः शेषमुन्नतांशाः स्युः । तथा तात्कालिको रविः ३।०।३५।८ दर्शान्तिघटी २९।२४ अत्र सुखादुत्क्रमलग्नं सायनम् ८।२५ १४।५८ वित्रिभम् ५।२५।१४।५८ अस्मात्प्राग्वत्क्रान्तिरंशादिः १।५४।५८ उत्तराः, सीरोह्यामक्षांशाः दक्षिणाः २४।३५।९ भिन्नदि-क्त्वादनयोरन्तरं जाता नतांशाः २२।४०।३२ अक्षांशशेषत्वाद्दक्षिणाः, यतोऽक्षांशाः सदैव दक्षिणा भवन्ति नवति ९० भ्यः शुद्धा जाता उन्न-तांशाः ६७।१९।२८ ज्या ११०।३५ नतांशज्या ४६।५ ॥ १ ॥

लम्बननत्योः साधनम्—

त्रिभोनलग्नार्कविशेषशिञ्जिनी खरामभक्ता घटिकादिलम्बनम् ।
तदुन्नतज्या निहतं नखेन्दुभिर्हृतं स्फुटं स्यात्स्वमृणं तिथौ क्रमात् ॥२॥

त्रिभोनलग्नाधिकहीनके रवेस्ततोऽसकृल्लग्नविलम्बनादिकम् ।
नतांशजीवार्कलवान्विताद्धृन्नतांशदिक् चाङ्गुलपूर्वका नतिः ॥ ३ ॥

सुमतिहर्षः—वित्रिभलग्नदर्शान्तिकालीनसूर्ययोर्विवरस्य या ज्या सा खरामै ३० हृता भक्ता लम्बनं घट्यादि मध्यलम्बनं स्यात्तदुन्नतांशज्यया गुणितं नखेन्दुभि १२० र्भजेल्लब्धं स्फुटं लम्बनं भवति, तत्स्पष्टलम्बनं वित्रिभे रवेरधिके तिथौ दर्शान्ते धनम्, रवेर्हीने वित्रिभलग्ने तदृणमेतावता पूर्वकपाले रवावृणं पश्चिमकपाले धनमिति निर्णीतिर्ज्ञेया, त्रिभोनलग्नेऽधिक इति लक्षणे कदाचित्पूर्वकपालेऽपि धनं पश्चिमकपालेऽऋणमिति सम्भवति तस्माद्युक्तिसहायपक्षोऽसौ न भवति। "मध्यलग्नसमे भानौ हरिजस्य न सम्भव" इत्यादिपक्षो युक्तिमान् दृश्यते। परन्तु यद्यत्पद्यैर्महद्भिरङ्गीकृतं तदस्मदाद्यैरप्येवं व्याख्येयमेवमसकृत्ततो लम्बन संस्कृततिथिर्लग्नं साध्यमेवं पुनरपि यावत्स्थिरं लम्बनं स्याद्यथा सायनं वित्रिभम् ५।२५।१४।५८ सायनोऽर्कः ३।१८।३२।२८ अनयोरन्तरम् २।६।४२।३० अस्य भुजज्या ११०।२ खरामभक्ता लब्धं घटिकादि ३।४० एतन्मध्यलम्बनं तदुन्नतज्यया ११०।३५ गुणितम् ४०५।२८ नखेन्दुभिर्भक्तं लब्धं लम्बनम् ३।२२ रवेः सकाशात्त्रिभोनलग्नमधिकं पश्चिमकपालत्वाच्च दर्शान्ते २९।२४ धनं जातम् ३२।४६ एवमसकृत् ३२।४६ यातैष्यनाडीत्यादिना रविफलम् ३१।६ औदयिके सूर्ये धनं कृतमथवा लम्बनेन संगुण्य षष्ट्या विभज्य लब्धं कलादि समकलसूर्यमध्ये लब्धं धनं कार्यमृणे लम्बने हीनं कार्यमिति कृते तात्कालिकः सूर्यः ३।०।३८।२० सायनः ३।१८।३५।४० दर्शान्तः ३२।४६ अस्माल्लग्नं कार्यम् ९।१४।३९।३७ वित्रिभम् ६।१४।३९।३७ अस्मात् क्रान्तिः ५।५३।४८ याम्या नतांशाः ३०।२८।५७ उन्नतांशाः ५९।३१।३ एषां ज्या १०३।२५ सायनयोर्वित्रिभसूर्ययोरन्तरम् २।२६।३।५७ अस्य ज्या १२९।२२ खराम ३० भक्ता घटिकादिलम्बनं मध्यमम् ३।५९ प्राग्वत्स्पष्टम् ३।२५ पश्चिमकपालत्वात्तिथौ २९।२४ धनम् ३२।४९ उत्तरे तात्कालीनो रविः ३।०।३८।२२ सायनः ३।१८।३५।४२ सायनलग्नम् ९।१४।५७।२१ वित्रिभम् ६।१४।५७।२१ क्रान्तिः ६।०।५६ दक्षिणा नतांशाः ३०।३६।५ याम्या उन्नतांशाः ५९।२३।५५ नतज्या ६१।१ उन्नतज्या १०३।१६ वित्रिभसूर्ययोरन्तरम् २।२६।२१।३९ अस्य ज्या ११९।१६ खराम ३० भक्ता घटिकादिलम्बनम् ३।५८ स्पष्टलम्बनम् ३।२५ जामं स्थिरं लम्बनम् ३।२५ दर्शान्ततिथौ २९।२४ धनं जातः स्थिरो दर्शान्तः ३२।४९ मध्यग्रहणकालोऽयम्।

अथ नत्यानयनम्। नतांशजीवेति नतांशानां ज्या स्वदशांशेनान्विताष्टभक्ता लब्धनतांशानां दिगेव दिग्यस्याः सा नतांशदिक्, यथा स्थिरलम्बनायनमङ्गुलाद्या नतिः स्यात् नतांशदिक् नतांशाः ३०।३।६।५ एषां ज्या ६१।१ इयं स्वद्वादशांशेन ५।५ युक्ता ६६।६ अष्टभिर्भक्ता लब्धम् ८।१५ इयमङ्गुलाद्या नतिः सदैव दक्षिणा, उदयास्ते परमलम्बनं घटिकाचतुष्टयम् ४ परमनतिरङ्गुलाद्या १६।५५ ॥ २,३ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम्।

अत्रोपपत्तिर्मध्यनतांशसममिष्ट नतांशमानं वित्रिभस्य प्रकल्प्य घटिका चतुष्टयं परमलम्बनं च ततो लम्बन साधने मूलोक्ताः क्रियोत्पद्यते।

नत्यानयनम्—अत्रोपपत्तिरनुपातेन यदि त्रिज्यया परमा नतिस्तदा दोर्ज्यका किं ततोऽङ्गुलकरणार्थं त्रिभक्ता तत्स्वरूपं

$$= \frac{४८ \times \text{दृक्षे}}{१२० \times ३} = \frac{१६ \times \text{दृक्षे}}{१५ \times ८} = \frac{१३ \times \text{दृक्षे}}{१२ \times ८}$$ अत उपपन्नम्।

प्रकारान्तरेण लम्बनसाधनम्—

समाद्रयः कुमनवोऽष्टधृती नवेन्दुदस्राः शरत्रियमलाः खनिजाश्च पिण्डाः।
षट्त्र्यश्विनो जिनयमा द्विशती त्रिभोनलग्नार्कयोर्विवरभागमितेर्भवाग्नाः॥४॥
पिण्डो गतस्त्वगतयातवियोगनिघ्नशेषेशभागरहितः सहितश्च भोग्ये।
ऊनाधिके खरसहृत्खलु लम्बनं वा प्राग्वत्स्फुटः सकृदतो नतिरन्यलग्नात्॥५॥

सुमतिहर्षः—सप्तेति। ७७।१४१।१८८।२१९।२३५।२४०।२३६।२२४।२०० इत्यादयो नव लम्बनपिण्डा एकादशैकादशान्तरितभागानामसकृत्साधितलम्बनस्य पानीयपलानीत्यर्थः। यदा त्रिभोनलग्नार्कयोरन्तरं षट्षष्टिभागा भवन्ति तदा परमं लम्बनमसकृत्कर्मणा साधितं घटीचतुष्टयात्मकमुपचयात्मकमुत्पद्यते ततः परमोपचयात्मकमेकादशभिरंशैरष्टौ खण्डकानि भवन्ति तेन नवमः पिण्डो नवत्यंशा द्वितीयमुक्तम्, अथ गणितागतपर्वान्तिकालीनत्रिभोनलग्नार्कयोर्विवरस्यान्तस्य भुजभागेभ्यो भवैरेकादशभक्तेभ्यो यल्लब्धं तत्संख्यः पिण्डो गतः, उक्तं च करणप्रकाशे—

"वित्रिभलग्नार्कान्तरभुजभागोनघ्नरदभुवो भक्ता ॥
भाष्टककुभिः सकृद्वा लम्बननाड्यः स्फुटाः प्राग्वत् ॥

अथ गतगम्यपिण्डान्तरेण गुणिताच्छेषादेकादशभिर्भक्तेन गतपिण्डो युता गम्ये पिण्डेऽधिके सति गम्ये पिण्डे हीने रहितः एवं संस्कृते गते पिण्डे खरसैर्भक्ते लब्धं मध्यमलम्बनं प्राग्वत्, तदुन्नतज्यानिहतं नखेन्दुभिर्भक्तमित्यादिना कार्यमेवं सकृदेवैक वारमपि भवति, अतो लम्बनसंस्कृततिथ्यन्तकालीनलग्नान्नतांशादिक्रमेण नतिः साध्या यथा दर्शान्तकालीनवित्रिभलग्नार्कयोरन्तरम् २।६।४२।३० भुजभागाः ६६ एकादशभक्ता लब्धं ६ षष्ठो गतः २।४० गम्यः २३६ पिण्डयोरन्तरेण ४ शेषांशादि ०।४२।२७ गुणितम् २।५० एकादशभक्तं लब्धेन ०।१५।२७ गतपिण्डे गम्यपिण्डस्य हीनत्वाद्धीनम् २३९। ४४।३३ षष्टिभक्ते लब्धं मध्यमलम्बनम् ३।५९ वित्रिभलग्नोत्पन्नोन्नतज्यया ११०।३५ गुणितम् ४४०।२९ नखेन्दुभक्तं जातं घट्यादिलम्बनं सकृत्स्थिरं रवेः सकाशादधिकं वित्रिभं तस्माद्धनम् ३।४० दर्शान्ततिथौ २९।२४ युक्तं जातः स्थिरो ग्रहणस्य मध्यकालः ३३।४ नतिरन्यलग्नादिति मध्यग्रहणसमयिकः ३३।४ सूर्यः ३।०। ३८।३७ लग्नम् ९।१६।२६।७ वित्रिभम् ६।१६।२६।७ क्रान्तिः ६।४६।३७ नतांशा याम्याः ३१।९।४० ज्या ६१।५८ स्वद्वादशांशेन ५।९ युक्ता ६७।७ अष्टभक्ता ८।२३ इयं नतिः सकृत्प्रकारेण लम्बने कृत उपयोगिनी ज्ञेया ॥ ५ ॥

सुधाकरः—पिण्डैर्यल्लम्बनमागच्छेत्तत्प्राग्वत् स्फुटं कार्यमर्थादुन्नतज्या गुणं खार्कैर्भक्तं कर्त्तव्यं शेषं स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । असकृतकर्म्मोपसंहारार्थं स्थूला अपि तारतम्यात्पिण्डाः पठिताः ।

स्थित्यादिसाधनम्—

स्पष्टोऽत्र बाणो नति संस्कृतः स्याच्छन्नं ततः प्राग्वदतः स्थितिश्च ।
स्थित्योनयुक्ताद्गणितागताच्च तिथ्यन्ततो लम्बनकं पृथक्स्थम् ॥ ६ ॥
स्वर्णं च तस्मिन्प्रविधाय साध्यस्तात्कालिकः स्पष्टशरः स्थितिश्च ।
तयोनयुक्ते गणितागते तत्स्वर्णं पृथक्स्थं मुहुरेवमेतौ ॥ ७ ॥

सुमतिहर्षः—स्पष्ट इति स्थिरलम्बनसंस्कृततिथ्यन्तकालीनसपातचन्द्राज्जातः शरो नत्या संस्कृत एकदिक्त्वे युतिः भिन्नदिक्त्वेऽन्तरं स स्पष्टशरः स्यात्, स्पष्टशरेणैव प्राग्वच्छन्नं साध्यं स्थितिश्च साध्या, यथा सकृतप्रकारेण तिथ्यन्तः ३२।४९ तत्समयिकश्चन्द्रः ३।१।२।४६ पातः २।२६।२१।३८ अनयोर्योगः ५।२७।४३।२४ भुजः ०।२।१६।३६ ज्या ४।४६ त्रिघ्नी १४।१८ कृता ४ प्ता ३।३४ शरोऽङ्गुलादिरुत्तरः नतिर्याम्या ८।१५ भिन्नदिक्त्वात्तयोरन्तरं जातः स्पष्टशरो याम्यः ४।४१ ॥

अथ बिम्बानयनम् । बिम्बं विधोरिति चन्द्रगतिः ८१९।४ युगाद्रि ७४ भक्ता जातं चन्द्रबिम्बम् ११।४ अङ्गुलादिरविगतिः ५६।५८ द्विघ्नी ११३।५६ शिवा ११ प्ता रविबिम्बम् १०।२१ सूर्यग्रहे छाद्यः सूर्यः १०।२२ छादकश्चन्द्रः ११।४ अनयोरैक्यार्द्धम् १०।४२ शरेण ४।४१ हीनम् ६।१ इदं स्थगितं छन्नं विश्वाकरणार्थं छन्नं ६।१ नख २० गुणम् १२०।२० छाद्येन १०।२१ भक्तं विश्वा ११।३७ अथ स्थित्यानयनम् द्विघ्नाच्छरात् ९।२२ छन्नेन ६।१ युता १५।२३ हतात् ९२।३३ मूलम् ९।३७ खाष्टेन्दु १८०।१७३१।० चन्द्रार्कयोर्गत्यन्तरेण ७६२।६ भक्तं घटिकादिकं स्थित्यर्द्धम् २।१६ प्रायशः सूर्यग्रहणे विमर्दाभावः ॥ ७ ॥

स्पर्शमोक्षयोः साधनम्—

स्यातां स्फुटौ प्रग्रहमुक्तिकालौ सकृत्कृते लम्बनके सकृत्स्नः ।
तन्मध्यकालान्तरगे स्थिती स्फुटे शेषं शशाङ्कग्रहणोक्तमत्र हि ॥ ८ ॥

सुमतिहर्षः—सकृत्स्थित्येत्यादिना गणितेन तिथ्यानयनप्रकारेणागतस्तिथ्यन्तः स्पर्शकाले साध्ये स्पर्शस्थित्योनः कार्यः मोक्षे साध्ये मोक्षस्थित्या युक्तः कार्यस्तादृशात्तिथ्यन्तात्पूर्वोक्तप्रकारेण लम्बनं संसाध्यं द्विः स्थाप्यः एकस्मिन् स्थितिलम्बनं तस्मिन् तिथौ हीनयुक्ते तिथ्यन्ते स्वमृणं प्राग्वद्विधेयं तस्मात्तात्कालिकः स्पष्टः शरः स्थितिश्च कार्या तया स्थितया स्थित्या स्पर्शमोक्षयोरूनयुक्ते गणितागततिथ्यन्ते द्वितीयस्थानस्थितं लम्बनं स्वमृणं कार्यं तस्मात्पुनर्लम्बनं स्फुटशरः स्थितिश्चेत्येवमसकृद्यावदवशेषः स्यादेवं ग्रहमुक्तिकाले स्फुटौ स्तः, यदि सकृद्विधिना लम्बनं तदा सकृदेवायातौ प्रग्रहमुक्तिकालौ स्तः,

तयोः स्पर्शमुक्तिकालयोः मध्यग्रहणकालयोर्येऽन्तरे तद्गते स्पर्शमोक्षस्थिती स्फुटौ स्तः, स्पर्शकालमध्यकालयोरन्तरं स्पर्शस्थितिः मोक्षकालमध्यकालयोरन्तरं मोक्षस्थितिरित्यर्थः ।

यथा मध्यस्थित्या २।१६ गणितागततिथ्यन्तः २९।२४ स्पर्शत्वादूनः २७।८ एतत्कालीनः सूर्यः ३।०।३२।१९ इष्टकाले २७।८ सायनः ३।१८।३०।१९ सुखादुत्क्रमलग्नं सायनम् ८।१३।१७।५ वित्रिभम् ५।१३।१७।५ क्रान्तिः ६।४०।५८ नतांशाः २७।५४।११ उन्नतांशाः ६२।५।४९ ज्या ११४।२ त्रिभोनलग्नार्कयोरन्तरम १।२४।४६।४६ ज्या ९७।४४ खरामभक्ता ३।१५ मध्यमलम्बनं स्पष्टलम्बनम् ३।५ धनं पृथगेवं लम्बनं स्थित्यूनं गणितागतेन २७।८ धनं जातम् ३०।१३ स्थित्यर्थं यथा ३०।१३ एतत्कालीनसूर्यः ३।०।३५।५५ नत्यर्थं वित्रिभं सायनम् ५।२९।३३।३७ नतांशाः २४।२४।३३ दशमनतज्या ४९।२२ नतिर्याम्या ६।४१ एतत्कालीन ३०।१३ श्चन्दः ३।०।४६।१४ पातः २।२६।२१।३१ योगः ५।२७।७।४५ शरः ४।३१ सौम्यः नतिसंस्कृतः स्पष्टशरो याम्यः २।१० मानयोगार्द्धम् १०।४२ शरेण २।१० हीनम् ८।३२ छन्नम् । शरात् २।१० द्विघ्नात् ४।२० छन्नेन ८।३२ युत १२।५२ हतात् १०९।४७ मूलम् १०।२९ स्थितिः २।२८ अनया गणितागततिथ्यन्तः २९।२४ स्पर्शत्वाद्धीनः २६।५६ अस्मिन्पृथक्स्थापितम् ३।५ धनं जातं स्थूलस्पर्शकालः ३०।१२ एवमसकृत्करणार्थं तात्कालीनसूर्यः ३।०।३५।४४ सायनः ३।१८।३३।४० सायनवित्रिभम् ५।२८।३०।१६ क्रान्तिः ०।३६।५ सौम्या नतांशाः २३।५९।४ उन्नतांश ६६।०।५६ ज्या १०९।२४ वित्रिभार्कयोरन्तर २।९।५७ ज्या ११२।५७ लम्बनम् ३।४५ इदं पृथक् मध्यमसायनस्थित्यूनस्तिथ्यन्तः २७।८ धनं जातम् ३०।३३ स्थित्यर्थम् ३०।३३ एतत्कालीनरविः ३।०।३६।१४ चन्द्रः ३।०।५७।४७ पातः २।२६।२१।३२ सायनसूर्यः ३।१८।३३।३४ सायनवित्रिभम् ६।१।३२।३५ नतांशा याम्याः २५।१२।२३ उन्नतांशा ६४।४७।३७ नतिः ६।५३ सपातचन्द्रः ५।२७।१२।१९ शरः सौम्यः ४।२४ नतिसंस्कृतस्पष्टशरः २।२९ छन्नम् ८।२३ स्थितिः २।२८ अनयोनतिथ्यन्ते २६।५६ पूर्वागतं लम्बनम् ३।२५ धनम् ३।२१ अथासकृत्कर्मणार्थम् ३०।२१ एतत्कालीनसूर्यः ३।०।२६।२ वित्रिभम् ६।०।२१।३४ नतांशा याम्याः २४।४३।४९ उन्नतांश ६५।१६।११

ज्या १०८।४४ वित्रिभार्कयोरन्तरम् २।११।४८।१२ ज्या ११३।५४ लम्बनम् ३।४७ स्थिरलम्बनम् ३।२५ पृथगिदं मध्यग्रहणस्थित्यूने दर्शान्ते २७।८ धनं जातम् ३०।३३ स्थित्यर्थम् ३०।३३ एतत्कालीनवित्रिभम् ६।१।३२।३५ नतिः ६।५ सपातचन्द्रः ५।२७।१२।५९ शरः ४।२४ स्पष्टशरः २।१९ स्पार्शिको दक्षिणः स्थितिः २।२८ अनयोनतिथ्यन्ते २६।५६ पृथक्स्थं लम्बनं धनं २।२५ जातः स्थिरस्पर्शकालः ३०।२१ स्थिरमध्यग्रहणकालः ३२।४९ अनयोरन्तरं स्पष्टा स्पर्शस्थितिः २।२८ अथ सकृल्लम्बनेन स्पर्शकालः साध्यते । यथा मध्या मध्यस्थितिः २।१६ गणितागततिथ्यन्तः २९।२४ ऊनः २७।८ एतत्कालीनसायनसूर्यः ३।१८।३०।९ सायनवित्रिभम् ५।१३।१७।५ अनयोरन्तरम् १।२४।४६।५६ भागाः ५४।४६।५६ भवाप्ता ४ गतपिण्डः २१९ गतगम्यपिण्डयोरन्तरेण १६ शेषांशादिः १०।४६।५६ गुणितम् १७२।२८।१६ गतपिण्डे २१९ गम्यपिण्डस्याधिकत्वाद्युतः २३४।४० षष्टिभक्ता ३।५४ उन्नतज्यया ११४।२ गुणितम् ४४४।४३ नखेन्दुभक्तम् ३।४२ स्पष्टं सकृल्लम्बनम् ३।४२ अनेन स्थित्यूनतिथ्यन्तः २७।८ धनम् ३०।५० स्थिरः स्पर्शकालः । एतत्कालीनलग्नान्नतिः साध्या, एतत्कालीनसपातचन्द्राच्छरः साध्यः ।

अथ मोक्षकालानयनम्—मध्यस्थित्या २।१६ गणितागततिथ्यन्तो २९।२४ युक्तः ३१।४० एतत्कालीनोऽर्कः ३।०।३७।१८ सायनः ३।१८।३४।३८ सायनवित्रिभम् ६।८।८।४ क्रान्तिर्याम्या ३।१६।४२ नतांशः २७।५१।५२ उन्नतांशाः ६२।८।८ ज्या १०५।५५ वित्रिभार्कयोरन्तरम् २।१९।३४।२६ ज्या ११७।४७ लम्बनम् ३।५५ स्पष्टलम्बनम् ३।२७ पृथक् स्थितियुक्तगणितागततिथ्यन्ते ३१।४० युतं जातम् ३५।३५।७ एतत्कालीनरविचन्द्रपाताः सूर्यः ३।०।४।३४ चन्द्रः ३।१।५४।१३ पातः २।२६।२१।४६ सायनोऽर्कः ३।१८।३७।५४ रात्रिगतघटी १।४१ समयिकं लग्नम् ९।२८।३३।५७ वित्रिभम् ६।२८।३३।५७ क्रान्तिर्याम्या ११।८।४८ नतांशाः ३५।३३।५७ उन्नतांशाः ५४।१६।३ नतिर्दक्षिणा ९।३५ तिथिः २४ अथ शरार्थं सपातचन्द्रः ५।२८।१५।५९ शरः सौम्यः २।५४ नतिसंस्कृतस्पष्टशरो याम्यः ६।४१ छन्नम् ४।१० शरात् ६।४१ द्विघ्नात् १३।२२ छन्नायुतहतान्मूलम् ८।२३ स्थितिः १।५८ अनया गणितागततिथ्यन्तः २९।२४ युतो जातः

३१।२२ अस्मिन् पृथक् स्थापितं लम्बनम् ३।२७ युतं जातम् ३४।४९ स्थूलो मोक्षकालः, असकृत्कर्मणार्थमेतत् ३४।४९ कालीनः सूर्यः ३।१८।३७।३७ रात्रिगतघटी १।२३ समयिकं सायनवित्रिभम् ६।२६। ४७।२७ क्रान्तिर्याम्या १०।३०।२० नतांशा ३५।५।११ उन्नतांशा ५४।१४।४९ एषां ज्या ९७।५३ वित्रिभार्कयोरन्तरम् ८।९।५० अत्र देशे रात्रौ मोक्षस्तेन परकीयो मोक्षदर्शनकालः साध्यः, अथ लम्बनार्थं वित्रिभलग्नार्कयोरन्तरस्य ३।८।१९।५० ज्या करणार्थं भुजः २।२१। ५०।१० अत्रानुदितोऽपि यतो जीवा भुजकोटी विना न भवति उक्तं च ग्रन्थान्तरेऽपि यत्र जीवा विहिता तत्रानुक्तमपि भुजं विधायैव जीवा कार्या १२८।२२ खरामैर्भक्ता लम्बनम् ३।५६ पूर्वलम्बनं स्पष्टम् ३।१३ रवेः सकाशात्त्रिभोनमधिकं तेनेदं धनमिदं पृथक् मध्यस्थितियुक् तिथ्यन्ते ३०।४० युते जातम् ३४।५३ अथ स्थित्यर्थम् ३४।५३ एतत्कालीनरविः ३।०।४०।२१ चन्द्रः ३।१।४९।५६ पातः २।२६।२१।५७ शरोऽङ्गुलादिः २।५० नत्यर्थमेतत्कालीनसायनवित्रिभम् ६।२७।११।७ क्रान्तिर्याम्या १०।३९।० नतांशा याम्याः ३५।१४।९ उन्नतांशाः ५४।४५।५१ नतज्या ६८।५४ नतिः ९।१९ नतिसंस्कृतशरः ६।२९ छन्नम् ४।१३ द्विघ्नाच्छरात् १२।५८ छन्नयुताहतात् ५३८।२२ स्थितिः १।५८ अनया गणितागततिथ्यन्तः २९।२० युतः ३१।२२ अस्मिन्पृथक्स्थितं लम्बनम् ३।१२ धनं जातम् ३४।३५ असकृत्साध्यमतः कालाद्वित्रिभं कृत्वा पूर्ववल्लम्बनं साध्यं पृथक् स्थाप्यमेकत्रस्थलम्बनं मध्यस्थितियुक्ते गणितागततिथ्यन्ते विधेयम्, अथाधिके धनं हीने हीनमेवं लम्बनसंस्कृतकालात्पूर्ववत्स्थितिमानीय तथा गणितागत तिथ्यन्ते युक्तं कार्यं तस्मिन्ननष्टलम्बनं पूर्ववद्विधेयं संस्थितो मोक्षकालस्थिरमध्यग्रहणकालयोरन्तरं स्पष्टमोक्षस्थितिः। अथ सकृत्प्रकारार्थं मध्यस्थितियुक्तगणितागततिथ्यन्तः ३१।४० एतत्कालीनवित्रिभसूर्यान्तरम् २।१९।३४।२६ अंशाः ७९ भवाप्ता ७ पिण्डः २३६ शेषम् २।३४।२६ लम्बनम् ३।५३ उन्नतज्यया १०५।५५ गुणितं नखेन्दु १२० भक्तम् ३।२५ स्पष्टं सकृत्पूर्ववत्स्थितिः ३१।४० युक्तम् ३५।५ सकृत्प्रकारेण स्थिरो मोक्षकालः, अस्मान्नतिः शरश्च साध्यः। अथ स्पर्शकालीनलम्बनं यथा दिनोदयाद्गतघटी ३०।२१ समये स्पर्शः, अत्र द्युदलगतघटीनामित्यादिना नतं यथा दिनदलम्

१६।४३ गतघटी ३०।२१ अनयोरन्तरं नतम् १३।३८ पश्चिमे खाङ्का ९० हतम् १२२७। दिनार्द्धेन भक्ता ७३।२३।५९ नतांशाः एषां ज्या ११४।४३ अनयाक्षांशाः २४।३५।९ गुणिताः २८२०।१९।३६ त्रिज्यया लब्धम् २३।३०।९ पश्चिमनतत्वाद्दक्षिणे इदमाक्षजं वलनम् २३।३०।९॥ अथायनवलनम्। स्पर्शकालीनसूर्यः ३।०।२६।२ सायनः ३।१८।३३।२२ भुजः २।११।२६।३८ कोटिः ०।१८।३३।२२ ज्या ३८।६ बाणै ५ भक्ता लब्धम् ७।३७।१२ सायनसूर्यो दक्षिणायने तेन दक्षिणाक्षजम् २३।३०।९ दक्षिणायनम् ७।३७।१२ अनयोरेकदिक्त्वाद्योगः ३१।७।२१ याम्योऽस्य ज्या ६१।५४ अनया मानैक्यार्द्धम् १०।४२ गुणितम् ६६२।१९ त्रिज्यया १२० भक्तं लब्धं स्पष्टवलनं याम्यम् ५।३२ प्राग्ग्रासमोक्षे विपरीतदिक्क इति रवेः स्पर्शवलनमुत्तरे ग्रस्तान्मोक्षकालीननते तत्रादौ नतानयनम्—

रात्रिशेषगत इत्यादिना रात्रिगतघटी १।९ दिनदलयोर्योगः १७।५२ पश्चिमनतं खाङ्काहतम् १६०८ दिनार्धे न १६।४३ भक्तं लब्धा नतांशाः ९३।५।३० भुजः २।२३।५४।३० ज्या ११९।४१ अक्षांशैः २४।३५।९ गुणिता २९।४२।३० त्रिज्यया १२० भक्ता लब्धम् २४।३१ आक्षजं वलनं याम्यम् २४।३१ उदयाद्गतघटी ३४।३५ समयिकः सूर्यः ३।०।४५।४१ सायनः ३।१८।३७।२४ भुजः २।११। २२।३६ कोटिः ०।१८।३७।२४ ज्या ३८।१४ पञ्चभक्ता ७।३९ जातमायनं वलनं याम्यं दक्षिणायनत्वाद्दक्षिणयोरायनाक्षजयोरेकदिक्त्वाद्योगोंऽशाः ३२।१० ज्या ६३।४१ मानैक्यार्द्धेन १०।४२ गुणिता ६८१।२४ त्रिज्यया १२० भक्तं लब्धमङ्गुलादिस्पष्टमोक्षवलनम् ५।४० याम्यम् ॥ ८ ॥

ग्रहणे रविचन्द्रयोः वर्णज्ञानम्—

अर्कांशकोऽर्कस्य विधोर्नृपांशो नादेशनीयः खलु खण्डितोऽपि॥
अल्पार्द्धसर्वग्रहणे शशी स्याद्धूम्रोऽसितो बभ्रुरिनस्तु कृष्णः॥ ९॥

सुमतिहर्षः—अर्कबिम्बमानस्य द्वादशांशतुल्योऽर्कग्रासो नादेशनीयः, विधुबिम्बमानषोडशांशतुल्यो विधुग्रासो न वक्तव्यः। अल्पग्रहणे चन्द्रो धूम्रवर्णः स्यात्, अर्द्धग्रहणे कृष्णः, सर्वग्रहणे पिशङ्गः, सूर्यस्तु सर्वदा सर्वग्रहणे कृष्ण एव, सूर्यग्रहणं विंशतिविश्वाधिकं न

भवति ॥ ९ ॥ करणकुतूहलवृत्तावेतस्यामिष्टदेवताकृपया । गणककुमुदकौमुद्यां व्याख्येयं रविग्रहे नियतम् ॥

इति करणकुतूहलवृत्तौ सूर्यपर्वाधिकारः समाप्तः ॥ ५ ॥

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ॥
विदग्धबुद्धिवल्लभे रविग्रहस्य साधनम् ॥ ५ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थं वासना सिद्धान्तोक्तैव ।

श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणे वरा ।
सूर्यपर्वगणितस्य वासना सूक्ति युक्ति सहिताऽत्रसङ्गता ॥

इति करणकुतूहले वासनाविभूषणे सूर्यग्रहणाधिकारः ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः सूर्यग्रहणाधिकारः पंचमः ।

उदयास्ताधिकारः—६

गुरोः उदयास्तसाधनम्—

इष्टोऽह्नां निचयोऽब्ददिग्लवयुतः पञ्चाभ्रभूर्वजितो ।
भक्तो नन्दनवाग्निभिस्तिथिमितैः शेषैर्गुरोरुद्गमः ॥
अस्तो वेदगजाग्निभिस्तदधिकैरूनैर्गतैर्ष्यैर्दिनै-
स्तात्कालार्कघटीफलं च तिथिवत्सूर्याहतं शेषकैः ॥ १ ॥

राशिभ्यामुदये युताह्निकरावस्ते त्रिभिः संयुता-
द्वच्चोक्तार्कघटीफलं च खगुणैः सूक्ष्मं धनर्णं तथा ॥
संक्रान्तेरुदयात्खवाग्निरहितात्तिथ्याहतात्स्वोदये-
नाप्तं तच्च गुरूदये धनमृणं चास्ते तु तत्सममात् ॥ २ ॥

सुमतिहर्षः—इष्टोऽहर्गणः करणगताब्दानां दशमांशेन युतः पञ्चाभ्रभूर्वजितः पञ्चोत्तरशतेन १०५ रहितः नन्दनवाग्निभि ३९९ र्भक्तो लब्धस्य प्रयोजनाभावाल्लब्धं त्याज्यं शेषैस्तिथिमितैः पञ्चदश १५ मितैः गुरोरुदयो ज्ञेयः, वेदगजाग्निभिश्च ३८४ अधिकैः शेषैर्गतावुदयास्तौ तदूनैः शेषैरेष्यौ भाविनौ । अथ शेषस्पष्टीकरणं तात्कालार्क इति तस्मिन्काले यस्मिन् राश्यंशेऽर्को भवति तस्य घटीफलं सूर्याहतं द्वादशगुणं षष्टया विभज्य दिनादि कृत्वा शेषैस्तिथिवद्धनमृणं वा कार्यं संक्रान्तिषु पक्षयोरर्कघटीफलं यथा "कर्के मृगे त्रयः षट्कं ३।६ सिंहे कुम्भे गजा दश ८।१० कन्या मीने भवारुद्राः ११।११ तुला मेषे शिवा दश ११।१० वृषेऽलौ च गजास्तर्काः ८।६ धनुर्युग्मे त्रिशून्यकम् ३।० रविनाड्यो मृगादौ स्वकर्कादौ च ऋणं क्रमात्" इति ॥

अर्कस्य पञ्चदशभागाः कार्या मन्दफलस्यांशानां नाड्यः एताः सिद्धा घटिताः अत्र घटिका द्विगुणा नवभक्ता भागा भवन्ति, एते मध्यमरविगतिविवरेण भक्तास्ते दिनाधिकेनाधिकास्तदत्र लाघवार्थं द्वादश १२ गुणिता नाड्यः षष्ट्या यदाप्यते ते दिनानि भवन्ति, अत्र सुबुधेरनुकम्पया सुखार्थं शेषार्थमत्र वच्चोक्तार्कघटीफलमिति मुहुर्मुहुरुक्ताः कर्कमकरयोः प्रथमार्द्धे तिस्रो घटिकाः ३ षडुत्तरार्द्धं एवं सर्वत्र कर्कादावृणं मकरादौ धनमित्यर्थः । यतः शेषस्फुटीकरणमुदये

जाते राशिभ्यां राशिद्वयेन युतात्सूर्यादस्ते राशित्रयेण युताद्रवेर्ब्रह्माचार्योक्तकर्मघटीफलं ग्राह्यं तच्च खगुणै ३० र्गुणितं तथा धनर्णं शेषे ऋणं याम्ये सौम्ये धनमित्यर्थः। पुनः स्पष्टीकरणम्-अथ संक्रान्तेरुदयात्सूर्याक्रान्तराश्युदयात्त्रिप्रश्नोक्तात्खखाग्नि ३०० भिस्त्रिशतैर्हीनात्तिथिभिः पञ्चदशभि १५ र्गुणितात्स्वोदयेन संक्रान्त्युदयेन भक्ताद्यल्लब्धं तच्छेषे गुरोरुदये धनं कार्यम्।

अथास्तसाधनम्—अस्ते तु संक्रान्तेः सप्तमराश्युदयात्खखाग्नि ३०० रहिताद्द्विप्रकारेणानीतं फलमृणं शेषे कार्यं ततः स्पष्टशेषस्योदये पञ्चदशभिः १५ सहान्तरमितैर्गम्योऽधिकैरिष्टदिनाद्गतोदयः, अस्तो वेदगजाग्निभिः सहान्तरं ततः प्राग्वज्ज्ञेयं। यथा शाके १५४३ लौकिकाषाढकृष्णे ४ भौमे गताब्दाः ४३८ अधिमासाः १६२ अहर्गणः १६००७४ अयं गताब्दानां ४३८ दशांशेन ४३।४८ युतः १६०११७।४८ पञ्चाभ्रभूभि १०५ र्हीनः १६००१२।४८ नन्दनवाग्निभि ३९९ र्भक्ता लब्धस्य न प्रयोजनं शेषम् १३।४८ पञ्चदशभ्यो हीनस्तेन गम्योदयः।

शेषस्पष्टीकरणम्-अथ वृषस्य द्वितीयपक्षे रविस्तेनार्कघटीपलं ६ द्वादशगुणम् ७२ षष्ट्या लब्धं दिनादि १।१२ मकरादित्वाच्छेषम् १३।४८ धनं जातम् १५।० अथ रविः १।२९ उदयत्वाद्द्विराशि २ युतं ३।२९ तस्यार्क घटीफलं ६ त्रिंशद्गुणितम् १८०० षष्ट्या भक्तम् ३।०।० लब्धं दिनादि कर्कादित्वाच्छेषे १५।० ऋणं जातम् १२।०।० पुनः संक्रान्तेरुदयः २५६ खखाग्निभि ३०० र्हीनोऽत्र हीनो न भवति तेन शोध्यो न शुद्ध्येद्यदा तदा कार्यं व्यस्तविशोधनमिति तेनोदयः २५६ खखाग्नि ३०० शुद्धः ४४ तिथिगुणः ६६० वृषोदय २५६ पलैर्भक्तं लब्धं दिनादि ३।३४।४१ गुरूदयत्वाद्धनं शेषं परं व्यस्तं तदुक्तमिति शेषम् १५।०।० ऋणे कृते शेषम् ९।२५।१९ स्पष्टं जातं पञ्चदशभिः १५ सहान्तरम् ५।३४।४१ एभिर्दिनादिभिरिष्टदिनात्पञ्चदशभ्यः शेषस्योनत्वाद्गम्य एवमस्तसाधने श्लोकोक्तवत्क्रिया ॥ २ ॥

सुधाकरः — तत्कालार्क घटीफलं वव्वोक्तार्क घटीफलं अत्र यदि तत्कालार्कघटीफलं द्वादशगुणं कृत्वा संस्क्रियते तदा सूक्ष्ममन्यथा स्थूल मिति ज्ञेयम्। वव्वोक्तं घटीफलं च—

कर्के मृगे त्रयः षट्कं सिंहे कुम्भे गजा दश।
कन्यामीने भवारुद्रास्तुलामेषे शिवा दश॥

वृषेऽलौ च गजास्तर्का धन्वियुग्मे त्रिशून्यकम्।
रविनाड्यो मृगाद्येस्वं कर्क्यादौ तदृणं क्रमात्॥

एतत घटीफलं स्थिरं मन्दोच्चं प्रकल्प्य प्रत्येकराशिस्थे रवौ मन्दफलमानीय तत्कला द्वादशभक्ता फलं घटिकादिकं कृत्वा रविराशिस्थाने स्थापितं यथा रविः = १० केन्द्रम् = ५ स्व ततः पूर्वविधिना मन्दफलं कलादिकं = ६५ द्वादश भक्तं लब्धं ६ स्व, एवं सर्वेषा ज्ञेयं शेषं स्पष्टार्थम्॥

अत्रोपपत्तिः। कल्पे गुरोरव्योर्युतिर्भगणान्तरसमा ततोऽनुपातोभगणान्तरेण कुदिनानि तदा युत्यैकया किं जातमेकयुतिकालमानं $= \frac{\text{ककु}}{\text{भअं}}$

$$= ३९८ + \cfrac{१}{१+\cfrac{१}{८+\cfrac{१}{२०+\cfrac{१}{१+\cfrac{१}{३+\cfrac{१}{१+\cfrac{९३३०५}{७६६२९४}}}}}}}$$

अस्यासन्न मानानि = ३९९, $३९८\frac{८}{९}$, $३९८\frac{१६१}{१८१}$ इत्यादि, अत्राचार्येणे ३९९ दं गृहीतं तेन दशवर्षे वास्तवासन्नमानाभ्यां युतेरग्राच्छेषदिनमाने ६२, ६१ अतो दशभिर्वर्षैरेकदिनमधिकं कर्त्तव्यं ग्रन्थारम्भात् पञ्चशून्यैकदिनेषु युतिकालो जातस्ततस्ताः संख्या ऊनीकृताः। अथ ३९९ अभिस्तष्टे दिनगणे शेषमानं यदि पञ्चदश तदा गुरोरुदयो यतो गुरोः शक्रकालांशास्तद्दिनानि पञ्चदश भवन्ति, एवं युतिकालात्पूर्वं पञ्चदशदिने गुरोरस्तः अथवा पञ्चदशदिनोन युतिकालदिनसमे शेषे। परं तदा गुरुर्मन्दफलेनान्तरितो भवति अथ रवेर्मन्दोच्चं = २।१५° गुरोः = ६ अस्ते गु = २ + १५° गु म के = ६ − १५° − र = ५ + १५° − र = ८ + १५° − (र + ३) अस्य भुजः = २ + १५° − (र + ३) अतोऽर्क-

घटीफलं सत्रिभार्केणात्र उदये तु गु=र−१५', गु म के=६+१५'−र=८+१५'−(र+२) अस्य भुजः=२+१५'−(र+२) अतस्तत्र सद्विभार्केण साधनीयं तदा रविसमे मन्दफले गुरोर्घटीफलं भवेत् तद्रविपरममन्दफलेन भक्तं गुरुपरममन्दफलेन गुण्यं ततो द्वादशगुणं गुरुमन्दफलं कलादिकं स्यात्। तत्स्वरूपं गु म फ $= \frac{\text{र घ फ} \times ५ \times १२}{२} =$ ३० र घ फ इदं केन्द्रगत्या भक्तं दिनं $= \frac{३० \times \text{र घ फ}}{५५}$ षष्टिगुणं घटी= ३० र घ फ इदं तत्र संस्कार्य्यं अथ तदा संक्रान्तेरुदयो ज्ञातव्यः क्षेत्रकलाविषुवकलान्तरम्=६ उ−१८०० अतोऽनुपातो यदि उदयमानपलैस्तदन्तरं तदा कालांशपलैः किं लब्धं कलात्मकमन्तरं तत्षष्टिभक्तं दिनादिकं स्यात्तत्स्वरूपम् $= \frac{६(\text{उ}-३००) \times १५ \times १०}{\text{उ} \times ६०} = \frac{१५(\text{उ}-३००)}{\text{उ}}$ अत्र स्वल्पान्तरात् तिथिमिताः कालांशा गृहीतास्तत उपपन्नं सर्वमन्यत् सरलम्।

शुक्रस्योदयास्त साधनम्—

पञ्चेशोनगणोऽब्दभूपलवयुग्वेदाष्टबाणैर्हृतः
पश्चात्षट्कृतिभिर्नगाष्टयुगलैः शुक्रोदयास्तौ क्रमात्॥
शेषैः प्राग्नगगोयमैर्गजयुगप्राणैस्तदानीं च य-
स्तिग्मांशोरुदयः खखाग्निरहितः पश्चात्तु तत्सप्तमः॥ ३॥
क्षुण्णःपञ्चगुणैः शरैश्च विषयैरङ्गाग्निसंख्यैः क्रमाद्भू-
क्तस्तेन च भोदयेन फलयुक्प्राक्छेषकैरुद्गमः॥
ज्ञेयश्चास्तमयः फलेन रहितैः शोध्यं न शुध्येद्यदा
कार्यं व्यस्तविशोधनं धनमृणं व्यस्तं तदुक्तं तदा॥ ४॥

सुमतिहर्षः—अहर्गणः पञ्चेशोनः पञ्चदशाधिकशतेन ११५ हीनोऽब्दकरणताब्दानां भूपलवेन षोडशांशेन १६ युक्तो वेदाष्टबाणैश्चतुरशीत्यधिक पञ्चशतेन ५८४ भक्तो लब्धस्य प्रयोजनाभावः शेषैः षट्कृतिभिः ३६ षड्त्रिंशतासमैः पश्चादुदयः, नगाष्टयुगलैः २८७ पश्चादस्तमयः, नगगोयमैः २९७ शेषैः प्रागुद्गमः, गजयुगप्राणैः ५४८ शेषैः प्रागस्तमय इति।

अथ शेषस्पष्टीकरणे तदानीं यस्तिग्मांशोरुदयः यस्याः संक्रान्तौ रविर्भवति तस्य पलानीत्यर्थः। खखाग्निभिः ३०० हीनाः कार्याश्चेद्यदि पश्चादुदयास्तौ तदा तत्समुदयः खखाग्निभिः ३०० हीनः कार्यस्ततः क्रमात् पश्चिमोदये साध्यमाने पञ्चगुणैः पञ्चत्रिंशद्भिः ३५ गुणनीयाः पश्चादस्ते शरैः ५ पञ्चभिः प्रागुदये विषयैः पञ्चभिः ५ प्रागस्तेऽङ्गाग्निसंख्यैः ३६ षट्त्रिंशद्भिर्गुणनीयास्ततः स्वोदयेन भजेत् फलयुक् शेषकैरिति फलेन युक्ताश्च ये प्राक्शेषाः पूर्वागतशेषकैरुद्गमो वाच्यः फलेन रहितैः प्राक्शेषैरस्तमयो वाच्यः। अथ विशेषमाह—"शोध्यमङ्कं खखाग्नि ३०० लक्षणमुदये न शुध्येत्तदा व्यस्तशोधनं कार्यं खखाग्निभ्यः ३०० उदयः शोध्यस्तदुत्थं भाजकेन भक्तं यत्फलं लभ्यते तच्छेषे व्यस्तं धनमृणं कुर्याद्यत्र धनं तत्रर्णं यत्रर्णं तत्र धनं कुर्यादयं विधिरन्यत्रापि ज्ञेयो, यथाहर्गणः १६००७४ पञ्चेशोनः १५९९५९ अब्दानां ४३८ भूपलवेन २७।२२ युक्तः १५९९८६।२२ वेदाष्टबाणैः ५८४ भक्तः लब्धस्य २७३ प्रयोजनाभावः शेषैः ५५४।२२ गजयुगबाणेभ्योऽधिकेन प्रागस्तो गतः। शेषस्पष्टीकरणमत्र प्रागस्तत्वाद्वृषस्योदयः २५५ खखाग्निभिः ३०० रहितो न भवति तेनोदयः २५५ खखाग्नि ३०० मध्ये शुद्धः ४५ प्रागस्तत्वादङ्गाग्निभि ३६ गुंणितः १६२० स्वेन स्वोदयेन २५५ भक्तः लब्धेन ६।२१ प्रागागतं शेषम् ५५४।२२ अस्तस्त्वादूनं क्रियते परं व्यस्तं तदुत्थमिति युतम् ५६०।४३ प्रोक्ताङ्कैः ५४८ सहान्तरम् १२।४३ प्रोक्तादधिकशेषैरेभिर्दिनैरिष्टाहर्गणाद्गतोऽस्त इति, एवमन्यदपि यथास्थानं कार्यम्॥ ३, ४॥

सुधाकरः—षट्कृतिः षट्त्रिंशच्छेषं स्पष्टार्थम्। अत्रोपपत्तिः। भृगोकेन्द्र भगणोत्थ दिनमानं

$$५८३ + \cfrac{१}{२७९०१३३२८ \over १ + \cfrac{}{२४२३३७६१६४}}$$

अत्राचार्येण स्वल्पान्तरात् ५८४ इदं गृहीतं तत्र षोडशवर्षे वास्तवासन्नमानाभ्यां शेषमाने ५, ४ अतः षोडशवर्षैरेकदिनमधिकं कर्त्तव्यं ग्रन्थारम्भात् पञ्चभवदिनैः केन्द्रभगणपूर्त्तिर्जाता अतस्ताः संख्या ऊनीकृताः। अथ भगणपूर्तेः प्रागेव षट्त्रिंशद्दिनैः पूर्वास्तः अग्रे पश्चिमोदयः

एवं नीचात्प्रागेव पञ्चदिनैः पश्चिमास्तः अग्रे पूर्वोदयः। अथात्रापि क्षेत्रकलाविषुवकलान्तरतोऽनुपातः यदि उदयपलैस्तदन्तरं तदा षट्त्रिंशद्दिनांशादिपलैः किम् तन् षष्टिभक्तं दिनादि तत्स्वरूपं—

$$\frac{\text{६ (उ} - \text{३००)} \times \text{३६} \times \text{१०}}{\text{उ द} \times \text{६०}}$$

$= \dfrac{(\text{उ} - \text{३००}) \times \text{३६}}{\text{उ द}}$ प्रथमं षट्त्रिंशत्स्थाने स्वल्पान्तरात् पञ्चत्रिंशद्गृहीतं उदये धनं अस्ते ऋणं विपरीतशोधने विपरीतं अन्यत् स्पष्टम्।

शीघ्रकेन्द्रांशेभ्यो वक्रादिसाधनम्—

द्राक्केन्द्रभागैस्त्रिनृपैः शरेन्द्रैस्तत्त्वेन्दुभिः सप्तनृपैस्त्रिरुद्रैः।
स्याद्वक्रता भूमिसुतादिकानामवक्रता तद्रहितैश्च भांशैः॥ ५॥

सुमतिहर्षः—असकृत्कर्मणा स्थैर्यगतं भौमकेन्द्रं तस्य भागा अंशा यदि त्रिनृपास्त्रिषष्ट्युत्तरशतपरिमिता भवन्ति तदा भौमस्य वक्रत्वमाह। एवं स्थिरशीघ्रकेन्द्रभागैः शरेन्द्रैः १४५ पञ्चचत्वारिंशदुत्तरशतभागमितैर्बुधस्य वक्रत्वमाह। गुरोस्तत्त्वेन्दुभिरंशमितैः १२५। शुक्रस्य सप्तनृपैरंशैः १६७। शनेस्त्रिरुद्रैरंशैः ११३। अथोक्तांशैर्भांशेभ्य ३६० शोधितैस्तत्तद्ग्रहस्यावक्रता गतिः। भौमस्य नगगोचन्द्रैरंशैः १९७ बुधस्य तिथिनेत्रैः २१५। गुरोः पञ्चाग्निदस्रैः २३५। शुक्रस्य त्रिनवेन्दुभिः १९३। शनेर्नगसिद्धैः २४७ वक्रतात्यागो मार्गी स्यात्। द्राक्केन्द्रभागकैर्विशेषश्चात्र यतो वक्रारम्भे वक्रत्यागे च गतिः पूर्णं यातो यावद्भिः शीघ्रकेन्द्रांशैर्गतिः पूर्णं स्यात्तावन्तः केन्द्रांशाः पाठ पठिताः यथा शनेस्त्रिरुद्रपरिमिते केन्द्रांशे ११३ भुजज्या ११०।१८ कोटिज्या ४६।४२ शीघ्रफलम् १।४।३ कर्णः ११५।३३ केन्द्रगतिः ५७।८ गतिफलम् ५९।८ शीघ्रभुक्तिः ३९।८ शोधितम् ०।६ स्पष्टागतिरेवम् एवं मुनिसिद्धमिते केन्द्रे २४७ ऽपि भुक्तेरेवं सर्वेषां ज्ञेयम्॥ ५॥

भौमगुरुशनीनामुदयास्तकालः—

प्राच्यामुदेति क्षितिजोऽष्टदस्रैः शक्रैर्गुरुः सप्तकुभिश्च मन्दः।
स्वस्वोदयांशोनितचक्रभागैस्त्रयो व्रजंत्यस्तमयं प्रतीच्याम्॥ ६॥

सुमतिहर्षः—प्राच्यामिति। भौमोष्टाविंशत्या २८ स्थितैः केन्द्रांशकैः प्राच्यामुदेति तथा गुरुश्चतुर्दशभिः १४ शनिः सप्तदशभिः १७ अथोदयांशैश्चक्रांशेभ्यः ३६० शोधितैस्तत्तद्ग्रहस्य प्रतीच्यामस्तमयो भवति तद्यथा भौमो द्विदेवैः ३३२ जीवोऽङ्गवेदाग्निभिः ३४६ शनिस्त्रिवेददहनैः ३३४ प्रतीच्यामस्तमेति। उक्तं च—(सि. शि. उ. ९)

"रवेरूनभुक्तिर्ग्रहः प्रागुदेति प्रतीच्यामसावस्तमेत्यन्यथान्यः" ॥६॥

बुधशुक्रयोरुदयास्त ज्ञानम्—

खार्क्षैर्जिनैर्ज्ञसितयोरुदयः प्रतीच्यामस्तश्च पञ्चतिथिभिर्मुनिसप्तभूभिः।
प्रागुद्गमः शरनखैस्त्रिधृतिप्रमाणैरस्तश्च तत्र दशवह्निभिरङ्गदेवैः॥ ७॥

सुमतिहर्षः—पञ्चाशद्भिः ५० शीघ्रकेन्द्रांशैर्बुधस्य प्रतीच्यामुदयः, चतुर्विंशद्भिः २४ शुक्रस्य, पञ्चपञ्चाशदुत्तरशतेन १५५ बुधस्य प्रतीच्यामस्तः, सप्तसप्तत्युत्तरशतेन १७७ शुक्रस्य पश्चिमायामस्तः। अथ बुधस्य पञ्चोत्तरद्विशत्या २०५ प्राच्यामुदयः, शुक्रस्य त्र्यशीत्युत्तरशतेन १८३ प्राच्यामुदयः, बुधस्य दशोत्तरत्रिशत्या ३१० प्राच्यामस्तः शुक्रस्य षट्त्रिंशदधिकशतत्रयेण ३३६ प्राच्यामस्तः। ज्ञशुक्रावृजू प्रत्यगुद्गम्य वक्रां गतिं प्राप्य तत्रैव यातः प्रतिष्ठाम्। ततः प्राक् समुद्गम्य वक्रावृजुत्वं समासाद्य तत्रैव चास्तं व्रजेतामिति विशेषः। यदि स्पष्टार्कस्य स्पष्टग्रहयोरन्तरं वक्ष्यमाणकालांशतुल्यं स्यात्तदोदयोस्तो वा भविष्यतीति ज्ञेयमिदन्नु मध्यमसूर्यस्फुटसूर्ययोरन्तरं कालं यदा भवति तदोदयास्तौ स्थूलत्वमेवाङ्गीकृतं तथाविधो ग्रहो यावति केन्द्रेण सता स्पष्टो भवति तावत्केन्द्रमुदयास्तसूचकमुक्तम्, अथवैभिरुक्तशीघ्रकेन्द्रभागैः शीघ्रफलं यावंतोंऽशा उत्पद्यन्ते तदंशस्वकालांशयोर्योगः। एतावदंशाः स्फुटास्ते सूर्यात्पूर्वतः परतश्च तावन्त एव, यथा सूर्यः ११।७।५६।१४ मन्दफलसंस्कृतो गुरुः १०।२३।५६।१४ शीघ्रकेन्द्रम् ०।४ भुजज्या २९ कोटिज्या ११६ कर्णः ४२।२१ शीघ्रफलम् २।१३।५२ स्पष्टो गुरुः १०।२६।१०।६ मध्यार्कः ११।७।५६।१४ अन्तरम् ०।११।४६ रुद्रमितकालांशतुल्या भागा मध्यार्कग्रहयोरन्तरस्थिता अतोऽत्रोदयसम्भवः स्थूलत्वादल्पान्तरमुपेक्षितम्॥ ७॥

वक्रादीनां दिनादिसाधनम्—

अवक्रवक्रास्तमयोदयोक्तभागाधिकोनाः कलिका विभक्ताः॥
द्राक्केन्द्रभुक्त्याप्तदिनैर्गतैष्यैरवक्रवक्रास्तमयोदयाः स्युः॥ ८॥

सुमतिहर्ष :—अवक्रादीनां मार्गादीनां ये प्रोक्ता भागास्तेभ्योऽधिक भागानां कलाः शीघ्रकेन्द्रगत्या भक्ता लब्धैर्दिनादिभिर्गतैरवक्रादयो भवन्ति अथ यदा प्रोक्तभागेभ्यो द्राक्केन्द्रभागा ऊनास्तदा प्राग्वल्लब्धदिनादिभिर्गम्यैरवक्रादयः स्युः, अत्रासन्ने वक्री कोऽपि नास्ति तेन तदुदाहारणं न दर्शितम् । मार्गस्योदाहरणं यथा भौमशीघ्रकेन्द्रम् ६।२२।३३।४७ गतिः ३१।७ ग्रन्थोक्तमार्ग केन्द्रगतिः ६।१७।०।० अनयोरन्तरांशाः ५।३३।४५ विकलाः २००२५ द्राक्केन्द्रगत्या विकलारूपया भक्ता लब्धैर्दिनादिभिः १०।४३।३२ प्रोक्तेभ्योऽधिककेन्द्रांशत्वादिष्टसमयाद्गतो मार्गी । एवं वैशाखकृष्णे ३ बुधे उदयाद्गतघटी १६।२८ समये मार्गी भौम एवं सर्वेषां कार्यं बुधस्य पश्चिमोदयज्ञानाय शीघ्रकेन्द्रम् २।३।८।४३ प्रोक्तकेन्द्रम् १।२०।०।० अनयोरन्तरांशाः १३।८।४३ विकलाः ४७३२३ द्राक्केन्द्रगत्या १८०।२४ भक्ता लब्धं दिनादि ४।२२।१९ स्वल्पत्वात्पलानि त्यक्तानि प्रोक्तेभ्योऽधिकत्वाद्गत उदयः एवं वैशाखकृष्णे ८ भौमे उदयाद्गतघटी ३७।४१ समये बुधस्य पश्चिमोदयो जात एवमन्येऽपि ॥ ८ ॥

ग्रहाणां कालांशाः पातविक्षेपाश्च—

> **सूर्यासप्तदशत्रिभूपरिमिता रुद्रा नवाक्षेन्दवः**
> **कालांशाः शशिनोऽनृजोः कुरहिताः पाताः कुजाद्राशयः ।**
> **रुद्रेशोङ्कदशद्विपा अथलवा अष्टौग्रहाः कुञ्जराः**
> **शून्यं शैलभुव स्वचक्रलफलैर्व्यस्तैरमी संस्कृताः ॥ ९ ॥**

सुमतिहर्ष :—शशिनश्चन्द्रादारभ्य सूर्यादयः कालांशाश्चन्द्रस्य द्वादशकालांशाः भौमस्य सप्तदश बुधस्य त्रयोदश गुरोरेकादश शुक्रस्य नव शनेः पञ्चदश १५ अनृजोर्वक्रिणो ग्रहस्य कुरहिता एकेन हीना अत एव कालांशाः यथा वक्रिणो भौमस्य षोडश १६ बुधस्य द्वादश १२ गुरोर्दश १० भृगोरष्ट ८ शनेश्चतुर्दश १४ अथ भौमादारभ्य रुद्रादिराशयोऽष्टाद्यंशाधिकाः पाताः स्युः यथा भौमस्य पातो राश्यादिः ११।८ एवं बुधस्य ११।९ गुरोः ९।८ भृगोः १०।० शनेः ८।१७ अमी पाताः स्वशीघ्रफलैर्व्यस्तैः संस्कृताः कार्याः धनैर्हीनाः हीनैर्युक्ताः स्पष्टाः स्युः बुधशुक्रयोः पाताः स्वमन्दाभ्यां फलाभ्यां ग्रहवदेव युक्तहीनौ कार्यौ तयोः पातौ स्पष्टौ स्तः केनचिदनयोर्मन्दफलं व्यस्तं कृतं तदसत्तं सम्यग्वासनां न जानन्ति ॥ ९ ॥

सुधाकरः—अनृजोः शुक्रबुधयोरितिशेषः भौमादीनां पाताः राश्याद्याः भौ. ११।८ बु. ११।९ गु. ९।८ शु. १०।० श. ८।१७ शरकलाः भौ. ११० बु. १५२ गुरु ७६ शु. १३६ श. १३० शेषं स्पष्टार्थम् । अत्रोपपत्तिः सुगमा सिद्धान्तोक्त्या ।

भौमादीनां विक्षेपकथनं साधनञ्च—

> **मन्दाभ्यां बुधशुक्रयोरथकुजाद्विक्षेपकाः खेश्वरा ।**
> **द्वीषुक्ष्माः षडगाः षडग्निशशिनः खत्रीन्दवो लिप्तिकाः ॥**
> **खेटात्पातयुतात्तथा ज्ञसितयोः शीघ्रोच्चतो दोर्ज्यका ।**
> **क्षेपघ्नी चलकर्णहृत्त्रिविहृता स्यादङ्गुलाद्यः शरः ॥ १० ॥**

सुमतिहर्षः—भौमस्य विक्षेपः शरः कलात्मकदशोत्तरशतम् ११० एवं बुधस्य १५२ गुरोः ७६ भृगोः १३६ शनेः १३० ।

अथ शरसाधनम् । खेटादिति । स्फुटग्रहः स्वीयस्फुटपातेन युक्तः कार्यः बुधशुक्रयोस्तु स्वशीघ्रोच्चं स्वीयस्फुटपातेन युतं कार्यं ततः सपातस्य ग्रहस्य भुजज्या स्वस्वशरेण गुण्या स्वस्वशीघ्रकर्णेन भक्ता लब्धं कलात्मकं त्रिभिर्भक्तमङ्गुलात्मकं शरो भवति स च सपातग्रहदिक् । यथा स्पष्टो बुधः १।७।२७।६ गतिः १०३।२८ मन्दफलं धनम् ०।१५।७ शीघ्रोच्चम् ३।४।५७।१६ शीघ्रकेन्द्रम् २।३।२८।४३ गतिः १८०।२४ कर्णः १४५।१५ अथ पातः ११।९।०।० मन्दफलेन धनरूपेण ०।१५।७ युतो जातः स्पष्टः पातः ११।९।१५।७ शीघ्रोच्चेन ३।४।५७।१६ युतस्य २।१४।१२।२३ भुजज्या ११५।६ शरेण १५२ गुणिता १७४८५।१२ कर्णेन १४५।१४ भक्ता लब्धं कलादिशरः १२०।२७ सपातशीघ्रोच्चमुत्तरगोले तेनोत्तरस्त्रिभक्तोङ्गुलादिः ४०।९ शरः ॥ १० ॥

दृक्कर्मसाधनमुदयास्तसाधनञ्च—

> प्राक्पश्चात्त्रिभहीनयुक्तखचरक्रान्त्यक्षतोंऽशा नताः ।
> शुद्धास्ते नवतेः स्युरुन्नतलवाः साध्ये पृथक्तज्ज्यके ॥
> क्षेपघ्नी नतशिञ्जिनी गुणगुणा भक्तोन्नतांशज्यया ।
> स्वर्णं लब्धकला ग्रहे शरनतांशैकान्यदिक्त्वे क्रमात् ॥ ११ ॥

> पश्चाद्व्यस्तमितीह दृग्खचरस्तत्सूर्ययोरल्पकः ।
> कल्प्योऽर्कस्त्वपरस्तनुश्च घटिकाः प्राग्वत्तयोरन्तरे ॥

पश्चात्षड्भयुतात्तु ता रसहताः कालांशकाः सन्ति तैः ।
प्रोक्तेभ्योऽभ्यधिकैर्गतः समुदयो न्यूनैस्तु गम्यस्ततः ॥ १२ ॥

व्यस्तश्चास्तमयस्तदनन्तरकलाः खाभ्राग्निभिः सङ्गुणा ।
भानो राश्युदयेन चेदपरतस्तत्सप्तमेनोद्धृताः ॥
ताः स्युः क्षेत्रकला जवान्तरहृता वक्रे जवैक्योद्धृता ।
यातैष्योऽस्तमयोऽथवा समुदयोज्ञेयोऽत्र लब्धैर्दिनैः ॥ १३ ॥

सुमतिहर्षः—प्रागिति प्राच्यामुदेति क्षितिजोऽष्टदस्रैरित्यादि पूर्वसम्बन्धिकेन्द्रांशैर्यदि ग्रहस्योदयास्तावायाति तस्मिन्दिने तदासन्नग्रहं स्फुटं विधाय यदि प्राच्यामुदयास्तौ तदा राशित्रयेण हीनं कुर्याद्ग्रहं प्रतीच्यां चेत्तदा त्रिराशियुतं कुर्यादेवं भूतस्य ग्रहस्य क्रान्तिं कुर्यात्परं सा क्रान्तिः शरेण संस्कृता न कार्या केवलेव ग्राह्या, उक्तं च भाष्येऽत्र केऽपीयं क्रान्तिः शरेण संस्कार्येति क्रान्तिमुत्पादयन्ति सा वृथैव ज्ञेया कस्मात्त्रिभहीनयुक्तग्रहस्य विमण्डलाभावात्तस्मादेव केवलाः क्रान्त्यंशाः प्रसाध्याः इति ततः क्रान्त्यक्षयोर्भिन्नदिक्त्वेऽन्तरमेकदिक्त्वे योग इत्यनेन नतांशाः साध्याः नतांशैर्हीना नवति ९० रुन्नतांशाः स्युः । अथ नतांशानामुन्नतांशानां च पृथक् पृथक् ज्या साधयेत् । अथ नतांशज्यका स्वकीयेन खेटात्पातयुतादित्यादिनागतेन स्फुटशरेणांगुलादिना गुणिता पुनर्गुणैस्त्रिभिर्गुणितोन्नतांशज्यया भक्ता लब्धं कलादिकं फलं शरनतांशानामेकदिक्त्वे स्फुटग्रहे धनं कुर्याद्भिन्न दिक्त्वे हीनं कुर्यात्प्राच्यां दिश्यथ प्रतीच्यामुदयास्तौ तदा व्यस्तं शरनतांशयोरेकदिक्त्वे हीनं भिन्नदिक्त्वे धनं कुर्यादेवं जातो दृष्टखचरो ग्रहः स्यात्तस्य दृक्कर्मग्रहस्य तात्कालीनस्फुटसूर्यस्य च मध्ये योऽल्पः स रविः प्रकल्प्यः, अथ यो ग्रहोऽधिकस्तत्तनुर्लग्नं प्रकल्पनीयं तयोः कल्पितयोरर्कलग्नयोरन्तरे घटिकाः, प्राग्वत्कार्याः, अर्कस्य भोग्यस्तनुभुक्तयुक्त इत्यादिना साध्याः । प्रतीच्यान्तु राशिषट्कयुक्तयो रविदृग्ग्रहयोर्घटिकाः साध्यास्ता घटिका रसैर्हताः कालांशका इष्टा भवन्ति ता इष्टकालांशाः प्रोक्तेभ्यः पूर्वपाठपठितकालांशेभ्यो यद्यधिकास्तदोदयो गतः न्यूनाश्चेत्तदा गम्यः । अस्तमयस्तु व्यस्तः यदीष्ट कालांशा अधिकास्तदास्तो गम्यः न्यूनास्तदास्तो गतः अथ प्रोक्ता ये कालांशास्तेषामिष्टकालांशानां चान्तरकलाः खाभ्राग्निभिः शतत्रयेण गुणिताः सायनसूर्याधिष्ठितराशिस्वोदयपलैर्भक्ताः प्रतीच्यां तु सूर्याधिष्ठितराशेः

सप्तमराश्युदयपलैर्भक्ता लब्धकला ग्रहस्य रवेश्च भुक्त्यन्तरेण भक्ताः यदि ग्रहो वक्री तदा भुक्ति योगेन भक्ता यल्लब्धं तत्संख्यागता उदयास्तयोर्दिवसाः भवन्ति यथा पश्चिमोदयत्वात्त्रिभयुक्तग्रहः ४।१७।२७।६ सायनः ५।५।४१।६ क्रान्तिः सौम्याः ९।३२।५६ अक्षांशा याम्या २४।३५।९ भिन्नदिक्त्वादनयोरन्तरम् १५।२।३ नतांशा उन्नतांशाः ७४।५७।४७ नतज्या ३१।४ उन्नतज्या १२५।२८ नतज्या ३१।४ शरेणाङ्गुलाद्येन ४०।९ गुणिता १२४७।१९ गुण ३ गुणा ३७४१।५७ उन्नतज्यया भक्ते लब्धम् ३२।२४ कलादिदृक्फलं शरनतांशयोरन्यदिक्त्वादृणं परं पश्चिमत्वाद्धनं ग्रहे १।१७।२७।६ दृक्कर्मसंस्कृतो ग्रहः १।१७।५९।३० सूर्यः १।३।६।१२ उदयग्रहसूर्ययोरल्पः सूर्य एव ग्रहो लग्नं पश्चिमत्वात्सषड्भार्कस्य भोग्यः ९८ लग्नभुक्तम् ७१ अनयोर्योगो १६९ घटी २।४९ षड्गुणा १६।५४ इष्टकालांशाः प्रोक्तकालांशेभ्योऽधिकास्तेनोदयो गतः, उभयोरन्तरांशाः ३।५४ कलाः २३४ खाभ्राग्निभिर्गुणिताः ७०२०० सूर्याक्रान्तसप्तमवृश्चिकोदयेन ३४३ भक्ता लब्धं क्षेत्रकलाः २०४।३९ सवर्णिता १२२८९ बुधगतिः १०३।३८ सूर्यगतिः ५७।२८ अनयोरन्तरेण ४७।१० सवर्णितेन २७७० लब्धं दिनगतम् ४।३५।५८ एवमिष्टदिनात्पूर्वं वैशाखकृष्ण ८ भौमे घट्यः ३४।२ समये उदयो बुधः पश्चिमे एवं सर्वेषां कर्तव्यम् ॥ १३ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । क्षितिजस्थग्रहबिम्बे शरः कोटिः स्पष्टदृक्कर्मकला भुजः क्षितिजे कर्णं इति चापजात्यमृजुजात्यं मत्वा क्रान्तिवृत्तक्षितिज सम्पातोत्पन्नः कोणो त्रित्रिभस्योन्नतांशास्तत्र ग्रहस्थानसमं लग्नं मत्वा वित्रिभं साधितं तन्नतोन्नतांशमाने च दिनार्धवत् ततोऽनुपातेन दृक्कर्मकलाः साधिता इति । धनर्णं वासना गोलोक्त्या ।

विशेषकथनम्—

प्राग्दृग्ग्रहश्चेदधिको रवेः स्यादूनोऽथवा पश्चिमदृग्ग्रहश्च ॥
प्रोक्तेष्टकालांशयुतेः कलाभिः साध्यास्तदानीं दिवसा गतैष्याः ॥१४॥

सुमतिहर्षः—रवेः सकाशात्प्राग्दृग्ग्रहश्चेदधिकः प्रत्यग्दृग्ग्रहः ऊनः स्यात्तदा प्रोक्तकालांशानामिष्टकालांशानां च योगः कार्यस्तस्य कलाभिर्गतगम्या दिवसाः साध्याः साध्यानन्तरकलाभिः किन्तु संयोग-

विषय इष्टकालांशानामाधिकत्वे ये गता दिवसाः प्राप्तास्ते गम्या ज्ञेया न तु गताः गम्याश्चेद्गता इत्यर्थः । उक्तं च सिद्धान्तशिरोमणौ—

"तथा यदीष्टकालांशाः प्रोक्तेभ्योऽभ्यधिकास्तदा ।
व्यत्ययश्च गतैष्यत्वे ज्ञेयोऽह्नां सुधिया खलु" इति (सि.शि.ग्र.उ.१२)॥१४॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थमुपपत्तिश्च स्फुटा सिद्धान्तरीत्या ॥

अगस्त्योदयास्तकथनम्—

अक्षभाष्टहतियुक्तवर्जिताः अष्टगोमितलवा गजाद्रयः ।
तत्समे दिनमणौ च कुम्भभूर्याति दर्शनमदर्शनं क्रमात् ॥ १५ ॥

सुमतिहर्षः—स्वदेशाक्षभाया अष्टभिर्या हतिर्गुणना तया युक्ता अष्टाधिकनवति ९८ मितांशास्तत्तुल्ये सूर्येऽगस्त्यस्योदयो भवति । अष्टाहतिप्रभाहीनाष्टसप्तत्यंशमिते रवावूनेऽगस्त्यस्यास्तो भवति । यथा सिरोह्यामक्षभा ५।३० अष्ट ८ गुणा ४४।० अनेनाष्टगोमितलवा ९८ युक्ताः १४२।० त्रिशद्भक्ता राश्यादिः ४।२२ एतत्समो यदा सूर्यो भवति तदागस्त्यस्योदयः । अथ पूर्वागतेन ४४।० गजाद्रयो भागाः ७८ हीनाः ३४।० राश्यादिः १।४।०।० एतत्सदृशे रवावगस्त्यस्यास्तः । यदागस्त्योदयकालोऽभीष्टदिनात्कियद्भिर्दिनैरिति ज्ञातुमिष्यते तदेष्टदिनार्कस्योदयार्कस्य चान्तरकला रविभुक्त्या भाज्या लब्धदिनैरगस्त्योदय एष्यः यद्युदयसूर्यो महान्यदि न्यूनस्तदा गत एवमस्तसूर्यादस्तमयोऽपि ।

अथ चन्द्रस्योदयास्तसाधनम्—शके १५७१ फाल्गुनशुक्ल १० गुरौ चन्द्रोदयविलोकनार्थं गताब्दाः ४१२ अहर्गणः १५०८४३ अस्तकालिकाः स्वदेशीयाः ग्रहास्तत्र सूर्यः १०।२१।२।११ चन्द्रः ११।६।१९।४३ उच्चम् १।३।४२।३६ पातः ०।२।५५।३८ अयनांशाः १७।५२।५५ स्पष्टोऽर्कः १०।२२।५८।५३ गतिः ६०।८ चन्द्रः ११।११९।२६।१७ गतिः ७३५।४ चरमृणम् ३५ चरपलसंस्कृत सूर्यः १०।२२।५८।१८ चन्द्रः ११।९।१८।५९ पातः ०।२।५५।३३ अङ्गुलाद्यः शरो याम्यः २८।५२ अथ पश्चिमोदयत्वात्त्रिभयुक्तश्चन्द्रः २।९।१८।५९ क्रान्तिः सौम्या २३।५०।१७ अक्षांशा याम्याः २४।३५।९ नतांशा याम्याः ०।४२।५२ दृक्कर्मफलमृणम् १।७ दृक्कर्मसंस्कृतश्चन्द्रः ११।९।१७।५२ शरनतांशैकान्यादिक्कर्म इत्युक्तत्वादत्र फलं धनमागतं परं पश्चाद् व्यस्तमित्यत्रर्णं कार्यमिति ।

अथेष्टकालांशानयनम्—पश्चात्षड्भयुतादिति स्थापितो दृक्कर्मशुद्धः सायनः सषड्राशियुतश्चन्द्रः ५।२७।१०।४७ सषड्भसायनरविः ५।१०।५१।१३ अनयोरल्पोऽर्कः कल्प्योऽधिको लग्नं पश्चादन्तरं यद्येऽकभे लग्नरवीत्यादिनाप्तघटी ३।१ रस ६ गुणा १८।६ एत इष्टकालांशाः प्रोक्तकालांशेभ्योऽधिकास्तेन गतोदय इष्टकालांशप्रोक्तकालांशयोरन्तरकलाः २६६ खाभ्राग्निः ३०० गुणः १०९८०० पश्चिमायामुदयस्तेन सायनसूर्याक्रान्तराशयः सायनसप्तमराश्युदयेन कन्यालग्नमानेन ३३३ भक्ताः ३२९।४३ सूर्यचन्द्रभुक्त्यन्तरेण ६७५।३२ भक्ते लब्धं दिनादिः ०।२९।१७ एभिर्दिनैश्चन्द्रस्योदयो गतः ।

अथ चन्द्रास्तसाधनम् । शके १५५३ लौकिकज्येष्ठकृष्ण ३० गुरावत्रदिने पूर्वस्यां चन्द्रास्तसाधने गताब्दाः ४१८ अधिमासाः १५५ अहर्गणः १५२७६२ स्वदेशीया मध्यमाः प्रातःकालिकाः ग्रहास्तत्र सूर्यः १।२०।५५।४० चन्द्रः ५।११।५९।१८ उच्चम् ७।१७।१४।२८ पातः ३।१३।३३।३२ अयनांशाः १७।५८।१० स्पष्टोऽर्कः १।२१।५४।५९ चन्द्रः १।२१।२९।४६ चरमृणम् १०४ चरपलसंस्कृतोऽर्कः १।२१।५३।१७ चन्द्रः १।२१।४।५८ पातः ३।१३।३३।२७ शरोऽङ्गुलादिरुत्तरः ५१।४९ प्राक्स्थितत्वाद्वित्रिभचन्द्रः १०।२१।४।५८ क्रान्तिः १२।५३।१० नतांशा याम्याः १२।३३।१६ उन्नतांशाः ७७।२६।४४ नतज्या २६।६ उन्नतज्या ११६।४३ ऋणं दृक्कर्मकलाः ३४।४५ दृक्कर्मसंस्कृतश्चन्द्रः १।१०।३०।१३ प्राग्वदिष्टकालांशाः ११।१८ पूर्वत्वात्सषड्भोनः कार्यः प्रोक्तेभ्यः १२ ऊनोऽस्तत्वाध्यस्तच्चास्तमय इतिवचनाद्गतः प्रोक्तेष्टकालांशान्तरकलाः ४२ खाभ्राग्निभि ३०० र्गुणा १३६०० सायनार्कराश्युदयमिथुनपलैः ३०५ भक्ताः क्षेत्रकलाः ४१।१८ गत्यन्तरेण ८०१।५८ भक्ते दिनादयः ०।३।५ एवं गतास्तं चतुर्दश्यां शेषरात्रीष्टसमये ३।५ चन्द्रास्तः सूर्यासन्नवशेन चन्द्रस्यास्तः पूर्वस्यां कृष्णचतुर्दश्यासन्ने कार्यं सूर्यासन्नवशेन चन्द्रोदयः पश्चिमायां द्वितीयासन्ने । अथ ग्रहाणां प्रत्यहमुदयास्तज्ञानमुच्यते—तत्र प्रत्यहमुदयः पूर्वस्यां सर्वेषां ग्रहाणां साध्यः प्रत्यहमस्तः प्रतीच्यां साध्यः यः प्राग्दृग्ग्रहः स ग्रहस्योदयलग्नं यः पश्चिमदृग्ग्रहः स ग्रहस्यास्तलग्नं ज्ञेयमुक्तं च भास्कराचार्यैः—

"प्राग्दृग्ग्रहः स्यादुदयाख्यलग्नमस्ताख्यकं पश्चिमदृग्ग्रहः सः"
(सि.शि.ग्र.उ.१)

इत्युदाहरणं शके १५१७ माघकृष्ण ४ शनौ चन्द्रोदयविलोकनार्थं गताब्दाः ४१२ अहर्गणः १५०८३१ स्वदेशीया मध्यमा अस्तकालिकाः ग्रहाः सूर्यः १०।९।१२।३६ चन्द्रः ५।२८।१२।४५ उच्चम् १।२।२२। १५ पातः ०।१।२७।२६ अयनांशाः १७।५२।५२ चरपल ५७ संस्कृतोऽर्कः १०।१०।५३।५६ गतिः ६०।२८ चन्द्रः ५।२६।५०।५४ गतिः ८५५।३५ पातः ०।१।२७।२३ गतिः ३।११ अङ्गुलाद्यः शरः सौम्यः २।५५ प्रागुदयविलोकनाय वित्रिभचन्द्रः २।२६।५।५४ क्रान्तिरुत्तरा २३।८।५५ अक्षांशा याम्याः २४।३५।९ नतांशा याम्याः १।२६।१४ उक्तवदृक्फलमृणम् ८।१३ दृक्कर्मसंस्कृतश्चन्द्रः ५।२६। ५।४१ अयं प्राग्दृग्ग्रहः इदं चन्द्रस्योदयलग्नमीदृशे लग्ने क्षितिजस्थे चन्द्रस्योदयः। उक्तं च—

"निजनिजोदयलग्नसमुद्गमे समुदयेऽपि भवेद्ग्रनभः सदाम् ।
भवति चास्तविलग्न समुद्गमे प्रतिदिनेऽस्तमयः प्रवहभ्रमात्" ॥
(सि. शि ग्र. छा. ९)

इत्युदयाद्गतनाडिकानयनम् । अथास्तकाल इष्टलग्नम् ४।१०। ५३।५६ स्पष्टसूर्यमध्ये राशिषट्कयुक्तेऽस्तकाल इष्टलग्नं भवतीत्युदयलग्नं च ५।२६।५०।४१ अनयोरन्तरकाल ऊनस्य भोग्योऽधिकभुक्तयुक्तो मध्योदयाढ्यः समयो विलग्नादिति प्रकारेण सायनोदयलग्नेष्टलग्नयोरन्तरकालघटी ८।३० समयेऽस्ताद्गते पूर्वस्यां चन्द्रोदयो भविष्यतीत्युक्तं च--"प्राग्दृग्ग्रहोऽल्पोऽत्र यदीष्टलग्नाद्गतो गमिष्यत्युदयं बहुश्चेत् ।
ऊनाधिकः पश्चिमदृग्ग्रहश्चेदस्तं गतो यास्यति चेति वेद्यम् ॥
तदन्तरोत्था घटिका गतैष्यास्तच्चालितः स्यात्सनिजोदयोऽस्तः ।
(सि.शि.ग्र.उ. १-२) इत्येवं सर्वेषां प्रत्यहमुदयास्तौ साध्यौ ॥१५॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम् ।

अत्रोपपत्तिः । अगस्तस्य मध्यमा क्रान्तिः $=$ २४ स्वल्पान्तरात् स्पष्टा क्रान्तिः $=$ ५२ याम्या, आभ्यां स्वल्पान्तराच्चरांशमाने $\frac{२४\times८\times वि}{९\times१०}$, $\frac{५२\times८\times वि}{९\times१०}$ स्फुटास्फुटक्रान्तिज्ययोश्चरार्द्ध-

योरित्यादिना स्पष्टचरांश सममेवाक्षजदृक्कर्म्मांशाः $\frac{७७\times८ वि}{९०}=$ ८ वि स्वल्पान्तरात् । अथागस्त्य ध्रुवांशाः $=$ ८७ कालांशाः $=$ १२ ततः क्षेत्रांशाः उदयास्तयोः क्रमेण ११, ९ कल्पिताः अत उपपन्नं शेषं स्पष्टम् ।

उपसंहार :—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्धबुद्धिवल्लभे ग्रहोदयास्त साधनम् ॥ ६ ॥

सुमतिहर्ष :—

इतिकरणकुतूहलवृत्तौ गणककुमुदकौमुद्यामुदयास्तविवेचनं विहितमित्युदयास्ताधिकारः ॥ ६ ॥

सुधाकर :—

श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणे वरा ।
उद्गमास्त गणितस्य वासना सूक्तियुक्ति सहिताऽत्रसङ्गता ॥

इति करणकुतूहले वासनाविभूषणे खगोदयास्ताधिकारः ॥ ६ ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः
उदयास्ताधिकारः षष्ठः ॥

शृङ्गोन्नत्यधिकारः–७

वलनसाधनम्—

क्रान्तेः कलाः सायकसंस्कृतेन्दोः सषड्भसूर्यायमसंस्कृतास्ताः ॥
व्यर्केन्दुदोर्ज्यागुणितैः पलांशैः खार्कोद्धृतैरप्यथ संस्कृताश्च ॥ १ ॥
व्यर्केन्दुदोराशिभिरिन्द्रियघ्नैर्भक्ता भवेयुर्वलनाङ्गुलानि ॥

सुमतिहर्षः—अत्र चन्द्रार्कयोर्दक्षिणोत्तरमन्तरं भुजः पूर्वापरमन्तरं कोटिरनयोरन्तरं तिर्यक्करण एवं त्र्यस्रक्षेत्रं शृङ्गोन्नतिसाधनहेतुकं कृष्णपक्ष औदयिकस्य शुक्लपक्षेऽस्तकालीनस्य चन्द्रस्य, उक्तं च—

"मासान्तपादे प्रथमेऽथवेन्दोः शृङ्गोन्नतिर्याद्दिवसेऽवगम्या ।
तदोदयेऽस्ते निशि वा प्रसाध्य" (सि. शि. शृ. ३)

इति तस्य चन्द्रस्य कलादिका क्रान्तिः कलादिना शरेण संस्कृता भिन्नदिक्त्वे वियुक्तैकदिक्त्वे युक्ता तदौदयिकस्य तात्कालिकस्य वा राशिषट्कयुतस्य सूर्यस्य क्रान्त्या पूर्ववत्संस्कृता सषड्भः कस्मात्क्रियते तदुच्यते उभयोः क्रान्त्योरेकदिश्यन्तरमन्यदिशि योग एवं कृत उभयोर्दक्षिणोत्तरमन्तरमुत्पद्यतेऽत्रैकदिशि योगोऽन्यदिश्यन्तरमित्युक्तं तत्सार्थक्यकरणाय सषड्भः कृतः सषड्भकृते दिगन्यत्वं भवतीत्यतः सषड्भः कृतः अथार्केण हीनस्य चन्द्रस्य भुजज्ययाक्षांशा गुणिताः खार्के १२० भक्ता लब्धेन पूर्ववत्संस्कृताक्षांशवशेन दिक् । अथ रविहीनचन्द्रस्य भुजराशयः पञ्च ५ गुणास्तैः सर्वसंस्कारसंस्कृता चन्द्रक्रान्तिर्भाज्या लब्धमङ्गुलाद्यं वलनं भवति क्रान्तेर्या दिक् सा वलनस्यापि ज्ञेया । यथा शके १५१७ फाल्गुनशुक्ल १ गुरौ चन्द्रोदयस्तत्रापि शृङ्गोन्नतिर्विलोक्यते स्पष्टचन्द्रोऽस्तकालिकः ११।९।१८।५९ सायनः ११।२७।११।५४ भुजः ०।२।४८।६ क्रान्तिकला याम्या ६७।३६ शरकलाभिर्दक्षिणाभिः ८६।१६ एकदिक्त्वाद्युता १५३।५२ पुनः सषड्भसूर्यस्य क्रान्तिकलाः सौम्याः ४५६।१५ भिन्नदिक्त्वादन्तरं सौम्यम् ३०२।२३ षष्टिभक्तांशादि ५।२।२३ व्यर्केन्दुदोरिति सूर्योनचन्द्रः ०।१६।२०।४१ भुजज्यया ३३।४१ अक्षांशा याम्या २४।३५।९ गुणिताः ८२८।७।५८ खार्को १२० द्धृता लब्धम् ६।५४।४ अक्षांश-

वशाद्याम्या अनेन ६।५४।४ सौम्यायाः क्रान्ते ५।२।२३ रन्तरं याम्यम् १।५१।४१ इयं सर्वसंस्कारसंस्कृता क्रान्तिः व्यर्केन्दुभुजं राश्यादिकं पञ्चगुणं कृत्वा सर्वं राश्यादिकं तदेवांशादिकं प्रकल्प्य सवर्णितं कृत्वा तेन सवर्णितेन सवर्णिता सर्वसंस्कार संस्कृता क्रान्तिर्भाज्या लब्धमङ्गुलादिवलनं सर्वसंस्कारसंस्कृतक्रान्तेर्या दिक् सा वलनस्य दिक् सर्वसंस्कारसंस्कृतक्रान्तेर्यदोत्तरा तदा वलनमत्युत्तरं यदा दक्षिणा तदा वलनमपि दक्षिणम् । अथ व्यर्केन्दुभुजः ०।१६।२०।४१ पञ्च ५ गुणं राश्यादिजातम् २।२१।४३।२५ तदेव राश्यादिकमंशादिकं प्रकल्प्य २।२१।४३ षष्ट्या सवर्णितम् ८५०३ सवर्णिता सर्वसंस्कारसंस्कृता क्रान्तिः ६७०१ अनेन ८५०३ भक्ता लब्धमङ्गुलाद्यं वलनम् ०।४७ सर्वसंस्कारसंस्कृता क्रान्तिर्याम्या तस्माद्वलनमपि याम्यम् ॥ १ ॥

सितासितभागकथनम्—

व्यर्केन्दुकोट्यंशशरेन्दुभागो हारोऽमुना षट्कृतितो यदाप्तम् ॥ २ ॥
द्विघ्नं च हारोनयुतं तदर्धे स्यातां क्रमादत्र विभास्वभाख्ये ।

सुमतिहर्षः—अर्कोनचन्द्रस्य कोटिः पञ्चदश १५ भक्ता यदाप्तं यद्धारो भवत्यमुना हारेण षट्कृतिः षट्त्रिंशत् ३६ भक्ता कार्या यल्लब्धं तत्स्थानद्वयस्थितमेकत्र हारेणोनमपरत्र युतं तयोरर्द्धे विभास्वभाख्ये स्यातां सितासिताख्ये भवतः हारोनार्द्धं विभा हारयुतार्द्धं स्वभेत्यर्थः । यथा व्यर्केन्दुकोट्यंशादिः ७३।३९।१९ शरेन्दु १५ भक्ते लब्धम् ४।५४ अयं हारोऽनेन षट्त्रिंशद्भक्ताः लब्धम् ७।२० द्विष्ठः ७।२० एकत्र हारेणोना २।२६ अर्द्धम् १।१३ जाता विभा, अपरत्र हारेण युता १२।२४ अर्द्धं ६।७ जाता स्वभा ॥ २ ॥

परिलेखकथनम्—

विधाय सूत्रेण षडङ्गुलेन वृत्तं दिगङ्कं वलनं च वृत्ते ॥ ३ ॥
प्राक्शुक्लपक्षे परतश्च कृष्णे केन्द्राद्विभां तद्वलनाग्रसूत्रे ।
कृत्वाविभाग्रे स्वभया च वृत्तं ज्ञेयेन्दुखण्डाकृतिरेवमत्र ॥ ४ ॥

सुमतिहर्षः—समायां भूमौ कागदे पट्टे वा षडङ्गुलेन सूत्रेण कर्कटकेन वा चन्द्रबिम्बं कृत्वा तस्मिन्बिम्बे प्रागपरादिक्चिह्नं कृत्वा प्रागानीतं वलनं यथादिशं देयं तच्च शुक्लपक्षे प्राग्भागे देयं कृष्णपक्षे

पश्चिमभागे ततो यत्र वलनाग्रं ततः केन्द्राभिमुखं सूत्रं प्रसार्य्य तस्मिन्सूत्रे विभासूत्रकं देयं तस्मिन्वलनाग्रसूत्रे केन्द्राद्वलनाग्रगा विभा देया, एवं कदाचिद्बिम्बमुल्लिख्य दूरेऽपि विभासूत्रं भवति तस्माद्विभा-ग्रस्थस्वभामिते कर्कटकेन वृत्तं कर्तव्यमस्माद्वृत्ताद्वहिर्भूतमिन्दुमण्डल-मिन्दुखण्डाकृतिश्चेति ज्ञेयं यद्दिक्कं वलनं तद्दिक्स्थं शृङ्गं नीचं ज्ञेय-मन्यदिक्स्थमुन्नतं विद्धि जानीहीत्यर्थः। अथ कश्चिद्विशेषः यदा षडङ्गुलाधिका विभा भवति तदा केन्द्राद्वलनाग्ररेखाभिमुखं विभा-प्रमाणेन भूमौ वा पट्टे विभाचिह्नं कार्यं ततस्तस्य प्रभाप्रमाणेन वृत्तं कार्यमित्येतत् प्रायः शुक्लाष्टमीदिने न भवति। अमावास्यायां चन्द्रा-र्कयोरेकत्वाद्विभाया अभावः षडङ्गुलास्वभा भवति, अष्टम्यामष्टाद-शाङ्गुला विभास्वभा च भवति यत्र तत्र कोटेरभावस्तदा हाराभावः प्रायस्तत्र याम्यं वलनं ज्ञेयम् शिवपुर्यां परमवलनमङ्गुलचतुष्टयासन्नं भवति ततो यथा यथाक्षांशा उपचीयन्ते तथा तथा वलनमुपचीयते तद्दक्षिणस्यामेव भवत्युत्तरवलनं त्वेकाङ्गुलमध्ये भवति।

अन्यदुदाहरणं शके १५३९ आश्विनशुक्ले ६ गुरुऽब्दाः ४३४ उदयेऽहर्गणः १५८७३३ मध्यमाः सायंकालिकः सूर्यः ५।२७।२६।३२ चन्द्रः ८।१७।४४।३४ उच्चम् ५।२२।२०।२८ पातः २।०।६।४६ अयनांशाः १८।१४।३१ रवेर्मन्दफलमृणम् २।८।५ चन्द्रमन्दफलमृणम् ५।०।९ चरफलं धनम् २६ विपरीतमृणं चरपलसंस्कृतो रविः ५।२५।१७।१७ गतिः ५९।२१ चन्द्रः ८।१२।३।० गतिः ७७४।५ चन्द्रस्य क्रान्तिकला दक्षिणा १४३७।११ योधपुरेऽक्षभा ५।५ शरकला याम्या १९७।५७ शरसंस्कृता क्रान्तिर्याम्या १६३५।८ अथ सषड्भ-सूर्यस्य ११।२५।१७।१७ क्रान्तिः ३१६।३१ सौम्यानया पूर्वागता भिन्नदिक्त्वर्द्धिता १३०८।३७ अंशादिः २१।४८।३७ व्यर्केन्दुः २।१७।१६।४३ अस्य भुजोऽयमेवास्य ज्या ११६।२१ योधपुर-स्याक्षांशैः २५।५८।४३ गुणिता ३०३०।७।२३ खार्कै १२० भक्ता लब्धम् २५।१५।३ अक्षांशवशाद्दक्षिणानेन २५।१५।३ पूर्वागतांशादिः १२।४८।३७ युता ४७।३।४० अथ व्यर्केन्दुभुजः २।१७।१६।४३ पञ्चभि ५ र्गुणिता राश्यादयो जातमंशादिः १२।२६।२३ विकलीकृतम् ४४७८३ अनेन सर्वणिता पूर्वागतसर्वसंस्कारसंस्कृताः क्रान्तिविकलाः १६९४२७ भक्ता लब्धमंगुलादिवलनम् ३।४६।५९ दक्षिणं व्यर्केन्दुः

२।१७।१६।४३ अस्य कोटिः ०।१२।४३।१७ अस्य शरेन्दुभागस्तेन चेत्कोटौ राशिर्भवति तदा राशेरंशाः कार्याः अधोंऽशाः ज्ञेयास्तत्र पञ्च दशभिर्भाज्या अत्र राशेरभावोंऽशाद्यम् १२।४३।१७ पञ्चदशभक्तं लब्धम् ०।५०।५३ अयं हारोंऽशादिहरेण सर्वणितेन ३०५३ विकली-कृताः षट्त्रिंशदंशाः १२९६०० भक्ता लब्धमंशादि ४२।२७ इदं लब्धं द्विष्ठम् ४२।२७ एकत्रांशादिहरेण ०।५०।५३ क्रमादूनम् ४१।३६।७ एकत्र युतम् ४३।१७।५३ अनयोरर्द्धे क्रमाद्विभास्वभाख्ये विभाङ्गुलादिः २०।४८।३३ स्वभा २१।३६।५३ ॥

अथ मासान्तपादस्योदाहरणम् शके १५३९ लौकिककार्तिककृष्ण १३ शुक्रे उदये शृङ्गोन्नत्यर्थमहर्गणः १५८७५४ औदयिका मध्यमाः सूर्यः ६।१८।३।३२ चन्द्रः ५।१७।४४।५३ उच्चम् ५।२४।३७।२५ पातः २।१।१२।० अयनांशाः १८।१४।३४ चरपलानि ६६ चरपल-संस्कृताः सूर्यः ६।१७।२०।३६ गतिः ६१।२८ चन्द्रः ५।१८।३४।३० गतिः ७२२।२० पातः २।१।१२।० गतिः ३।११ चन्द्रस्य कलादिका क्रान्तिः ६४।३४ दक्षिणा शरो दक्षिणः २४।५० एकदिक्त्वादुभयोर्योगः ३६९।२४ सषड्भसूर्यसायनस्य क्रान्तिः ८१४।२१ उत्तरानया भिन्न-दिक्त्वादन्तरम् ४४४।५७ उत्तराव्यर्केन्दुदोर्ज्या ५७।३९ पलांशैः २४।३५।९ गुणिता १४१७।२२।२३ खार्कै १२० भक्ता लब्धेन ११।४८।४१ दक्षिणेन भिन्नदिक्त्वात्पूर्वागतांशादि ७।२४।५७ उभयो-रन्तरम् ४।२३।४४ याम्यं व्यर्केन्दुकोट्यंशाः ०।१।१३।५४ भुजः ०।२८।४६।६ राशिभिरिन्द्रियगुणितैः ४।२३।५० सर्वणितैः १५८३० पूर्वागतमन्तरम् ४।२३।४४ सर्वणितम् १५८२४ भक्तमङ्गुलादिवलनं याम्यम् ०।५९ हारः ३।५० विभा २।४५ स्वभा ६।३६ करण-कुतूहलवृत्तौ विहितं शृङ्गोन्नतेर्नयनम् ॥ ४ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थम्।

अत्रोपपत्तिः। अत्र सूर्यास्तोदय एव शृङ्गोन्नतिः साधिता तथा व्यर्केन्दुसमश्चन्द्रशङ्कुः कल्पितस्तयोः स्पष्टक्रान्तिसमे अग्रांशमाने च प्रायः शृङ्गोन्नतौ व्यभिचाराभावात्, ततः स्पष्टभुजः = २, च

स्प क्रा ± र क्रा ± च शं त = २ च स्प क्रा ± २ र क्रा ± $\frac{\text{२अं ज्या. प}}{\text{१२०}}$

अयं ज्यात्मको भुजो द्विभक्त अंशाः=च स्प क्रा±र क्रा± $\frac{\text{अं ज्या. प}}{१२०}$

अत्र भिन्नदिशोरन्तरं समदिशोर्योग इत्येतदर्थं सषड्भसूर्य्यात् क्रान्ति-रानीता षडङ्गुल वृत्ते परिणामनार्थमनुपातो यदि व्यर्केन्दुदलपूर्णज्यया अयं तदा षडङ्गुलेन किं तत्स्वरूपं $\frac{\text{भु}\times६}{\text{२अंदज्या}} = \frac{\text{भु ६}}{\text{अंरा}\times३०} = \frac{\text{भु}}{\text{अंरा ५}}$

शेषविधीनां वासना सुगमा सिद्धान्तविधिना ॥

उपसंहार :—

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले।
विदग्धबुद्धिवल्लभे शृङ्गोन्नतिप्रसाधनम् ॥ ७ ॥

सुमतिहर्ष :—

इति ब्रह्मतुल्यवृत्तौ शृङ्गोन्नत्यधिकारः समाप्तः ॥ ७ ॥

सुधाकरः—श्रीकृपालु तनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणे वरा।
उच्चशृङ्ग गणितस्य वासना सूक्तियुक्ति सहिताऽत्रसङ्गता ॥

इति करणकुतूहल वासनावरविभूषणे विधुशृङ्गोन्नतिः ॥ ७ ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः शृङ्गोन्नत्यधिकारः सप्तमः ॥

ग्रहयुत्यधिकारः—८

भौमादीनां कलात्मकं बिम्ब साधनम्—

पञ्चाङ्गसप्ताङ्कशराः पृथक्स्थास्त्रिज्याशुकर्णान्तर सङ्गुणास्ताः।
त्रिघ्नैः पराख्यैर्विहृताः फलोनयुक्ताः पृथक्स्थास्त्रिभमौर्विकायाः ॥ १ ॥
कर्णेऽधिकोने त्रिहृता भवन्ति बिम्बाङ्गुलानीति कुजादिकानाम् ।

सुमतिहर्षः—आदौ भौमादीनां योजनमयानि बिम्बानि लिख्यन्ते— भौमस्य १८८५, साधिकं बुधस्य २७९, गुरोः १६६४९, शुक्रस्य १११० शनेः २९५५ भूमेः सकाशाद्यो दूरस्थस्तस्य बिम्बं सूक्ष्मं दृश्यते यस्तु भूमेरासन्नः स स्थूल इति, उक्तं च—(सि. शि. ग्र. यु. ७)

"उच्चस्थितो व्योमचरः सुदूरे नीचः स्थितः स्यान्निकटे धरित्र्याः।
अतोऽणु बिम्बं पृथुलं च भाति भानोस्तथासन्नसुदूरवृत्तेः" इति ॥

पञ्चकलापरिमितं ५ भौमस्य मध्यबिम्बं बुधस्य षट्कलाः ६ सप्त गुरोः ७ नव शुक्रस्य ९ पञ्च शनेः ५ ताः पञ्च कलाः पृथक्स्थाप्यास्त्रि-ज्याशीघ्रकर्णयोरन्तरेण गुणिताः स्वीकीयैस्त्रिगुणैः पराख्यैर्भक्ता यल्लब्धं तेन पृथकस्था ऊनयुक्ताः कार्याः यदि त्रिज्यातः १२० अधिकः कर्णस्तदा पृथक्स्था हीनाः कार्याः यद्यल्पस्तदा युक्ताः कार्याः ताः स्फुटा ग्रहाणां बिम्बकलाः स्युस्त्रिभि ३ भक्ता लब्धं भौमादिकानां बिम्बा-ङ्गुलानि भवन्ति। अथ गुरोर्मध्यबिम्बकलाः ७ त्रिज्याशीघ्रकर्णयो-रन्तरेण १५।९ गुणिताः १०६।३ गुरोः पराख्यं २३ स्त्रिगुणैः ६९ भक्ता लब्धम् १।३१ अनेन त्रिज्यातः कर्णस्याधिकत्वात्पृथक्स्था गुरो-र्मध्यबिम्बकलाः ७ ऊना जाता गुरोर्बिम्बकलाः स्पष्टाः ५।२९ त्रिविभक्ता जातानि स्पष्टानि गुरोर्बिम्बाङ्गुलानि १।४९। अथ शुक्रस्य मध्या बिम्बकलाः ९ पृथक्स्थाः ९ त्रिज्या १२० शीघ्रकर्णयो ८९।२३ रन्तरेण ३०।३७ गुणिताः २७५।३३ पराख्येण ८७ त्रिगुणेन २६१ भक्ता लब्धम् १।३ त्रिज्यातः १२० कर्णस्योनत्वात्पृथक्स्थाः ९ युताः १०।३ त्रिभिर्विभक्ता जातं शुक्रस्य बिम्बं स्फुटमङ्गुलात्मकम् ३।२१ एवं सर्वेषां बिम्बाङ्गुलानि कार्याणि ॥ १ ॥

युतिकालज्ञानम्—

दिवौकसोरन्तरलिप्तिकौघाद्गत्योर्वियोगेन हृताद्यदैकः ॥ २ ॥
वक्री जवैक्येन दिनैरवाप्तैर्याता तयोः संयुतिरल्पभुक्तौ ।
वक्रेऽथवा न्यूनतरेऽन्यथैष्या द्वयोरनृज्वोर्विपरीतमस्मात् ॥ ३ ॥

सुमतिहर्षः—ययोर्ग्रहयोर्युतिर्जिज्ञासिता ताविष्टदिने स्पष्टौ कृत्वा तयोरन्तरस्य कलाः भाष्येऽत्रायनदृक्कर्म कृत्वा ततो युतिः साध्येत्युक्तं तदपि समीचीनं यत उक्तम्—"दृक्कर्म कृत्वायनमेव भूयः साध्येति तात्कालिकयोर्युतिर्यदिति"। परमिह ग्रन्थकृता कर्मद्वयं सहैवोक्तं तेन केवलयोरेव साध्या चेद्भिन्नं भवेत्तर्हि आयनं दृक्कर्म कृत्वैव युतिः साधयितुं योग्या तत्रोक्तं च दृक्कर्मणायनभवेन न संस्कृतौ चेत्सूत्रे तदा त्वपमवृत्तजयाम्यसौम्ये। यद्यकृते दृक्कर्मणि युतिः साध्यते सापि भवति तदा सुस्थिरं तयोरन्तरकलाः भुक्त्यन्तरेण हृता लब्धं दिनादि, अथ यदि तयोर्मध्य एको वक्री तदा तद्गत्योरैक्येन भाज्या लब्धं दिनादि स्यात् तत्र योऽल्पभुक्तिर्ग्रहः सोऽधिकभुक्तिग्रहाद्नः, अथ यो वक्री स न्यूनः स्यात्तदा लब्धदिनैर्याता गता युतिर्ज्ञेया, अतोऽन्यथाल्पभुक्तौ ग्रहे वा वक्रिणि ग्रहेऽधिके गम्या ज्ञेया, अथ यदि द्वावपि वक्रिणौ स्तस्तदा विपरीतमिति तदन्तरकला गत्योरन्तरेण भाज्या लब्धदिनैरल्पभुक्तौ गहे न्यूने गम्या, अल्प भुक्तावधिके गतेत्यर्थः। तथा शके १५४१ चान्द्रवैशाखकृष्ण १४ रवावुदयेऽहर्गणः १५९२८८ गुरोः शीघ्रकेन्द्रम् १।३।९।५ शीघ्रफलम् ७।४२।३१ स्पष्टो गुरुः ११।१६।३९।७ गतिः ११।३१ शुक्रस्य मन्दफलम् १।३१। ९ धनं शीघ्रोच्चम् ८।२०।४९।५२ शीघ्रकर्णः ८९।२३ स्पष्टशुक्रः ११।१६।५१।२६ गतिः ६०।५७ स्पष्टोऽर्कः १।३।६।१२ अयनांशाः १८।१६।१० चरपलम् ८६ स्थापितो गुरुः ११।१६।३९।७ शुक्रः ११।१६।५१।२६ अनयोरन्तरम् ०।०।१२।१९ अस्य सवर्णिता विकलाः ७३९ गत्योरन्तरेण ४९।२६ सवर्णितेन २९६६ भक्ता लब्धं दिनादि ०।१४।५६ अत्राल्पभुक्तिर्ग्रहो गुरुरधिकभुक्तेः शुक्राद्नस्तेनाप्तदिनादिभिर्युतिर्गता ज्ञेया ॥ ३ ॥

युतिसाधनम्—

एवं लब्धैर्ग्रहयुतिदिनैश्चालितौ तौ समौ स्तः
कार्यौ बाणाविह शशिशरः संस्कृतोऽसौ स्वनत्या ।

एकान्याशौ यदि खगशरावन्तरैक्यं तयोर्यद्याम्यो-
दक्स्थं खचरविवरं सिद्धभक्तं कराः स्युः ॥ ४ ॥
ज्ञेयौ खेटौ निजशरदिशावेकदिक्त्वेऽल्पबाणो
व्यस्ताशः स्याद्वितरखचरादन्तरं स्यात्स्फुटेषुः ।
मानैक्यार्द्धाद्युचरविवरेऽल्पे भवेद्भेदयोगः
कार्यं सूर्यग्रहवदखिलं कर्म यल्लम्बनाद्यम् ॥ ५ ॥
मन्दाक्रान्तोऽनृजुरपि रविः शीघ्र इन्दुर्विकल्प्यो
नृज्योर्व्यस्तं भवति च युतोऽर्काद्विधुः सा शराशा ।
लग्नादल्पे निशि दिविचरे भार्द्धयुक्तादनल्पे
दृश्यो योगो निजदिनगते लग्नमर्कान्न खेटात् ॥ ६ ॥

सुमतिहर्षः—एवं प्रागवाप्तैर्ग्रहयुतिर्दिनादिभिश्चालितौ यातैष्यनाडीत्यादिना गतायां युतौ हीनौ युतौ वक्रिणि ग्रहे व्यस्तमुभयोर्वक्रिणोरपि व्यस्तं गतायां युतौ युतं गम्यायां हीनं कार्यमिति कृते समौ राश्यादिसदृशौ स्तस्ततस्तयोः प्राग्वद्बाणौ शरौ कार्यौ तयोर्मध्ये वक्ष्यमाणकल्पनया चन्द्रस्य वक्ष्यमाणप्रकारेणानीतया नत्या चन्द्रशरः भिन्नैकदिक्त्व ऊनयुतः कार्य इति संस्कार्य तौ तयोर्ग्रहयोः शरौ यद्येकदिक्कौ स्तस्तदा तयोरन्तरं कार्यं भिन्नदिक्कौ चेत्तदा तयोः शरयोर्योगः कार्यस्तदेव याम्योदक्स्थं दक्षिणोत्तरं खचरविवरं ग्रहान्तरं ज्ञेयं तदेवान्तरं चतुर्विंशतिभि २४ र्भक्तं हस्ता भवन्ति यथा पूर्वागतदिनादिभिः ०।१४।५६ चालितौ जातौ समौ गुरुः ११।१६।३६।१५ शुक्रः ११।३६।३६।१५ जातावेतत्कालीनौ पुनः स्पष्टौ कृत्वा शरौ साध्यावत्र स्वल्पत्वात् पुराकृतशीघ्रफलं मंदफलं ताभ्यां शरौ साध्येते स्वचश्चलफलैरित्यादिना शरः साध्यते गुरुपातः ९।८।०।० शीघ्रफलेन ७।४२।३१ व्यस्तः संस्कृतः धनत्वात्पाते हीनः जातो गुरोः स्पष्टपातः ९।०।१७।३२ स्पष्टगुरुणा ११।१६।३६।१५ युतोजातः सपातः ८।१६। ५३।४४ अस्य भुजज्या ११६।२६ क्षेपेण ७६ गुणा ८८४८।५६ कर्णेन १३५ भक्ता ६५।२६ त्रिभक्ताङ्गुलाद्यः शरः २१।४८ सपातो दक्षिणगोले तेन दक्षिणशरः शुक्रस्य पातः १०।०।०।० मन्दफलेन १।३१।११ युतः १०।१।३१।११ शीघ्रोच्चेन ८।२०।४९।५२ युतः ६।२२।२१।३ भुजज्या ४५।२८ क्षेपेण १३६ गुणिता ६१८३।२८ कर्णेन ८९।२३ भक्ता ६९।१० त्रिभक्ता २३।२३ अङ्गुलादिशरो

याम्यः। अथ लक्षणान्तरं ज्ञेयमिति यस्य ग्रहस्य दक्षिणशरः स दक्षिणस्थो ज्ञेयः यस्य सौम्यः स उदक्स्थो ज्ञेयः शरयोर्दिक्साम्ये यस्याल्पशरः स इतरग्रहाद्बृहच्छरग्रहादन्यदिक्स्थो ज्ञेयः। अथ याम्योत्तरस्थयोरन्तरे स्पष्टेषुः स्पष्टो बाणो ज्ञेयः स स्फुटशरो द्वयोर्दृश्या युतिर्भवति तस्माल्लम्बनादि साध्यम। उक्तं च—

"खेटौ तौ दृष्टियोग्यौ यदि युतिसमये कार्यमेवं तदैव"

(सि. शि. ग्र. यु. ८) इति तल्लक्षणमग्रे वक्ष्यति।

अथ लम्बनार्थं चन्द्रसूर्यकल्पना द्वयोर्भार्गग्रहयोर्मध्ये यो मन्दाक्रान्तो मन्दगतिको ग्रहः स रवि कल्प्यः यदि वा यो वक्री स शीघ्रो वा मन्दो वा रवेरन्यश्चन्द्रः कल्प्य उभयोर्वक्रिणोर्व्यस्तमिति यस्तु शीघ्रः स रविरन्यश्चन्द्रः प्रकल्प्य एवं कल्पयित्वा कल्पितार्कात्कल्पितो विधुर्यत्र यस्यां दिश्युत्तरतो दक्षिणतो वा व्यवस्थितः सा दिक् शरस्य ज्ञेया यस्तु सूर्यः स छाद्यश्चन्द्रश्छादक इति।

अथ लम्बनसाधनोपायः यो युतिसमयः समागतस्ता एव दर्शान्तघटिकाः कल्प्यास्ताभ्य इष्टघटीभ्यः सषड्भसूर्याल्लग्नं साध्यं सषड्भ सूर्यः कथं कृतो यतः सूर्यस्य रात्रावेव युतिर्दृश्या भवत्यतः सषड्भः कृतः कदाचित्सूर्यस्य रात्रावपि भचक्रवसाद्ग्रहस्यास्ततत्वाद्युतिर्न दृश्यते ग्रहस्य सूर्यदिने त्ववश्यं न दृश्यते तल्लक्षणं वक्ष्यति ततस्तल्लग्नं सायनं वित्रिभं कार्यं ततः समकला पूर्वविधिना सूर्य प्रकल्प्य तत्त्रिभोनलग्नकल्पितसूर्यान्तिभागेभ्यः सप्ताद्रय इति सकृत्प्रकारेण मध्यमलम्बनं स्पष्टलम्बनं कृत्वा युतिसमयघटिकासु कल्पितरविग्रहस्य प्राग्भाग ऋणं त्रिभोनलग्नेऽहीने सत्युभयथापि तुल्यं भवति पश्चिमत्रिभोनलग्नेऽधिके सति वा धनं कार्यं कल्पितरवेः सकाशादग्रेतनाः षड्राशयोऽधिकास्ततपृष्ठ भागस्थाः षड्राशयो न्यूना इति। अधिकोनताज्ञेया नतवङ्कानां सख्यायाः प्राङ्नतेस्त्रिभोनं न्यूनमेव भवति पश्चिमनतेर्वित्रिभमधिकमेव भवत्येतत्सर्वं सूर्यग्रहणे व्याख्यातं प्रायो यो यत्र राशौ भवति तस्मादग्रेतनाः षडधिका राशयस्ततपृष्ठषड्राशय ऊना एवेति भावः। एवं लम्बनसंस्कृतः स्फुटो भवति स एव सायनः लम्बनसंस्कृतकालान्यूनं वित्रिभं लग्नं कृत्वा नतांशाः कर्तव्यास्तन्नतांशान् शीघ्रग्रहस्य मध्यगतिपञ्चदशांशेन सङ्गुण्य त्रिज्यया विभजेत्सा कलादिका नतिः सा पुनः सार्द्धद्वयेन भक्ता सत्यङ्गुलादिनतिर्भवति तथा चन्द्रशरः संस्कार्यः। उक्तं च—

"दृक्क्षेप इन्दोर्निजमध्यभुक्तिस्तिथ्यंशनिघ्नौ त्रिगुणोद्धृतौ तौ। नती रवीन्द्वोरिति" सि. शि. सू. ग्र. ११॥

यथा युतिसमये रविरात्रिशेषघटी १४।५६ प्रमाणः लम्बनार्थमेतत्कालीन सूर्यः १।२।५१।५४ इष्टकालः १४।५६ अयनलग्नं तच्छुद्धसूर्यात्साध्य नतु कल्पितक्रान्तिस्तच्छुद्धसूर्यात्सुखार्थमुत्क्रमलग्नं सायनम् ९।२६। २।३९ अस्य क्रान्तिः १०।२०।१६ दक्षिणा नतांशाः ३४।५५।२५ उन्नतांशाः ५५।४।३५ उन्नतज्या ९८।५ मन्दोगुरुस्तेन सूर्यः कल्पितः शीघ्रः शुक्रः सचन्द्रः सायनो युतिसमयिको गुरुः ०।४।५२।२५ वित्रिभम् ६।२६।२१।३९ अनयोरन्तरम् ५।८।३०।४६ भुजः ०।२१।२३। १४ सप्ताद्रय इत्यनेन मध्यमलम्बनम् २।१० स्पष्टलम्बनम् १।५२ इदं ग्रहस्य शेषराशित्वात् प्राङ्नतं प्राग्लक्षणेन वित्रिभमपि न्यूनं तेनर्णं युतिसमयेगता युतिः शनिवार उदयाद्गतघट्यः ४५।४ मध्ये ऋणम् ४३।१२ स्पष्टो युतिसमयो नत्यर्थमेतत्कालीनः सूर्यः १।३। ४३।१२ सायनार्कः १।२१।१६।१७ वित्रिभम् ७।११।१७।३९ पूर्वनतांशाः ४०।२२ कल्पितचन्द्रमध्यगतिः ५९।८ तिथ्यंशेन ३।० गुणिताः १५८।८ त्रिज्यया भक्तं लब्धं फलम् १।१९ नतिः सार्द्धद्वयेन २।३० भक्ता अङ्गुलाद्या नतिर्याम्या ०।३१ अनया चन्दशरो याम्यः २३।३ संस्कृतः २३।३४ विशरयोः २३।४८ एकदिक्त्वादन्तरं याम्यम् १।४६ इदं याम्योत्तरं स्पष्टबाणश्चैकदिक्त्वादल्पशरो गुरुरुत्तरे शुक्रात् मानैक्यार्द्धात् २।३५ ऊनः स्पष्टबाणस्तेन भेदयोगः परं भचक्रवशाद्गुरोर्ग्रहस्य रात्रिस्तेनैतत्समये युतिर्नदृश्यते, निशीति सूर्यरात्रौ ग्रहयुतिकालीनलग्नाद्ग्रहेऽल्पे सति भार्द्धयुक्तात्सषड्भलग्नादनल्पे बहुतरे ग्रहे सति तत्रापि निजनिजगते ग्रहस्य दिने नतु ग्रहस्य रात्रौ योगो युतिदृश्या ज्ञेयान्यथा नेति भावः। अत्र ग्रहः ०।४।५५।२५ इष्टलग्नात् ९।२६।२१।३९ अधिकः सषड्भात् ३।२६।२१।३९ न्यूनस्तेन युतिर्न दृश्यातोऽन्यत्कर्म न कृतं पुनरुदाहरणान्तरं शाके १५४१ फाल्गुनशुद्धे १३ सोम उदये गताब्दाः ४३६ अहर्गणः १५९६२५ मध्यमाः गुरुशीघ्रफलम् ४।३९।३१ ऋणं रविः ११।१६।६।२८ गुरुः ८।०।५९।५८ शुक्रः १।६।२३।४० शुक्रमन्दफलम् १।२९।४५।४० कर्णः १८११० अयनांशाः १८।१६।५७ चरपलम् ६४ दिनमानम् २९।४८ रात्रिमानम् ३०।१२ चरपलसंस्कृतःसूर्यः ११।८।१४।१९ गतिः ५९।४१ गुरुः ०।१।

१९।१३ गतिः १३।२७ शुक्रः ०।१।५७।५७ गतिः ७३।४ उभयोः पूर्ववद्युतिदिनादि ०।३८।१४ गतं तेन फाल्गुनशुद्धे १२ रवावुदयाद्घटी २१।४६ समये युतिरत्र समयिका मध्यमाः स्पष्टाः कार्याः अत्र स्वल्पत्वाद्गत्या चालिता पलादि तदेव गृहीतं युतिसमयिकः सूर्यः ११।७।३६।१८ गुरुः ०।१।१०।५८ शुक्रः ०।१।१०।५५ पूर्ववच्छरौ गुरुशरोऽङ्गुलादिः २०।५६ शुक्रशरोऽङ्गुलादिः ११।३४ गुरोर्बिम्बम् १।३८ शुक्रबिम्बम् २।१८ लम्बनार्थं युतिसमयिकं सायनांशवित्रिभम् १।१२।५६।४१ पूर्ववदस्योन्नतांशाः ८१।२६।५२ ज्या ११८।१७ कल्पितसायनरविः ०।१९।२७।४८ वित्रिभयोरन्तरम् ०।२३।२८ खण्डकैर्मध्यमलम्बनम् २।२८ स्पष्टम् पश्चिमनतत्वाद्वित्रिभाधिक्याद्युतौ २१।४६ धनम् २३।४८ स्पष्टो युतिसमय एतत्कालीनार्कः ५।२५।५६ दिनशेषम् ०।६ लग्नवित्रिभम् २।२३।३६।५५ नतांशाः ५।३७।३७ चन्द्रमध्यमगतिस्तिथ्यंशेन ३।५७ गुणा २२।१३ त्रिज्या १२० लब्धम् ०।१२ सार्द्धद्वयेन २।३० भक्तं लब्धम् ०।४ याम्यं चन्द्रशरः ११।३४ याम्यः संस्कृतः ११।३८ याम्योत्तरमन्तरम् ९।१८ स्पष्टबाणः सिद्ध २४ भक्ते हस्तादि ०।९।१८ शुक्र उत्तरे मानैक्यार्द्धम् १।५८ शरादधिकं तेन भेदयोगो नास्ति परं नतादि उदाहरणार्थं कल्पितशरोऽङ्गुलादि १।० सूर्यग्रहणवत्साधनंमानैक्यार्द्धम् १।५८ शरेणोनः ०।५८ छन्नं द्विघ्नाच्छरादित्यादिना स्थितिघटिकाः ५।५६ अनया स्पष्टयुतिसमयः २३।४८ उभयोर्युतिः स्पर्शमोक्षकालौ, उदयाद्गतघट्यः १८।४२ स्पर्शः, उदयाद्गतघटीसमये २८।४४ मोक्षकालः।

अथ स्पष्टार्थं सूर्यगुरु स्पर्शकालीनौ सूर्यः ५।२५।५०।१२ गुरुः ०।०।१९।२० वित्रिभलग्नम् ०।२३।१३।३३ उन्नतांशाः ७४।३३।५१ ज्या ११५।१६ गुरुरविकल्पितवित्रिभलग्नान्तराखण्डकैः स्पष्टलम्बनम् ०।२४ पश्चिमनतत्वाद्धनं ग्रहस्य मध्याह्नासन्नत्वात्स्वल्पं स्पष्टः स्पर्शः १९।६ एतत्कालीनलग्नम् ३।२८।५६।४०। अथ ग्रहस्य दिनमानार्थमुदयलग्नं वित्रिभो ग्रहः सायनः ९।१९।२७।४ क्रान्तिः २२।१९।५१ याम्या नतांशाः ४६।५५।१० उन्नतांशाः ४३।५।० नतज्या ८७।२२ उन्नतज्या ८१।३७ क्षेपघ्नी नतशिञ्जिनीत्यादिना फलम् ६७।१३ कलाधनं दृक्कर्मसंस्कृतः ०।२।२८।४० उदयलग्नम्। अथास्तलग्नार्थं सत्रिभसायनो ग्रहः ३।१९।२७।४८ क्रान्तिरुत्तरा

२२।१९।५१ पूर्ववद् दृक्कर्मफलमृणम् २।१९ दृक्कर्मसंस्कृतः ०।१।८।२२ अस्तलग्नात्सषड्भः ६।१।८।२२ इदमस्तलग्नं सायनोदयलग्नम् ०।२०।३५।१ अस्य भोग्यमस्तलग्नस्य भुक्तम् २।२५ मध्योदया १५७७ एषां योगो गुरोर्ग्रहस्य दिनमानम् ३१।२ षष्टे शुद्धम् २८।५८ रात्रिमानमथवा सायनग्रहं सूर्यं प्रकल्प्य चरखण्डकैः दशगजदशेत्यादिनोत्पन्नैरश्चखण्डकैः पलानि प्रसाध्य चरपलयुतोनेत्यादिना दिनमानं साध्यं यथा सायनो ग्रहः ०।१९।४७।४८ चरखण्डकैः ५५।४४।१८ चरपलैरुत्तरैः ३५ दिनमानम् ३१।१० अथ स्पर्शनतार्थं दिनगतघटिकानयनं स्पर्शकालीनेष्टलग्नम् ३।२८।५६।४० उदयलग्नम् ०।२०।२५ अनयोरन्तरकाल ऊनस्य भोग्योऽधिक भुक्तयुक्तो मध्योदयाढ्य इत्यादिना भोग्यमुदयलग्नस्य भुक्तम् ३।२९ मध्योदयानां ५६० योगाद्घटी १६।० गुरोर्दिनघटिका द्युदलगतघटीनामित्यादिना दिनगतम् १६।० दिनार्धम् १५।३१ अनयोरन्तरं नतम् ०।२९ पश्चिमनतं खाङ्काहतमित्यादिना द्युदलं ग्रहदिनार्द्धम् १५।३१ ग्राह्यं जातं मोक्षवलनं दक्षिणम् १।१२ मध्याह्नासन्नत्वादल्पं स्पर्शकालीनग्रहः ०।१९।२७।१३ कोटिज्या ११३।६ आयनं सौम्यम् २२।३९ मानैक्यार्द्धम् १।५८ स्पष्टवलनमुत्तरम् ०।४३ अथ मोक्षकालीनाः २८।५४ सूर्यः ५।२६।०।२० गुरुः ०।१९।२९।२२ वित्रिभलग्नम् २।२१।८।२७ अस्य क्रान्तिः २३।१९।१७ पूर्ववदुन्नतज्या ११९।४६ पूर्ववत्स्पष्टं वलनं धनम् ३।५७ ग्रहस्य साध्यत्वात्परमं स्पष्टो मोक्षकालः ३२।५१ उदयाद्गतघटी ज्ञेया एतत्कालीनोर्कः ५।२६।४।१५ गुरु ०।१९।३०।१४ रात्रिगतघटी ३०।३ क्रमलग्नम् ६।१२।३६।४५ उदयलग्ने ०।३।३५।१ ष्ट ६।१२।३६।४५ पूर्ववदन्तरकालः २९।४६ ग्रहस्य दिनगतघट्यः प्राग्वन्नतम् १४।४५ पश्चिमं खाङ्काहतमित्यादिना द्युदलेन ग्रहस्य १५।३१ मोक्षवलनं याम्यम् २४।१९ संध्यत्वात्परमं मोक्षकालीनग्रहः ०।१९।३०।१४ कोटिज्या ११३।१४ आयनं सौम्यम् २२।३८ स्पष्टं मोक्षवलनं याम्यम् ०।३० एवं भेदयोगे कर्तव्यताप्रकारो ज्ञेयः। अथ यो ग्रहश्चन्द्रः कल्पितः स चेदल्पभुक्तिर्वक्रो भवति तदा प्राच्यां दिशि स्पर्शः प्रतीच्यां मोक्षः, अधिकभुक्तिस्तथा मार्गीचेत्तदा प्रतीच्यां स्पर्शः प्राच्यां मोक्षः।

उपसंहार—इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले
विदग्धबुद्धिवल्लभे ग्रहोत्थयोगसाधनम् ॥ ८ ॥

सुमतिहर्ष—इति करणकुतूहलवृत्तौ गणककुमुदकौमुद्या युत्यधिकारोऽष्टमः ॥ ८ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थः वासना च सर्वा सिद्धान्तोक्तैव ज्ञेया ।

श्रीकृपालुतनये ननिर्मिते वासनावर विभूषणे वरा ।
खेटयोग गणितस्य वासना सुक्तियुक्ति सहिताऽत्रसञ्जता ॥

इति करणकुतूहल वासनावरविभूषणे विधुशृङ्गोन्नतिः ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः युत्यधिकारः अष्टमः ॥

पाताधिकारः—९

पातसम्भवं गतगम्यज्ञानञ्च—

विनासपातेन्दुमिहायनांशकैर्युतो रविः शीतरुचिश्च गृह्यते ।
समायनत्वे व्यतिपातवैधृताह्वयस्तदैक्ये रसभेऽर्कभे क्रमात् ॥ १ ॥

पातस्तदूनाधिकलिप्तिकाभ्यो भुक्त्यैक्यलब्धैष्यगतैरहोभिः ।

सुमतिहर्ष—आदौ पीठिका लिख्यते—शाके १५३९ लौकिक-कार्तिककृष्णे १० भौमे गताब्दाः ४३४ अहर्गणः १५८७५१ उदयकाले मध्यमा योधपुरे स्पष्टास्तत्र रविः ६।१२।४५।३२ चन्द्रः ४।१२।२।४७ अयनांशाः १८।१४।३४ पातः २।१।२।३१ सायनार्कः ७।१।०।६ चन्द्रः ५।०।१७।२१ ॥

इह पातसाधने सपातेन्दुं विना रविचन्द्रश्चायनांशैर्युत एवगृह्यते यत्र सपातचन्द्र इति नोक्तं तत्रायनांशयुक्तो रविचन्द्रश्च ग्राह्यस्तदैक्ये तयोः सायनांशयो रविचन्द्रयोर्योगे रसभे षड्राशितुल्येऽर्कभे द्वादशराशि-तुल्ये व्यतिपातवैधृताह्वयौ क्रमात्स्यातां यत्र षड्राशितुल्यो योगस्तत्र व्यतिपातनामा पातः यत्र द्वादशराशितुल्यो योगस्तत्र वैधृतिनामा पातः स्यात्, क्व सति समायनत्वे सति यदा सूर्यचन्द्रयोः समक्रान्ती भवतस्तदेत्यर्थः । समक्रान्तित्वे पातसम्भवो ज्ञेय इत्यर्थः । तदूनेति-तयोर्योगे षड्राशिभ्यस्तथा द्वादशराशिभ्यश्चोना अधिका वा लिप्ताः कलास्ता रविचन्द्रयोर्भुक्तियोगेन भाज्या लब्धं दिनादिकं ग्राह्यम् ऊनासु कलासु भोग्यं दिनादिकं ज्ञेयमधिकासु गतं दिनादिकं ज्ञेयम् ॥ १ ॥

पातस्य गतैष्यज्ञानं—

तात्कालिकौ तौ च तमश्च कृत्वा प्राग्वत्प्रसाध्यो विशिखः कलादिः॥२॥

ओजे पदे युग्मपदे विधुश्चेदेकान्यगोलश्च सपातचन्द्रात् ।
ज्ञेयस्तदानीं खलु यातपातो गम्योऽन्यथात्वेन ततोऽपि कालात् ॥ ३ ॥

सुमतिहर्ष—तात्कालिकाविति । तैः पूर्वागतैरेष्य गतदिनादिभिस्तौ चन्द्राकौं तमश्च पातं च यातैष्यनाडीगुणितेत्यादिना तात्कालिकान्

कृत्वा प्राग्वत् खण्डकेभ्यः कलादिविशिखः शरः साध्यः । अथ गतगम्यलक्षणं चेद्ययोजपदे सायनो विधुः स्थित्वा सपातचन्द्रादेकगोले भवति तथा युग्मपदे स्थित्वा सपातचन्द्रादन्यगोले भवति तदा प्रागागतात्कालाद्यस्मिन् काले द्वादश षड्राशयो जातास्तस्मादित्यर्थः वक्ष्यमाणकालेन गतपातो ज्ञेयः, अन्यथा तु चन्द्रो विषमपदे स्थित्वा सपातचन्द्रादन्यगोले तथा युग्मपदे स्थित्वैकगोले तदा पूर्वगतकालादेवैष्यः पातो ज्ञेयः । सायनांशो रविः ७।१।०।६ सपातचन्द्रः ५।०।१७।२१ अनयोर्योगः १२।१।१७।२७ अथ द्वादशराशितोऽधिकस्तेनाधिकमंशादि १।१७।२७ कला ७७।२७ चन्द्रार्कभुक्तियोगेन ८०१।५८ भक्ते लब्धं दिनादि ०।५।४७ द्वादशभ्योऽधिकत्वाल्लब्धदिनादिभिः ०।५।४७ गतः पातः । अथ तात्कालिककरणम् । नवम्यां शेषरात्रिघटी ५।४७ यातैष्यनाडीत्यादिना तात्कालिकोऽर्कः ६।१२।३९।४५ चन्द्रः ४।१०।५१।१७ पातः २।१।२।१२ सपातचन्द्रात्खाश्वाः शराङ्गानि खण्डकेभ्यः सायनोऽर्कः ७।०।५४।१९ चन्द्रः ४।२९।५।५१ योगः ०।०।०।० कलादिशरो याम्यः ५७।२९ सपातचन्द्रः ६।११।५३।३० याम्यगोले सायनचन्द्रोऽत्र ४।२९।५।२१ समपदे द्वितीयपद उत्तरगोले तेन समपदत्वात्स पातचन्द्रभिन्नगोलत्वाद्गतः पातः पूर्वागतादपि ०।५।४७ वक्ष्यमाणैः स्पष्टादिभिरिति ॥ ३ ॥

सुधाकरः—स्पष्टार्थमेतत् ।

अत्रोपपत्तिः । ओजे यदि चन्द्रस्तदोत्तरोत्तरं क्रान्तिर्वर्द्धते सपातचन्द्रश्च तद्दिगेव ततः सा क्रान्तिः शरयुक्ता ततोऽपि महती तेन यातः पातः । एवं समे चन्द्रे क्रान्तिरपचीयते सपातचन्द्रस्य भिन्नगोलस्थत्वात् शरोना ततोऽप्यल्पाऽतस्तदापि यातः पातस्तत उपपन्नम् ।

क्रान्तिखण्डस्य धनर्णत्वम्—

क्रान्तीषुखण्डानि धनं क्रमेण व्यस्तानि तानि स्वमृणं प्रकल्प्यम् ।

सुमतिहर्षः—क्रान्तिखण्डानि चेषुखण्डानि तानि क्रमात् षट्क्रान्तिखण्डानि धनसंज्ञानि तान्येव षडुत्क्रमाणि ऋण संज्ञानि पुनरपि षट्क्रमाद्धनसंज्ञानि तान्युत्क्रमाणि पुनः षड्ऋणसंज्ञानि कल्प्यानि, एवं चतुर्ष्वपि पदेषु गणनाधोऽधः संस्थाप्य कार्या, एवं शरखण्डकानामपि स्थापना धनर्णसंज्ञा चतुर्ष्वपि पदेषु कार्या ॥

गत खण्ड साधनम्—

चन्द्रस्य पातेन्दुयुतस्य भागास्तिथ्युद्धृताः स्युर्गतखण्डकानि ॥ ४ ॥

सुमतिहर्षः—सायनचन्द्रस्य तथा च सपातचन्द्रस्य सर्वस्य च ये भागास्ते पृथक् पञ्चदशभिर्भाज्या लब्धमुभयत्र स्वस्वगतखण्डकानि ज्ञेयानि तेषां पूर्वोक्तधनर्णसंज्ञितस्थापितखण्डकेभ्यः गणनात् क्रमादुत्क्रमात्क्रमादुत्क्रमाच्च कार्या शरस्य खण्डार्थं सपातचन्द्रः ६।११।५३।३० भागाः १९१।५३।३० पञ्चदश १५ भक्ता लब्धम् १२ शेषम् ११।५३।३१ यथा सायनचन्द्रस्य ४।२९।५।२१ भागाः १४९।५।२१ तिथिभक्ता लब्धम् ९ गतखण्डकानि शेषम् १४।५।२१ क्रान्तिखण्डतो गणनाकृता दशमं खण्डं भोग्यं द्वितीयपदस्य चतुर्थखण्डम् २९९ ऋणसंज्ञकं शरखण्डकेषु तु त्रयोदशं शरखण्डकं तेषु शरखण्डकेषु गणना कृता तृतीयपदस्य प्रथमखण्डं ७० धनसंज्ञकमथ भक्तशेषमुभयत्र क्रान्तिशेषम् १४।५।२१ शरशेषम् ११।५३।३० ॥ ५ ॥

पातगतैष्य साधनम्—

क्रमोत्क्रमात्तद्गणना च कार्या चापाह्वयाः शेषलवा व्यतीते ।
पातेऽथ गम्ये तिथितश्च्युतास्ते द्विधा द्विधा भोग्यदलादिकानि ॥ ५ ॥
द्वित्रीणि विन्यस्य पृथग्दलानि गम्यानि गम्येऽथ गते गतानि ।
एकस्थमेवास्य तु भोग्यखण्डं यस्याल्पकाश्चापलवा भवन्ति ॥ ६ ॥
विश्वांशकेनापम भोग्यकस्य भोग्यादितः क्रान्तिदलानि तानि ।
संस्कृत्य पूर्वं शरखण्डकैश्च स्युः संस्कृतानि क्रमशः स्फुटानि ॥ ७ ॥

सुमतिहर्षः—गते पाते उभयत्र ये शेषभागास्ते चापाह्वयाश्चापांशका ज्ञेयाः । अथ गम्ये पाते पूर्वागताः शेषांशा पञ्चदशभ्यः १५ शुद्धाः शेषं चापांशसंज्ञका उभयत्र ज्ञेयम् । एवं क्रान्तेः शरस्य च चापांशान् विधायैकान्ते स्थापयेद्यथात्र गतपातत्वाच्छेषांशका एव चापांशा एवं चापांशाः क्रान्तेः १४।५।२१ शरस्य च ११।५३।३० ततः क्रान्तेः शरस्य च भोग्यखण्डमादीकृत्य द्वित्रीणि खण्डानि द्विधा पृथग्विन्यसेत्, यदि पातं गतलक्षणं भवति तदा गतखण्डानि एष्यलक्षणे पाते एष्यलक्षणानि खण्डानि विन्यसेत्, शरक्रान्त्योर्मध्ये यस्य चापांशाः स्वल्पास्तस्य भोग्यखण्डमेकस्थमेव स्थाप्यमन्यानि द्विधा २ यथागतानि तेषां स्थापित खण्डानां धनर्णसंज्ञा पूर्वं कृतैव स्वल्पशरे खण्डकं द्वयं महच्छरे त्रय

एव मध्यमा भवन्ति । अनया रीत्या संस्थाप्य स्फुटानि कार्याणि अत्र गतपातत्वाद्भोग्यखण्डमादीकृत्य गतखण्डकानि द्विधा स्थाप्य तानि शरस्य स्वल्पचापांशत्वाच्छरस्य भोग्यखण्डमेकत्र स्थापितं शेषाणि गतखण्डकानि द्विधा स्थापितानि धनर्णसंज्ञा पूर्वं कृतैव यन्त्रतो ज्ञेया । अथ स्पष्टक्रिया । विश्वांशकेनेति । अपक्रमस्य क्रान्तेर्भोग्यखण्डस्य विश्वांशकेन १३ त्रयोदशांशकेन भोग्यादीनि क्रान्तिखण्डानि पूर्वं संस्कृत्यैकजात्योर्द्धनरूपयोः ऋणरूपयोर्वान्तरमन्यजात्योर्धनर्णरूपयोर्योग एवमेकगोले वैपरीत्यमेकजात्योर्योगो भिन्नजात्योर्वियोगो ग्रन्थेऽनुक्तं भाष्य उक्तत्वात्कार्यम, एवं संस्कृतानि क्रान्तिखण्डानि स्फुटानि स्युः पुनः शरखण्डकैः संस्कृतानि स्फुटतराणि भवन्ति, संस्कारास्त्वेकजात्योर्योग एवमन्यगोले त्वेकजात्योर्योगोऽन्यजात्योरन्तरमिदमेव सिद्धं भाष्य उक्तत्वात् । यथा क्रान्ति भोग्यखण्डस्य विश्वांशकेन १३ शरांशकेनर्णरूपेणान्यान्यृणरूपाण्यन्यगोलत्वाद्युक्तानि, यथा विश्वांशकेन युक्ता शरखण्डकैर्भिन्नगोलत्वादेकजात्योरन्तरं भिन्नजात्योर्योगः ॥ ७ ॥

पातमध्यानयनम्—

आद्येऽल्पचापांशमितो गुणः स्याच्चापान्तरांशाः समखण्डकेषु ।
तिथिच्युतास्ते विषमेषु जह्यात्स्वांशघ्नखण्डानि तिथिघ्नबाणात् ॥ ८ ॥

शेषं त्वशुद्धेन हृतं लवाद्यं संशुद्ध खण्डांशयुतं विभक्तम् ।
गत्याविधोः षष्टिगुणं गतैष्यैर्लब्धैर्दिनैः स्यात्खलु पातमध्यम् ॥ ९ ॥

सुमतिहर्ष :—आद्येऽल्पचापांशमितो गुणः स्यादुभयोश्चापांशान्तरेण विचतुर्थे सति सम्भवे षष्ठं खण्डं गुणयेत्ते चापांशसमखण्डगुणरूपाः पञ्चदशभ्यः संशोध्य शेषेण तृतीयपञ्चमखण्डं गुणयेदेवं सर्वाणि सङ्गुण्य स्फुटानि च स्वांशघ्नसंज्ञकानि भवन्ति । एवं गुणकल्पनायां कृतायां किं कार्यमित्यत आह—जह्यादिति-तानि स्वांशघ्नखण्डानि पञ्चदशघ्नबाणात् पञ्चदशगुणितचन्द्रशरकलामध्ये यावन्ति शुद्ध्यन्ति तावन्ति शोधयेत्,शेषमशुद्धेन स्फुटखण्डकेन भजेन्नतु स्वांशघ्नेन फलं लवाद्यं ग्राह्यं तद्विशुद्धखण्डांशयुते यावन्ति खण्डानि शुद्धानि तेषां ये गुणाश्चापांशोद्भवास्तेषां योगं कृत्वा तैरंशैर्युतं कुर्यात्ततः षष्ठ्या सङ्गुण्य चन्द्रगत्या भजेद्दिनादिकं ग्राह्यं पूर्वं चेत्पातस्य लक्षणं गतमागतं तदा यस्मिन् काले द्वादशराशयो जातास्तस्मात्कालादधुनागतैर्दिनादिभिर्गतैः पातमध्यं स्यादित्यर्थः । अथ चेदेष्यलक्षणं तदा पूर्वोक्तकालादेतावद्भिर्दिनैर्गम्यैः पातमध्यं स्यादित्यर्थः । अथ तिथिघ्नबाणस्य ८३२।१५ स्वल्पत्वात्खण्डानि न शुद्धयन्ति तेन खण्डकानां गुणकान् कृत्वानेन शेषम् ८३२।१५ अशुद्धस्फुटखण्डकेन ३९२ भक्तं लब्धं लवादि ०।२७।२३ गुणकाभावाच्छुद्धखण्डांशानामिति ताः षष्टिगुणाः चन्द्रगत्या ७४१।५० भक्तं लब्धं दिनादि ०।१०।१८ एभिः पूर्वकलादपि ५।४७ गतपातत्वात् पातमध्यं गतमेवं कार्तिककृष्णे नवम्यां शेषरात्रि घटी १६।५ समये पातमध्यं ज्ञेयं पातमध्यसमयिकाद्रविचन्द्रपातान् तात्कालिकान् कृत्वा रवेः क्रान्तिः साध्योभयोः क्रान्तिसाम्यं तदा पातमध्यं शुद्धं नान्यथा यथा रविः ६।१२।२६।४२ चन्द्रः ४।८।१०।१० पातः २।१।१।३२ सूर्यक्रान्तिः १२।५४।३१ सूर्यक्रान्तिः १२।५४।३२ उच्चं शरः ४८।४८ कलादि दक्षिणं शर संस्कृता क्रान्तिः १२।११।४३ सूर्यक्रान्ति ११।५६।४२ उभयोः साम्यं स्वल्पत्वान्न दोषाय ॥ ९ ॥

विशेषः—

अपक्रमस्य भोग्यकं यदेषु खण्डतश्च्युतम् ॥
गतैष्यताविपर्ययात्तदात्र पातसाधने ॥ १० ॥

सुमतिहर्ष—चन्द्रक्रान्तेर्यद्भोग्यखण्डं तद्यदा शरखण्डाद्भोग्याच्छुद्ध्यति तदा गतैष्यस्य व्यत्ययत्वं स्याद्गतः पात एष्यो ज्ञेय एष्यो गतो ज्ञेयः ॥ १० ॥

सुधाकर—सर्वं यथा क्रमेण स्पष्टम् । अत्रोपपत्तिः यस्मिन्समये सायनरविशशियोगो भार्द्धं वा चक्रं तदा शरसममेवस्पष्टक्रान्त्यन्तरं तत्र पञ्चदशभागवृद्ध्या चन्द्रस्य मध्यम क्रान्तिखण्डानि शरखण्डकैः संस्कृतानि स्पष्टक्रान्तिखण्डानि कृत्वा ततस्तत्स्थानीयै रविक्रान्तिखण्डकैः संस्कृत्य क्रान्त्यन्तरखण्डकानि कृतानि रविक्रान्ति खण्डानयने यावच्चन्द्रगतिः पञ्चदश भागसमाभवेत् तावद्रविगतिः $=\frac{१५}{१३}$ ततोऽनुपातो यदि पञ्चदशभागैर्भोग्यखण्डं तदा रविगतिभागैः किं लब्धं भोग्यखण्ड त्रयोदशांशसमं क्रान्तिखण्डं प्रथमं उत्तरोत्तरं शोधनादिना सर्वाणि क्रान्तिखण्डानि त्रयोदशांशसमान्येव । अथानन्तरानीतशरसमं

क्रान्त्यन्तरमपचीयमानेन यदा शून्यं स्यात्तदैव क्रान्तिसाम्यस्य मध्यकालस्तदर्थमिष्टकालात्स्वदेशोदयैर्लग्नसाधनवत् क्रान्त्यन्तरखण्डैर्गते पाते शेषांशैर्गम्ये शेषांशोनपञ्चदशभिः क्रियोत्पाद्यते तद्यथा पञ्चदशांशैर्भोग्यखण्डं तदा शेषाषांशैर्वा शेषोनपञ्चदशभिरथवा चापाद्यैः किं गते गम्ये वोभयत्र शेषांशसम्बन्धिक्रान्त्यन्तरगतिस्तत्स्वरूपं $= \frac{\text{भो. चा}}{\text{१५}}$

एतच्छरे शोधिते जातं $= \frac{\text{१५श. भो. चा}}{\text{१५}}$ ततोऽन्यानि खण्डानि समच्छेदविधिना पञ्चदशगुणानि विशोध्य शेषैरनुपातो यदि अशुद्धखण्डेन पञ्चदशांशास्तदा शेष पञ्चदशांशेन किं लब्धं शेष सम्बन्धिनः अंशाः $= \frac{\text{शे}}{\text{अ ख}}$ ततो विशुद्धांशसंख्याभिर्युता अंशा ये तैरनुपातः कालसाधनार्थं यदि चन्द्रगतिकलाभिः षष्टिघटिकास्तदांशकलाभिः किं लब्धः कालो गतैष्यः $= \frac{\text{अं} \times \text{६०} \times \text{६०}}{\text{च ग क}}$ दिनार्थ षष्टिविभक्तेनोपपन्नं संस्कारे भोग्य खण्डानामृगत्वाद्विपरीता क्रियेत्यादिनां वासना सरला ॥

स्थितिसाधनम्—

अशुद्धखण्डभाजितास्त्रिखाश्विदस्ननाडिकाः ।
स्थितिश्च मध्यपूर्वतोऽग्रतोऽपि तत्प्रमाणिका ॥ ११ ॥

सुमतिहर्षः—त्रिखाश्वि २०३ हताः नाडिकाः पूर्वागतेनाशुद्धखण्डेन भाज्या लब्धं घट्यादि मध्यकालात्पूर्वं स्थितिस्तत्प्रमाणिका तावदेव मध्यकालादग्रतोऽपि स्थितिर्भवति यथा २२०३ अशुद्धखण्डेन ३२९ भक्ता लब्धम् ५।३७ स्थितिः गतपातत्वान्मध्यकालमध्ये १६।५ हीने पातान्तः १०।२८ युतेपातादिः १२।४२ उदयाद्गतघटी ३८।१९ समये स्पर्शः, उदयाद्गतघटी ४३।५५ समये पातमध्य उदयाद्गघटी ४२।३२ समये पातमोक्षः ॥ ११ ॥

शुद्धखण्ड विचारः—

यदाखिलेषु खण्डकेष्विहाद्यखण्डजातिषु ।
च्युतेष्वपीह शेषकं खनागसागराधिकम् ॥ १२ ॥
तदा न पातसम्भवो यदास्तिसम्भवस्तदा ।
विशुद्धखण्डभागतो गतैष्यकालसाधनम् ॥ १३ ॥

सुमतिहर्षः—यदा पञ्चदशगुणितानां मध्ये स्वगुणकगुणितेष्वखिलेष्विह च्युतेषु शुद्धेषु सत्सु कथम्भूतेषु खण्डेष्वाद्यखण्डजातिष्वाद्यमिति क्रमेण धनरुपेषु षट्सु च्युतेषु खण्डेष्वथवा क्रमेण रुपेषु षट्सु च्युतेषु बाणशेषं खनागसागरेभ्यो ४८० यद्यधिकं भवति तदा पातसम्भवो नास्ति यदा सर्वेषु खण्डेष्वशुद्धेषु बाणशेषकं खनागसागरेभ्यो ४८० ऽल्पं भवति तदा सम्भवोऽस्ति । अथैवं विधिपातसम्भवे गतगम्यकालसाधनमाह–विशुद्धखण्डभागतः शरमध्ये यानि गुणकगुणितानि खण्डकानि शुद्धानि तेषां गुणकभागादि प्रतिखण्डानामेकीकृत्य संशुद्धखण्डं शरयुतं विभक्तं गत्या विधोः षष्टिगुणमित्यनेन प्रकारेण गतैष्यसाधनं कार्यं गतैष्यतालक्षणं प्राग्वत् ॥ १३ ॥

पातसम्भवं स्थितिसाधनम्—

तथा शरावशेषकं खनागवेदतश्च्युतम् ।
नवघ्नमन्त्यखण्डहृद्दलीकृतं स्थितिस्तदा ॥ १४ ॥

सुमतिहर्षः—येन शरेण पातसम्भवस्तच्छेषं खनागवेदतः ४८० च्युतं संशोध्य यच्छेषं तन्नवघ्नं नव ९ गुणं कार्यमन्त्यखण्डकेन भाज्यमाप्तस्य फलस्य घट्यादिकस्यार्द्धं स्थिति स्याद्यथा मध्याह्लात्पूर्वतः परतश्च भवति पातमध्यात्पूर्वं स्पर्शः पातमध्यात्पश्चान्मोक्षः ॥१४॥

क्रान्तिसाम्यं स्थितिलक्षणञ्च—

मानयोगखण्डतो यावदल्पमन्तरम् ।
क्रान्तिसाम्यमेव तत्तावदेव हि स्थितिः ॥ १५॥

सुमतिहर्षः—चन्द्रसूर्ययोर्मानयोगार्द्धाद्बिम्बैक्यार्द्धाद्यावत क्रान्त्यन्तरं स्वल्पं भवति तावत् क्रान्तिसाम्यमेव ज्ञेयम् । तावदेव तस्य पातस्य स्थितिरस्तीति ज्ञेया, अङ्गुलाद्यविवेकार्द्धं त्रिगुणं सत्कलादिकं भवति क्रान्त्यन्तरस्य कलादिकत्वात् । अथ पातस्य फलं सिद्धान्ते—

"पातस्थितिकालान्तरमङ्गलकृत्यं न शस्यते तज्ज्ञैः ॥
स्नानजपहोमदानादिकमत्रोपैति खलु वृद्धिम्" ॥ १५ ॥

इतीह भास्करोदित इति स्पष्टार्थमेव ॥

अथ पुनरुदाहरणं शाके १५४३ श्रावणशुक्ला ९ भौमे घट्यः १६।३३ विशाखा १२।५४ शुक्लः १५।२६ घट्यः ३८।४२ गताब्दाः

४३८ अहर्गण: १६१२३० मध्यम: सूर्य: ३।१६।५६।१६ चन्द्र: ६।२६।१८।३० पात: ४।१३।४५।३४ उदये स्वदेशीया अयनांशा: १८।१८।२१ चरपलमृणम् ९२ चरपल संस्कृत: सूर्य: ३।१५।५१।५७ गति: ५७।२ चन्द्र: ७।०।२०।४ गति: ८२९।३५ पात: ४।१३।४५।३० सायनार्क: ४।४।११।२३ चन्द्र: ७।१८।५४।१५ योग: ११।२३।५।३८ द्वादशराशिभ्य: १२ शुद्धोऽशादि: ६।५४।२२ अस्य कला: ४१४।२२ गत्योरैक्येन ८८६।३७ भक्ता लब्धं दिनादि ०।२७।२ द्वादशभ्य: क्रमो योगस्तेन गम्यं ज्ञेयम् ०।२७।२ एतत्कालीन: सायन: सूर्य: ४।४।३८।२ चन्द्र: ७।२५।२१।५१ पातो निरयण: ४।१३।४६।५९ सपात चन्द्र: ११।२०।५८।२९ बाण: कलादि: ४२।४४ याम्य:, अथ पातस्य गतैष्यज्ञानं सायन चन्द्रोविषमे पदे सपातचन्द्रादेक गोले तेन गतपातो ज्ञेय: । अथसाधनं सायनचन्द्रस्य सर्वभागा: २३५।२१ ५१ तिथिभक्ता लब्धं क्रान्तेर्गतखण्डकानि १५ भोग्यखण्डम् २३६ शेषम् १०।२१।५१ अस्यसपातचन्द्रस्य भागा: ३५०।५८।२९ तिथि १५ भक्ते लब्धम् २३ शरस्य गत खण्डकानि भोग्यखण्डकमृणम् ७० शेषम् ५।५८।२९ गणना पूर्वस्थापितखण्डकेभ्यो धनर्णसंज्ञा च कार्या गतपातत्वादुभयत्र ये शेषांशास्त एव चापांशा ज्ञेया: शरस्याल्पचापांशत्वाद्भोग्यखण्डं शरस्यैकस्थं गतपातत्वाक्रान्तिशरखण्डकानि गतानि द्विस्थापितानि द्वित्रीणीत्युक्तत्वात्खण्डद्वयं द्विधा स्थापितमल्पशरत्वात्पूर्वमुदाहरणं भाष्याद्यपेक्षया कृतमिदानीं सर्वसम्मतमुच्यते शरसंस्कारविषये विश्वांशकेनापमभोग्यस्यैतस्यापि संस्कारेऽपि गोलस्यापेक्षया कर्त्तव्या किन्त्वेकजात्योर्योगो भिन्नजात्योरन्तरमित्यर्थ: । उभयोर्धनरूपयोस्तथार्णरूपयोर्योग एव कार्य: भेदेऽन्तरं कार्यमित्यर्थ इति सर्वसम्मितसंस्कार: । अथ क्रान्तिभोग्यखण्डस्य २३६ विश्वांशकेन धनरूपेण धनसमरूपाणि क्रान्ति खण्डानि पूर्वस्थापितान्येकजातित्वाद्युतानि तान्येव शरखण्डकै: पूर्वस्थापितैऋणरूपैभिन्नजातित्वाद्रहितानि गोलापेक्षया न कृता । अथ शरम् ४२।४४ पञ्चदशगुणितस्याल्पत्वा ६४।१० दाद्येचापांशमिति प्रकारो न कृतस्तेन शरशेषम् ६४१।० अशुद्धस्पष्टखण्डेन १८४।९ भक्तं लब्धं लवाद्यम् ३।२८।२५ षष्टिगुणम् २०८।५१ चन्द्रगत्या ८२९।३५ भक्ते लब्धं दिनादि ०।१।१५ एभिर्गत: पात: पूर्वकालाद्यस्मिन्कालयोगे द्वादशजातास्तस्मादिति तेन श्रावणशुद्धे ९ भौम उदयाद्गतघटी २२ समये रवियोगे द्वादशजाता अत्र

कालात् ०।१५।१३ एभिर्गत: पातोऽत्र दिन उदयागद्गतघट्य: १२।४९ समये पातमध्यं प्रतीत्यर्थमेतत्कालीना: सायनौ रविचन्द्रौ पातश्च सूर्य: ४।४।२२।३४ चन्द्र: ७।२१।५१।२८ पात: ४।१३।४६।११ रवे: क्रान्ति: १९।१८।५३।३० अंशादि चन्द्रस्य १८।२९।५३।३० अंशादिचन्द्रस्य १८।२९।५३ याम्या याम्यशरेण ५९।१८ संस्कृता १९।२९।११ उभयो: क्रान्त्योरन्तरं विकला: ०।१८ अन्तरस्य स्वल्पत्वान्न दोष उभयो: क्रान्तिसाम्यं जातं तेन शुद्धमिदं साधनं जातम् । अथ स्थितिसाधनम्-त्रिखाश्विदस्रनाडिका: २२०३ अशुद्धखण्डेन १८४।९ भक्ता लब्धं घट्य: ११।५७ मध्यकाल: १२।४९ अनयोरन्तरमुदयाद्गतनाड्य: ०।५२ समये पातस्पर्शकाल: युते मोक्षकाल: २४।४६ समये मोक्ष: रविबिम्बम् ११।१२ चन्द्रबिम्बम् १०।१९ योग: २१।३१ अस्यार्द्धमङ्गुलादि १०।४६ त्रिगुणम् ३२।१८ स्पर्शकालीन: सूर्य: ४।४।१२।१२ चन्द्र: ७।१९।६।१५ पात: ४।१३।४५।३८ रविक्रान्ति: १९।३१।५१ सौम्या चन्द्रक्रान्तिर्याम्या १७।४६।३४ याम्यशर: कलादि ६७।४५ स्पष्टा क्रान्ति: १८।५४।१९ क्रान्त्योरन्तरम् ०।२२।३२ मानैक्यम् ३२।२१ अत: क्रान्ते साम्यं स्यादिति । अथ स्पर्शकालघटी २ द्वयसमयिका: सूर्य: ४।४।१४।६ चन्द्र: ७।१९।३३।५४ पात: ४।१३।४५।३८ रविक्रान्ति: २८।५८।१९ याम्या चन्द्रकान्ति: १७।५३।४९ शरकला दक्षिणा ६९।३९ स्पष्टाक्रान्ति: १९।३।२८ क्रान्त्योरन्तरं ५।९ मानैक्यात् ३२।१८ ऊनमत: क्रान्तिसाम्यं स्पर्शकाल: मोक्षकालीन: सूर्य: ४।४।३४।५५ चन्द्र: ७।२४।३६।४१ पात: ४।१३।४६।४९ रविक्रान्ति: १९।२५।५४ उत्तराचन्द्रक्रान्तिर्दक्षिणा १९।१३।१३ शरकला दक्षिणा ४६।५१।स्पष्टा क्रान्ति: २०।०।४ रविक्रान्तिचन्द्रक्रान्त्योरन्तरम् ०।३४।७ मानैक्यादधिकं तेन पातनिर्गम: अथ पुनरुदाहरणं शाके १२९० कालीनसंवत्सरे कार्तिकशुक्ला ७ गुरौ तत्रोदयेऽहर्गण: ६७८२३ मध्यम: सूर्य: ७।५।४२।५८ चन्द्र: ३।२९।४।१७ पात: ९।१२।१०।१६ स्पष्टौ रविचन्द्रौ सूर्य: ७।४।१८।५३ गति: ६०।४० चन्द्र: ३।२०।४५।१७ गति: ७२५।३५ चरपलम् ५८ अयनांशा: १४।५।४० सायनार्कोऽयम् ७।१८।२३।५३ सायनचन्द्र: ४।४।५४।१७ अनयोरैक्यम् ११।२३।१८।१० द्वादशभ्य: शुद्धेंऽशादि ६।४१।५० गतैक्येन ७८६।१५ भक्ते लब्धं दिनादि ०।३०।४० एवं कार्तिकशुद्धे ७ गुरावुदयाद्गतघटी ३०।४०

समये पातो भविष्यतीति पातसम्भवघटी ३०।४० समयिकः सूर्यः ७।४।४९।५७ चन्द्रः ३।२७।०।८ पातः ९।१२।११।१५ सपातचन्द्रात् कलादिर्बाणः १६९।२१ उत्तरः सायनचन्द्रः ४।१२।५।५८ सपातचन्द्रा १।९।१२।१ देकगोले वर्तते तस्मादेष्यः पातो ज्ञेयः यस्मिन्काले योगो द्वादश जातास्तस्मात्कालात् क्रान्तीषुखण्डानां धनर्णसंज्ञास्थापना च प्राग्वत् सायनचन्द्रस्यभागाः १३१।५।५८ तिथि १५ भक्ता लब्धम् ८ शेषं भागादि ११।५।८ अष्टौ क्रान्तिखण्डानिगतानि क्रमोत्क्रमाद्गण-नयापक्रमस्य तृतीयं भोग्यखण्डमृणसंज्ञम् २३६ सपातचन्द्रस्य भागाः ३९।१२।१ तिथि १५ भक्ता लब्धम् २ शरस्य क्रमेण भुक्त खण्डद्वयं तृतीयं भोग्यम् ५६ धनसंज्ञे शेषे ९।२१।१ गम्यपातत्वादुभयोः शेषांशा-स्तिथितश्च्युताः उभयोश्चापांशाः क्रान्तिचापांशाः ३।५०।५२ शरचा-पांशाः ५।४।४७ भोग्यखण्डमादीकृत्य गम्यपातत्वाद्भोग्यखण्डं कृतमु-भयोर्द्विधा स्थापितानि स्वल्पक्रान्तेश्चापांशादिकस्थं भोग्यस्थ यथा द्वित्रीणीति वचनात्खण्डकद्वयं द्विधा स्थापितं क्रान्तिभोग्यखण्डस्य २३६ विश्वांशभागेनर्णरूपेणर्णरुपाणि क्रान्तिखण्डानि युक्तानि १३ यथा शर-खण्डकैधनरूपाणि क्रान्तिखण्डानि योज्यान्यृणरूपैःकृणरूपाणि योज्या-नि एकत्रर्णरूपमन्यद्धनरूपं तदा भिन्नजातित्वादन्तरं जातं शरसंस्कृतानि स्फुटखण्डानि प्रथमखण्डम् १९७ स्वल्पचापांशैः ५४।१२ गुणितम् ७७५।३ पञ्चदशगुणातपूर्वागतबाणात् २५।४०।१५ शोधितं शेषम् १७६५।१२ द्वितीयखण्डं ६१ चापांशाः ३।५४।१२ चापांशाः ५।४७। ५७ अनयोरन्तरांशैः १।५३।४५ गुणितम् ४९२।३।२७ पूर्वशरशेषात् १७६५।१२ शुद्धम् १२७३।९ शेषं विषमं तृतीयखण्डम् २७४ अन्तरांशै १।५३।७ तिथितः १५ शुद्धैः १३।६।५३ गुणितम् ३५९३ एतच्छेषात् १२७३।९ न शुद्धयति तेन शरशेषम् १२७३।९ अशुद्धेनास्फुटखण्डेन २७४ लब्धं लवाद्यम् ४।३८।४८ संशुद्धं खण्डांशम् ३।४।५२ उभाभ्यां-युतम् १०।२६।४७ षष्टिगुणम् ६२७।४७ चन्द्रगत्या ७२५।३५ भक्तं दिनादि ०।५१।५० एभिर्दिनादिभिः पूर्वकालाद्गम्यं पातमध्यं पूर्वकाल-घट्यः ३०।४० मध्ये युक्तम् १।२२।३० एवं कार्तिकवदि ८ भृगावुदया-द्घट्यः २२।३० पातमध्यमेतत्कालीनः सूर्यः ७।५।४१।५० चन्द्रः ४।७। २६।५७ पातः ९।१२।१४।३८ रविक्रान्तिः ८७१।४४ चन्द्रशरः २०५। ५७ स्पष्टक्रान्तिः ७७७।४४ उभयोः क्रान्तिसाम्यत्वाच्छुद्धं साधनमेता

घटिकाः २२।३ अशुद्धेन २७४ भक्ता घट्यः ८।२ स्थितिरियं पात-मध्यात् २२।३० शुद्धाः १४।२८ उदयाद्गतघटीषु पातस्पर्शः पातमध्ये युता ३०।३२ एवमुदयाद्गतघटीषु पातनिगर्मः मानं सूर्यस्य ११।३ चन्द्रस्य ९।४८ अनयोरैक्यार्द्धम् १०।२५ अङ्गुलादि त्रिगुणितं कलात्म-कम् ३१।१५ एवं स्पर्शकालीनमोक्षकालीनक्रान्त्यन्तरं प्रसाध्यं मान-योगखण्डतो यावदल्पिका स्थितिः प्रतीतः पश्चाद्यः करणपातमध्ययोर्हि निर्णीतः ॥

सुधाकरः स्पष्टार्थमिदम् ।

अत्रोपपत्ति ! तावत्समत्वमेव क्रान्त्योर्विवरं भवेद्यावदित्यादिना यदा मानैक्यार्धसमं क्रान्त्यन्तरं तदा स्पर्शो मुक्तिश्च तत्राचार्य्येण मध्यमं मानैक्यार्द्धं मध्यमा चन्द्रगतिश्च गृहीता ततोऽनुपातः अशुद्ध-खण्डेन पञ्चदशांशास्तदा मानयोगदलेन किं पुनश्चन्द्रगत्या षष्टिघटि-कास्तदानीतांश कलाभिः किं जाताः स्थित्यर्धं घटिकाः

$$= \frac{\text{१५} \times \text{३२} \times \text{६०} \times \text{६}}{\text{अ ख} \times \text{च ग}} \text{ अत्र यदि च ग } = \text{७९०}$$

$$\text{तदा स्थि} = \frac{\text{२१८७}}{\text{अ ख}} \text{ अथ यदि च ग} = \text{७८० तदा}$$

$$\text{स्थि} = \frac{\text{२२१५}}{\text{अ ख}} \text{ उभयोर्योगार्द्धे } \frac{\text{२२०१}}{\text{अ ख}}$$

अत्राचार्येणेदं $\frac{\text{२२०३}}{\text{अ ख}}$ गृहीतं स्वल्पान्तरात् । अथ यदा शेषमानं

$\frac{\text{४८०}}{\text{१५}} = \text{३२}$ तदा मानैक्यार्द्धं सममन्तरं क्रान्तिसाम्यं केन्द्राभि-प्रायेण न भवति अधिकेऽपि न सम्भवो न्यूने तदैव मध्यस्ततः स्थित्यर्धा-नयनायानुपातः अन्त्यखण्डेन पञ्चदश भागास्तदा $\frac{\text{४८०} - \text{शे}}{\text{१५}}$ अनेन किं लब्धं $\frac{\text{४८०} - \text{शे}}{\text{अ ख}}$ ततो विधुगत्या षष्टिघटिकास्तदा लब्ध-कलाभिः किं जाता स्थितिः

$$= \frac{(\text{४८०} - \text{शे}) \times \text{६०} \times \text{६०}}{\text{अ ख} \times \text{८००}} = \frac{(\text{४८०} - \text{शे}) \times \text{३६}}{\text{अ ख} \times \text{८}}$$

$= \frac{(४८० - शे) \times ९}{अ ख \times २}$ अन्यत् सुगमं सर्वम् ।

उपसंहार—इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्धबुद्धिवल्लभे सकृच्च पातसाधनम् ॥ ९ ॥

सुमतिहर्ष—इति श्रीब्रह्मतुल्यवृत्तौ पाताध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

सुधाकरः—श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणे वरा ॥
क्रान्तिसाम्यगणितस्य वासना सुक्तियुक्ति सहिताऽत्रसङ्गता ॥
इति करणकुतूहलवासनावरविभूषणे पाताधिकारः ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः पाताधिकारः नवमः ॥

पर्वसम्भवाधिकारः–१०

शरसाधनम्—

द्विघ्नो मासगणस्त्रिहृद्विभयुतो वर्षाभ्रदस्रांशयुग्—
वच्चोक्तार्कघटीफलं शरहृतं स्वर्णं तु तस्मिंल्लवाः ॥
युक्तामातमितैर्गृहैरथ रवे राश्यर्द्धयुक्ताश्च ते
तद्बाहू च लवा निजार्द्ध सहिताः स्यादंगुलाद्यः शरः ॥ १ ॥

सुमतिहर्ष—इतश्चत्वारः श्लोकाः शार्दूलविक्रीडितेनाह – शकः पञ्चादिक्चन्द्रहीन इत्यादिनाधिमासैर्युगूर्ध्वं इत्यन्तेन साधितो मासगणो द्वाभ्यां गुणनीयस्त्रिभिर्भाज्यो लब्धाङ्को भागादिर्द्विसप्तत्युत्तरद्विशत्या २७२ युतः कार्यः ततो वर्षाणां करणगताब्दानामभ्रदस्रांशेन २० विंशतितमांशेन युक्तः कार्य एवम्भूते तस्मिन्नंशाद्ये बल्लाचार्योक्तार्कघटीफलं पञ्चभि ५ र्भक्तं तद्यथासम्भवं धनमृणं कार्यमेवं तस्मिन्नंशाद्ये मासगण तुल्यै राशिभि राशिस्थाने युतं कार्यमथ रवेर्ग्रहणसम्भवे राश्यर्द्धेन पञ्चदशभिरंशैः पूर्वागतं राश्यादियुतं कार्यं ततस्तस्य भुजः कार्यस्तस्यांशाः स्वीयेनार्द्धेन सहिताः शरोङ्गुलादिः स्यात्सूर्यग्रहणे राश्यर्द्धयुक्तो यस्मिन् गोले तद्दिक् ज्ञेया । यथा शके १५४२ मार्गशीर्षपूर्णिमा बुधे गताब्दाः ४३७ मासगणः ५४१४ द्विगुणः १०८२८ त्रिभक्तो लवादि ३६०९।२० द्विभ २७२ युतः ३८८१।२० गताब्दाः ४४७ एषामभ्रदस्रांशेन २१।५१ युक्तः ३९०३।११ धनुषः पूर्वपक्षार्कघटीफलम ३ पंचभि ५ र्भक्तं लब्धमंशाद्यम् ०।३६ पूर्वस्मिन् ३९०३।११ कर्कादित्वादृणम् ३९०२।३५ अयमंशादिराश्यादिकृतस्त्रिंशद्भक्ते लब्धं राश्यादयः १३०।२।३५।० राशिस्थाने मासगणः ५४१४ युतः ५५४४।२।३५।० राशिस्थानेद्वादशभिर्भक्ते लब्धम् ४६२ लब्धस्य प्रयोजनाभावात्त्यक्तं शेषं राश्यादि ०।२।३५।० अस्य भुजोऽयमेवांशाः २।३५।० स्वीयेनार्द्धेन १।१७ युतात् ३।५२ अयमङ्गुलादिशरः अथ सूर्यग्रहणसम्भवार्थं शाके १५२२ लौकिकश्रावणवदि ३० तिथौ सोमे गताब्दाः ४१७ मासगणः ५१६१ सूर्यः ३।०।३५ दिनार्द्धम् १६।३ पूर्वघटी २८।५६ मासगणः ५१६१ द्विघ्नः १०३२२ त्रिभक्तोंऽशादि ३४४०।४।०

द्विभयुतः ३७१२।४०।० वर्षाणां ४१७ विंशांशेन २०।५१ युतः ३७३३।३१।० कर्कपूर्वपक्षघटी ३ फलं शरभक्तेन ०।३६ हीनः ३७३२। ५५।० त्रिशद्भक्तं राश्यादि १२४।१२।५५।० राशिस्थानं मासगणैः ५१६१ युतम् ५२८५।१२।५५।० द्वादशभक्तं शेषं राश्यादि ५।१२।५२।० सूर्यग्रहणत्वाद्राश्यर्द्धेन ०।१५।०।० युतं जातं राश्यादि ५।२७।५५ अस्य भुजः ०।२।५।० अस्यांशाः १।५।० निजार्द्धेन १।२ युतः ३।७ शरोऽङ्गुलादिरुत्तरः राश्यर्द्धयुक्तस्य राश्यादिसौम्यगोले स्थितत्वात् ।।१।।

नतसाधनम्—

दर्शान्ते नतनाडिकाब्धिरहितो युक्तो गृहाद्यो रविः
प्राक्पश्चायनांशकैश्च सहितस्तद्दोर्गृहोनाहताः ।
शैलास्ते द्विगुणा लवादिरयमस्तात्स्वाक्षतोऽशा नता-
स्तद्वेदांशमिता नतिश्च विशिखस्तत्संस्कृतोऽर्कग्रहे ।। २ ।।

सुमतिहर्षः—दर्शान्तकालीनं नतं कृत्वा तस्यांघ्रिश्चतुर्थांश इति नतघटिकानां चतुर्भि ४ र्भागे लब्धराशयः शेषं त्रिंशद्भिः सङ्गुण्य पुनः चतुर्भिर्भागे हृते लब्धा भागाः शेषं षष्ट्या संगुण्य चतुर्भक्ते लब्धं कला एवं राश्यादिफलं ग्राह्यं तेन दर्शान्तकालिको गृहाद्यो रविः प्राक्कपाले रहितः पश्चिमकपाले युक्त इति कृत्वा स एवायनांशैर्युक्तस्तस्य भुजं कृत्वा तेन भुजेनोना हताश्च शैलाः ७ सप्त कार्याः स लवादिक्रान्तिर्भवति ततः शरः स्वाक्षवशेन प्राग्वन्नतांशाः साध्यास्तेषां चतुर्थांशो नतिः स्यात्तया प्रागानीतः शरः संस्कृतः सन् स्फुटो भवति यथा दर्शान्तः २८।५६ दिनार्द्धम् १६।४३ अनयोरन्तरं घट्यादिनतम् १२।४३ पश्चिमं चतुर्भक्ते लब्धं राशयः ३ शेषम् ०।१३ त्रिंशद्गुणम् ६।३० चतुर्भक्तं लब्धमंशाः १ शेषम् २।३० षष्टिगुणम् १५० चतुर्भक्ते लब्धं कलाः ३७ शेषम् २ षष्टिगुणम् १२० चतुर्भक्तं लब्धं विकलाः ३० एवं राश्यादिना ३।१।३७।३० अमावास्यान्तकालीनः स्पष्टो वा गतेष्टनाडीत्यादिना स्थूलोऽपि रविः ३।०।३५ ३४ पश्चिमनतत्वाद्युतः ६।२।१३।४ अयनांशैः १७।५७ युतः ६।२०। १०।२४ अस्य भुजः ०।२०।१०।२४ अनेन सप्त ७ राशय ऊनाः ६।९।४९।३६ पुनर्भुजेनैव ०।२०।१०।२४ गुणिता गोमूत्रिकया २।४०। २० द्विगुणाः ५।२०।४० जातांशादिः क्रान्तिः संस्काररहिता सायनोऽर्को याम्यगोलेऽस्माद्याम्या याम्याक्षांशैः २४।३५।९ संस्कृता

जाता नतांशा याम्याः २९।५५।४९ चतुर्भक्ता ७।२७ जाता नतिर्याम्यानया पूर्वानीत सौम्यशरः ३।७ संस्कृतो भिन्नदिक्त्वादन्तरम् ४।२० जातः स्पष्टशरः सौम्यः ।।२।।

ग्रहणसम्भवासम्भवम्—

गोचन्द्रा हिमगोर्भवाश्च तरणेर्मानैक्यखण्डं शरे ।
तन्न्यूने ग्रहणं भवेदिति बुधैश्चिन्त्यः पुरा सम्भवः ।।
चक्राद्यः खलु मध्यमार्कतमसोर्योगो द्विनिघ्नो द्वियुक्-
पर्वेशो मुनिभक्त शेषकमितो ज्ञेयो विरंच्यादिकः ।। ३ ।।

सुमतिहर्ष—गोचन्द्राइति—गोचन्द्रा एकोनविंशतिश्चन्द्रस्य मानैक्यार्द्धं शरं चन्द्रशरं मानैक्यार्द्धादूने सति ग्रहणं भवेदिति विद्वद्भिः पूर्वं सम्भवो ज्ञेयः यथा चन्द्रशरः ३।५२ मानैक्यार्द्धात् १९ ऊनस्तेन चन्द्रग्रहणसम्भवोऽस्ति ततश्चन्द्रग्रहणवत्सूर्यग्रहणसाधनं कर्त्तव्यं सूर्यस्पष्टशरः ४।२० सूर्यस्य मानैक्यार्द्धात् ११ ऊनस्तेन सूर्यस्य ग्रहणसम्भोऽस्ति तस्य साधनं पूर्ववच्चन्द्रग्रहणस्य साधनं चन्द्रग्रहणोक्तवत्सूर्यग्रहणस्य साधनं सूर्यग्रहणोक्तवत् । अथ चक्राद्य इति क्षेपकरहितयोर्मध्यमार्कतमसोर्मध्यसूर्यरहितयोर्मध्यमार्कतमसोर्मध्यसूर्यपातयोर्भगणाद्यो योगो द्विघ्नः द्विगुणीकृतः द्वियुक्तः कार्यः सप्तभिर्भाज्यः शेषं तेन गता वर्तमानस्य राश्याद्यं भुक्तं ब्रह्मादिकः पर्वेशः ब्रह्मशशीन्द्रकुबेरवरुणाग्नियमाश्च पर्वेशा इति यथा चन्द्रग्रहणे क्षेपरहितो भगणाद्यो रविः ४३७।६।०। ५९।३८ पातः २३।६।१४।३८।२५ अनयोर्योगः ४६१।०।१५।३८।३ द्विगुणः ९२२।०।३१।१६।६ द्वियुक् ९२४ सप्त भक्तं शेषम् ० ब्रह्मतो गणनया सप्त गताः ब्रह्मा पर्वेशः सूर्यग्रहणे भगणादिरविः ४१७।४।१। २१।१३ पातः २२।५।९।२४।१८ अनयोर्योगः ४३९।९।१०।४५।३१ द्विगुणः ८७९।६।२१।३१।२ द्वियुक् ८८१।०।४३।२।४ सप्त ७ भक्ते शेषम् ६ पर्वेशो यमो ज्ञेयः ।। ३ ।।

सुधाकरः—स्पष्टार्थमेतत् ।

अत्रोपपत्तिः । मासाः पृथक् ते द्विगुणाः स्वाङ्कनृपांशयुतास्त्रिभिर्विभक्ताः फलमंशपूर्वं मासौघतुल्यैश्च गृहैर्युतमिति पर्वसम्भवाधिकारेणैव तत्र ग्रन्थारम्भस्य पञ्चदशदिनस्य च पातयोर्योगेन क्षेपसंज्ञा कृता

स्वल्पान्तरात् स्वाङ्कनृपांशफलं त्यक्तं तेन विंशतिवर्षे चैकांशसममन्तरं एवं मध्यमः सपातसूर्यो भवति तत्रार्कघटीफलं द्वादशगुणं कलास्तत् षष्टिभक्ता अंशास्तद्रूपं $= \frac{\text{घ फ १२}}{\text{६०}} = \frac{\text{घ फ}}{\text{५}}$ अनयारीत्या पूर्णान्ते सपातसूर्यः स राश्यर्द्धसहितो दर्शान्ते सपातसूर्यः स राश्यर्द्धसहितो दर्शान्ते सपातसूर्यः स्यात् तदंशा द्विगुणाः खार्कमिते व्यासार्द्धे जीवा ततःपूर्ववदङ्गुलाद्यः शरः $= \frac{\text{२ ल} \times \text{प श क}}{\text{१२०} \times \text{३}} = \frac{\text{२ ल} \times \text{२७०}}{\text{१२०} \times \text{३}}$

$= \frac{\text{३ ल}}{\text{२}}$ अत उपपन्नः प्रथमश्लोकः ॥

द्वितीयश्लोके अयनांशकैश्च सहित इत्यन्तं सुगमं स्वल्पान्तराद्द्-शमलग्नस्य वा वित्रिभस्यमानं तत्क्रान्तिः श्रीपतिरीत्या भुजज्यया

$$\text{क्रा} = \frac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु} \times \text{४८०} \times \text{२४}}{\text{१२०}\,\{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}\}}$$

$$= \frac{(\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु} \times \text{९६}}{\text{४०५००} - (\text{१८०} - \text{भु})\,\text{भु}} = \frac{\left(\text{६} - \frac{\text{भु}}{\text{३०}}\right)\frac{\text{भु}}{\text{३०}} \times \text{९६}}{\text{४५} - \left(\text{६} - \frac{\text{भु}}{\text{३०}}\right)\frac{\text{भु}}{\text{३०}}}$$

$$= \frac{(\text{६} - \text{भु रा})\,\text{भु रा} \times \text{२}}{\text{१} - \frac{(\text{६} - \text{भु रा})\,\text{भु रा}}{\text{४५}}}$$ स्वपान्तरात् ।

हरे वियोजकं प्रक्षिप्य रूपसमो गृहीतस्तेन भाज्यस्थानेऽपि किञ्चिदधिकं कृतमर्थात् षट् स्थाने सप्तसंख्या कृता ततः क्रा $= \frac{(\text{७} - \text{भु रा})\,\text{भु रा} \times \text{२}}{\text{१}}$ अथ क्रान्त्यक्षसंस्कारेण स्वल्पान्तरा-द्वित्रिभनतांशास्ते द्विगुणस्तज्जीवा ततः पूर्ववन्नतिरङ्गुलात्मिका $= \frac{\text{२ न} \times \text{प न क}}{\text{१२०} \times \text{३}} = \frac{\text{२ न} \times \text{४८}}{\text{१२०} \times \text{३}} = \frac{\text{न} \times \text{४}}{\text{५} \times \text{३}} = \frac{\text{न}}{\text{४}}$ अनेनोप-पन्नो द्वितीयश्लोकः तृतीयस्य तु त्रिभक्तेन मध्यममानैक्यखण्डेन प्रकटैव वासना ॥

स्ववंशवर्णनम्—

आसीत्सज्जनधाम्नि गेहविवरे शाण्डिल्यगोत्रो द्विजः
श्रौतस्मार्तविचारसारचतुरः सौजन्यरत्नाकरः ।
ज्योतिर्वित्तिलको महेश्वर इति ख्यातः क्षितौ स्वैर्गुणै-
स्तत्सूनुः करणं कुतूहलमिदं चक्रे कविर्भास्करः ॥ ४ ॥

इतीह भास्करोदिते ग्रहागमे कुतूहले ।
विदग्ध बुद्धि वल्लभे रवीन्दुपर्वसम्भवः ॥ १० ॥

सुमतिहर्ष :—आसिदिति । स्पष्टार्थो ज्ञेयः ॥ ४ ॥

इति श्रीकरणकुतूहले पर्वसम्भवासम्भवमाध्यायानः दशमः समप्तिमगमत ॥ १० ॥

सुधाकर :—स्पष्टार्थः ।

श्रीकृपालुतनयेन निर्मिते वासनावरविभूषणे वरा ।
पर्वसम्भवविधान वासना सुक्तियुक्ति सहिताऽत्रसङ्गता ॥
सुवासना विभूषणं सरस्वती सुखप्रदम् ।
सुधाकरेण निर्मितं सदा पठन्तु सज्जनाः ॥

रामप्रसादतनूज सुधाकरेण श्रीमद्भास्करीय करणस्य कुतूहलस्य ।
चक्रे विभूषणमिदं विदुषां मुदर्थं यद्धारणेन सरसा च सरस्वती स्यात् ॥

आश्विनशुक्लषष्ठयां शके त्र्यधिकाष्टादशशततमे पूर्णमिदं जगदीशानुग्रहेण ।

इति

[अत्र वासनोपयोगीनि वृत्तानि प्रायो भास्करीय सिद्धान्तशिरो-मणेरेव ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयो सुमतिहर्षसुधाकरद्विवेदीकृतयोष्टीकयोः
पर्वसम्भावाधिकारः दशमः ॥

नीरदाध्याय[1]–११

नीरदार्कस्पष्टीकरणम्—

समलिप्तीकृते भानौ राश्येकं शोधयेद्बुधः ।
अंशका मनवश्चैव शेषं चक्राच्च पातयेत् ॥ १ ॥
कलितं वर्गितं द्विघ्नं चक्रलिप्ताभिरुद्धरेत् ।
लब्धाढ्य इतरे सञ्ज्ञे तरोविश्वांशकैर्युतः ॥ २ ॥
समलिप्तार्कं संयुक्ताच्छोधयेदुदयभास्करात् ।
यच्छेषमाद्यसंयुक्तं नीरदार्को हि संस्फुटः ॥ ३ ॥

सुमतिहर्ष--समकलसूर्यमध्य एकोराशिश्चतुर्दशांशाः १।१४।०।० शोध्या शेषं द्वादशराशिभ्यः १२ शोधयेत् तस्य कलाः कार्यास्तासां वर्गो विधेयः सद्विगुणः कार्यस्तं चक्रकलाभिः २१६०० भजेत् लब्धस्य पृथक् स्थापितस्य आढ्य इति संज्ञा कर्तव्या य इति संज्ञः त्रयोदशभि १३ रंशैर्युतः समकल सूर्ये योज्यस्तत औदयिकः सूर्यः शोध्यो यच्छेषं तत् पूर्वकृताढ्यसंज्ञेन युतं सन्नीरदार्कः स्फुटो भवति ।

यथा चन्द्रग्रहणे समकलसूर्ये ८।०।१६।१० एकोराशिरंशाश्चतुर्दश १।१४।०।० शुद्धाः शेषम् ६।१६।१६।१० चक्रात् १२ शुद्धः ५।१३। ४३।५० अस्य कलाः ९८२३।५० आसां वर्गः ९६५०७७०१।२१ द्विघ्नः १९३०१५४०२।४२ चक्रकलाभिः २१६०० भक्ते लब्धं कलादि ८९३५।५३ षष्टिभक्तं लब्धमंशादि १४८।५५।५३ त्रिंशद्भक्तं जातं राश्यादिः ४।२८।५५।५३ एतस्य राश्यादिकस्याढ्य इतरसंज्ञकस्त्रयोदशभिरंशैः १३ युतः ५।११।५५।५३ समकलसूर्ये ८।०।१६।१० युतः १।१२।१२।३ औदयिकसूर्यात् ७।२९।३५।२० शुद्धः शेषम् ६।१७। २३।१७ आढ्येन ४।२८।५५।५३ युक्तम् १२।१६।१९।१०

अस्य प्रयोजनम्—

रविभौमांशकं दृष्ट्वा निरभ्रं ग्रहमादिशेत् ।
शनिसौम्यनवांशे चेत्सलिलं क्षुद्रवर्षणम् ॥ ४ ॥

---

१. अयं नीरदाध्यायः केनचित् प्रक्षिप्त इति प्रतिभाति ।

शशिशुक्रनवांशे च प्रावृट्काले महज्जलम् ।
गुरोरंशकमासाद्य दृश्यते सबलाहकः ॥ ५ ॥
ग्रहणे वा विलग्ने वा मेघच्छायां विजानतः ।
तस्याहं पादयुगलं कुसुमाञ्जलिनार्चये ॥ ६ ॥

सुमतिहर्ष—यदि नीरदार्को रविभौमनवांशके भवति तदा मेघो नास्ति शनिबुधनवांशके क्षुद्रवर्षणं स्वल्पवर्षणं चन्द्रशुक्रनवांशके प्रभूतपर्जन्यो मेघः गुरुनवांशे यदा तदा सवातं क्षुद्रवर्षणम् ॥ ५ ॥

यथामति मया प्रोक्तं सम्प्रदायादथापि वा ।
उचिताऽनुचितं यन्मे तदाक्यं क्षम्यतां विदः ॥ १ ॥

विन्ध्याद्रि निकषा पुरी सुविदिता सर्वर्द्धिवृद्धान्विता
तन्नेतास्ति भटः स्ववंशतिलकश्चौलुक्यवंशोद्भवः ।
सुश्रीवीरमुदे सुनीतिनिपुणो हेमाद्रिरेखापुरो
योऽभूद्यान भूपतींस्थिरतरान्प्रोन्मूल्य राजन्यके ॥ २ ॥

वैशाख्ये खलु मन्त्रिणि प्रियवृषे दानप्रसूक्तौ सति
मङ्गल्यादिकलामिते गतवति श्रीविक्रमात्संवति ।
मासे प्रौष्ठपदे विनायकतिथौ दैत्येज्यवारे वरे
चक्रे श्रीगुरुभावनः सुमतियुग्घर्षेण चैषा मुदा ॥ ३ ॥

ग्रन्थाग्रन्थशतान्यस्य सार्द्धाष्टादशसंख्यया १८५० ।
ज्ञेयं चेदङ्कबाहुल्यान्न्यूनाधिक्यं न दोषकृत् ॥ ४ ॥

करणवृतावेतस्यां सुमतिहर्षरचितायाम् ।
गणककुमुदकौमुद्यां निर्णीतः पर्वसम्भवः ॥ ५ ॥

उपसंहार—इति श्री भास्कराचार्यविरचिते करणकुतूहले
नीरदार्कविचाराध्यायः समाप्तः ॥ ११ ॥

सुमतिहर्षः—इति श्रीसुमतिहर्षविरचितायां ब्रह्मतुल्यवृत्तौ गणककुमुदकौमुद्यां ग्रहणसम्भवाधिकारोऽत्र सनीरदार्कम् विचाराध्यायः समाप्तः ॥

सत्येन्द्रमिश्रेण सम्पादितयोः सुमतिहर्षसुधाकर-द्विवेदीकृतयोष्टीकयोः
नीरदाध्यायः एकादशः ॥

करणकुतूहलम्

"शिवमती" हिन्दीटीका-सहितम्

मध्यमाधिकारः–१

श्लोक १—मङ्गलाचरण।

मैं (भास्कर) गणपति-सरस्वती-ब्रह्मा-विष्णु-शिव तथा सूर्यादि ग्रहों को नमस्कार करके ब्रह्मसिद्धान्ततुल्य ग्रहादि स्पष्ट करने की विधि को सरल प्रकार से कहता हूँ।

श्लोक २.३—अहर्गणसाधन।

अभीष्ट शक में ११०५ घटाने पर गतवर्ष होगा। गतवर्ष संख्या में १२ से गुणा करके चैत्रादि गतमास जोड़ने पर सौरमास होगा। सौरमास में २ से गुणाकर ६६ जोड़कर दो जगह स्थापित कर प्रथम में ९०० से भाग देकर लब्धि को द्वितीय स्थान में घटाकर शेष में ६५ का भाग देने पर लब्धितुल्य अधिमास होगा। अधिमास को सौरमास में जोड़ने पर चान्द्रमास होगा। चन्द्रमास में ३० से गुणा कर अभीष्टमास के शुक्लप्रतिपदादि गततिथि को जोड़ने पर चान्द्र-दिन होगा।

चान्द्रदिन को दो जगह स्थापित कर प्रथम में ३ जोड़कर ७०३ का भाग देकर लब्धि को द्वितीय में जोड़कर ६४ का भाग देने पर लब्धितुल्य क्षयदिन होगा। चान्द्रदिन में क्षयदिन को घटाने पर शेष अहर्गण (सावनदिनसमूह) होगा।

अहर्गण में ७ से भाग देने पर शेषसंख्यातुल्य बृहस्पत्यादि वार होगा। जैसे—शेष १=बृहस्पतिवार, २=शुक्रवार, ३=शनिवार, ४=रविवार इत्यादि।

श्लोक ४, ५, ६—ग्रहों के राश्यादि क्षेपक।

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	चन्द्रोच्च	चन्द्रपात	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
राशि	१०	१०	४	९	७	२	२	८	४
अंश	२९	२९	१५	१७	२१	२१	४	१८	३
कला	१३	५	१२	२५	२४	१४	०	५	४३
विकला	०	५०	५९	९	२१	३०	५१	५५	१७

अहर्गणोत्पन्न मध्यमग्रह में उसके क्षेपक जोड़ने पर लंका के सूर्योदयकालिक मध्यम ग्रह होते हैं।

श्लोक ७—मध्यमसूर्य साधन।

अहर्गण को दो जगह स्थापित कर प्रथम स्थान में १३ से गुणाकर ९०३ का भाग देकर लब्धि-अंशादि को द्वितीय स्थान में घटाने पर अंशादि मध्यम सूर्य-बुध-शुक्र होगें।

गतवर्ष संख्या में ६४ का भाग देने पर कलादि लब्धि जो हो उसे मध्यम सूर्य-बुध-शुक्र में घटाने पर अब्दबीज संस्कार होगा।

श्लोक ८—मध्यमचन्द्र साधन।

अहर्गण को १० से गुणाकर दो स्थानों में रखकर एक में १७ का भाग देकर लब्धि अंशादि को द्वितीय स्थान में घटा देगें। शेष अंशादि में अहर्गण के ८६०० वें भाग (अंशादि) को घटा देने पर अंशादि चन्द्रमा होगा।

श्लोक ८½—चन्द्रोच्च साधन।

अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक में ९ का दूसरे में ४०१२ का भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का योग करने पर चन्द्रोच्च होगा।

श्लोक ९—पात साधन।

अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक में १९ का दूसरे में २७०० का भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का योग करने पर अंशादि चन्द्रपात होगा।

श्लोक १०—भौम तथा बुधशीघ्र का साधन।

११ गुणित अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक में २१ तथा दूसरे में ५:४४ का भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का योग करने पर मध्यम भौम होगा।

अहर्गण को ४ से गुणाकर दो जगह स्थापित कर एक में ४३ का भाग देकर अंशादि लब्धि को दूसरे जगह में जोड़ देगें तथा अहर्गण के १४२१ वें भाग (अंशादि) को घटाने पर बुधशीघ्र होगा।

श्लोक १०½—गुरु साधन।

अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक जगह १२ से तथा दूसरे जगह ४२२७ से भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का अन्तर करने पर अंशादि मध्यम गुरु होगा।

श्लोक ११½—शुक्र शीघ्रोच्च साधन ।

१६ गुणित अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक में ७४५१ तथा दूसरे में १० का भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का योग करने पर शुक्रशीघ्रोच्च होगा ।

श्लोक १२—शनि साधन ।

अहर्गण को दो जगह स्थापित कर एक में ३० तथा दूसरे में ९३६७ का भाग देकर दोनों अंशादि लब्धियों का योग करने पर मध्यम शनि होगा ।

श्लोक १३—सूर्यादि ग्रहों की मध्यमगति ।

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	चन्द्रोच्च	पात	भौम	बुधकेन्द्र	गुरु	शुक्रकेन्द्र	शनि
कला	५९	७९०	६	३	३१	२४५	५	९६	२
विकला	८	३५	४१	११	२६	३२	०	८	०

श्लोक १४—भूमध्यरेखादेश ।

लंकानगर (शून्य अक्षांश) से सुमेरु (उत्तर ध्रुव) तक एक याम्योत्तर (देशान्तर) रेखा में आने वाले नगर कन्याकुमारी, काञ्ची, सितपर्वत, वत्स, उज्जयिनी, गर्गराट तथा कुरुक्षेत्र हैं । ये रेखादेश कहलाते हैं ।

श्लोक १५—देशान्तर संस्कार ।

रेखादेश से अपने स्थान की पूर्वापर दूरी को ग्रहगति से गुणकर ८० का भाग देकर लब्धि को धन या ऋण करेंगे । अर्थात् रेखादेश से पूर्व में ऋण तथा पश्चिम में धन करने से देशान्तर-संस्कृत ग्रह होंगे ।

श्लोक १६—ग्रहों का बीज संस्कार ।

अभीष्ट शकाब्द में ११०५ घटाने पर गताब्द होता है ।

गताब्द ÷ ७८ = विकलादि चन्द्र का बीज (ऋणात्मक) ।

„ ÷ ६३ „ गुरु „ (ऋणात्मक) ।

„ ÷ ३३ „ पात(राहु) „ (धनात्मक) ।

„ ÷ ३० „ चन्द्रोच्च „ (धनात्मक) ।

„ ÷ २२ „ बुधशीघ्रोच्च „ (धनात्मक) ।

„ ÷ ९ „ शुक्र „ „ (धनात्मक) ।

———

स्पष्टाधिकारः-२

श्लोक १—ग्रहों के मन्दोच्च ।

	सूर्य	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
राशि	२	४	७	५	२	८
अंश	१८	८	१५	२२	२१	२१
कला	०	३०	०	०	०	०

कुछ आचार्यों के मत से शनि का मन्दोच्च ७ राशि २८ अंश है ।

श्लोक २—ग्रहों की परसंख्या ।

परसंख्या का उपयोग शीघ्रफल साधन में होता है ।

ग्रह	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
राशि	२	१	०	२	०
अंश	२१	१४	२३	२७	१३

सूर्य तथा चन्द्र के शीघ्रोच्च नहीं होते बुध तथा शुक्र का शीघ्रोच्च मध्यमाधिकार में कहा गया है । भौम गुरु शनि का शीघ्रोच्च मध्यम सूर्य है ।

श्लोक ३—मन्दकेन्द्र-शीघ्रकेन्द्र का धन-ऋणत्व ।

उच्च में ग्रह को घटाने पर केन्द्र होता है । मन्दोच्च में ग्रह घटाने पर मन्दकेन्द्र तथा शीघ्रोच्च में घटाने पर शीघ्रकेन्द्र होगा । केन्द्र यदि मेषादि हो तो फल (शीघ्रफल वा मन्दफल) धन अथवा तुलादि हो तो ऋण होगा ।

श्लोक ४—भुजकोटि का साधन ।

केन्द्र यदि ३ राशि से अल्प हो तो वही भुज होता है । ३ राशि से अधिक तथा ६ राशि से अल्प हो तो ६ राशि में घटाने से शेष भुज होगा । ६ राशि से अधिक तथा ९ राशि से कम हो तो ६ राशि घटाने पर शेष भुज होगा तथा केन्द्र यदि ९ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाने पर शेष भुज होगा ।

३ राशि में भुज को घटाने पर शेष कोटि होती है ।

श्लोक ५,५½—भौम का मन्दोच्च स्पष्टीकरण ।

भौम का शीघ्रकेन्द्र जिस पद में हो (३ राशि = एक पद) उस पद के भुक्त राश्यादि को ३ राशि में घटाने पर उस पद की भोग्य राश्यादि होगी । उस भुक्त भोग्य में जो अल्प हो उसकी कला बनाकर ४०० से भाजित कर अंशादि लब्धि

को भौम के मन्दोच्च में संस्कार करने पर भौम का स्पष्टमन्दोच्च होगा। (केन्द्र यदि कर्कादि हो तो लब्धि ऋण, मकरादि हो तो धन होगा)।

अंशादि लब्धि के तीसरे भाग को भौम के पराख्य में घटाने पर भौम का स्पष्ट पराख्य होगा।

श्लोक ६,७—ज्या साधन।

२१,२०,१९,१७,१५,१२,९,५,२ ये क्रम से ९ ज्या खण्ड हैं। जिसका (ग्रह या केन्द्र का) ज्या साधन करना हो उसका भुज लाकर उसे अंशादि करेगें। अब भुजांशमें १० का भाग देकर भागफल संख्यातुल्य ज्या-खण्डों का योग करेगें। शेष भुजांश जो हो उसमें भोग्य ज्या खण्ड से गुणाकर १० का भाग देकर लब्धि को गत ज्या-खण्डों के योग में जोड़ देने पर अभीष्ट ज्या होगी—

	प्र०	द्वि०	तृ०	च०	पं०	ष०	स०	अ०	न०
ज्या खण्ड	२१	२०	१९	१७	१५	१२	९	५	२
खण्ड योग	२१	४१	६०	७७	९२	१०४	११३	११८	१२०

श्लोक ८—धनु साधन।

ज्या की जो संख्या होगी उसमें ज्याखण्ड को घटायेगें, जो खण्ड घटे वह शुद्ध, जो नहीं घटे वह अशुद्ध होगा। शेष ज्या की संख्या को १० से गुणाकर अशुद्ध ज्या संख्या से भाग देकर जो लब्धि हो उसे शुद्ध ज्या-संख्या से गुणकर १० जोड़ने रर धनु होगा।

इस क्रिया को विपरीत करने पर पुनः धनु से ज्या होगी। (अर्थात् धन का ऋण, गुणा का भाग)।

श्लोक ९,१०—मन्दफल साधन।

जिस ग्रह का मन्दफल साधन करना हो उसके मन्दकेन्द्र के भुजांश की ज्या साधन करेगें। ज्या को १० से गुणा कर मन्दफल का साधन करेगें।

जैसे—ज्या × १० ÷ ५५० = सूर्य का मन्दफल।
" × १० ÷ १०७ = भौम " "
" × १० ÷ १९८ = बुध " "
" × १० ÷ २२८ = गुरु " "
" × १० ÷ ७८४ = शुक्र " "
" × १० ÷ १५७ = शनि " "

मन्दफल का संस्कार मन्दकेन्द्रानुसार धन या ऋण होगा। यदि केन्द्र मेषादि हो तो धन अथवा तुलादि हो तो ऋण होगा।

सूर्य एवं चन्द्र मन्दफल संस्कार से ही स्पष्ट हो जाते हैं, परन्तु पंचताराग्रह (भौ. बु. गु. शु. श.) मन्दस्फुट ही होते हैं।

श्लोक १०½—चन्द्र में बिशेष संस्कार।

सूर्य के मन्दफल के २७वें भाग को चन्द्र में संस्कार करने पर चन्द्रस्पष्ट होगा। सूर्य में मन्दफल का संस्कार जिस प्रकार (धन या ऋण) होगा उसी प्रकार चन्द्र में भी इसका (२७वें भाग) संस्कार होगा।

श्लोक ११, १२—सूर्यादि ग्रहों का गतिफल साधन।

ग्रह का केन्द्र बनाकर उसका भुजांश साधन करें। भुजांश की ज्या साधन में ज्या-खण्ड का जो भोग्यखण्ड हो,उससे ग्रहों के गतिफल का साधन होगा। जैसे—

भोग्यखण्ड ÷ ९ = कलादि सूर्य का गतिफल।
" × १३ ÷ ४ = " चन्द्र "
" × २ ÷ ७ = " भौम तथा बुध का गतिफल।
" ÷ ५० = " गुरु का गतिफल।
" ÷ १२ = " शुक्र " "।
" ÷ १२० = " शनि " "।

ग्रहों की मध्यम गति में गतिफल का संस्कार करने से (कर्कादि ग्रह में धन, मकरादि में ऋण) सूर्य और चन्द्र की स्पष्टागति एवं भौमादि पंचताराग्रहों की मन्दस्पष्टागति होती है।

श्लोक १३—भौमादि ग्रहों का शीघ्रफल साधन।

मन्दस्फुट ग्रह को शीघ्रोच्च में घटाने पर शीघ्रकेन्द्र होगा। शीघ्रकेन्द्र के भुज और कोटि की ज्या का साधन करेंगे।

कोटिज्या को ग्रह के पराख्य से गुणकर उसे द्विगुणित कर १४४०० में जोड़ेंगे। योगफल में पराख्य के वर्ग को जोड़ या घटाकर (कर्कादि केन्द्र में ऋण, मकरादि में धन) उसका मूल लेने पर शीघ्रकर्ण होगा।

पराख्य से भुज की ज्या को गुणकर शीघ्रकर्ण से भाग देने पर लब्धि शीघ्रफल होगा। मन्दस्फुट ग्रह में शीघ्रफल का संस्कार (शीघ्रकेन्द्र मेषादि में धन, मकरादि में ऋण) करने पर स्पष्टग्रह होगा।

श्लोक १४—फल संस्कार ।

मन्दफलार्द्ध का संस्कार मध्यमग्रह में करने से वह मन्दस्पष्ट होगा, तत्पश्चात् शीघ्रफलार्द्ध का संस्कार करेंगे, उसके बाद सम्पूर्ण मन्दफल तथा सम्पूर्ण शीघ्रफल का संस्कार करने से स्पष्टग्रह होगा ।

संस्कार	फल
प्रथम	अर्द्ध मन्दफल
द्वितीय	„ शीघ्रफल
तृतीय	पूर्ण मन्दफल
चतुर्थ	„ शीघ्रफल

श्लोक १५, १६—गतिस्पष्टीकरण ।

मध्यगति में गतिफल का संस्कार करने पर मन्दस्फुटगति होती है। शीघ्रोच्चगति में मन्दस्फुटगति का संस्कार करने पर शीघ्रकेन्द्र की गति होती है।

शीघ्रकेन्द्र की गति को शीघ्रचाप के भोगज्या (शीघ्रफल साधन में जो भोग्य ज्या-खण्ड हो) से गुणाकर गुणनफल को ४० से गुणकर सप्तगुणित शीघ्रकर्ण से भाग देने पर जो लब्धि आवे उसको शीघ्रोच्च की गति में घटाने पर स्पष्टगति होगी । यदि लब्धि शीघ्रोच्च की गति से अधिक हो तो लब्धि में शीघ्रोच्चगति घटाने पर स्पष्टगति होगी । ऐसी स्थिति में ग्रह वक्री होगा ।

श्लोक १७—अयनांश साधन ।

शाके में ११०५ घटाकर शेष में ६० से भाग देकर अंशादि लब्धि को ११ अंश में जोड़ने पर वर्तमान शकारम्भकाल का अयनांश होगा ।

श्लोक १८—उदयान्तर साधन ।

मध्यम सूर्य में अयनांश को जोड़कर उसका भुज साधन करके ज्या का आनयन करेंगे । भुजज्या को २ से गुणाकर ५ से भाग देने पर लब्धि विकलादि उदयान्तर होगा । समपदस्थ (२, ४) सायन सूर्य में उदयान्तर को जोड़ेंगे, विषमपदस्थ (१, ३) सायनसूर्य में घटायेंगे ।

भुजज्या को २१ से भाजित करने पर चन्द्रमा का कलादि उदयान्तर होगा । इसको भी समपदस्थ में जोड़ेंगे, विषमपदस्थ में घटायेंगे ।

श्लोक १९, २०—चर कर्म ।

सायन मेष-संक्रान्ति से पूर्वदिन के मध्याह्नकाल में इष्ट स्थान पर द्वादशाङ्गुल शंकु की जो अंगुलादिक छाया हो, उसको क्रम से १०, ८, $\frac{१०}{३}$ से गुणा करने पर तीन चर खण्ड होते होते हैं । इन तीनों को क्रम उत्क्रम से रखने पर १२ राशियों के स्थानीय चरखण्ड होते हैं ।

सायन ग्रह के भुक्त राशियों के चरखण्ड तथा मुक्त अंश एवं भोग्य चरखण्ड के गुणनफल में ३० का भाग देकर जो लब्धि हो, उनका योग चरखण्ड होगा । यह चरखण्ड उत्तरगोल में ग्रह के रहने पर ऋणात्मक और दक्षिण गोल में धनात्मक होगा ।

चरखण्ड में ग्रह की स्पष्टगति से गुणाकर ६० का भाग देकर लब्धि विकलादि को ग्रह में गोल के अनुसार (ऋण या धन) संस्कार करने पर चर संस्कृत ग्रह होंगे ।

श्लोक २१, २२—तिथि-करण-नक्षत्र-योग का साधन ।

राश्यादि चन्द्र में सूर्य को घटाकर शेष को अंशादि बनाकर १२ से भाजित करेंगे । लब्धि-संख्या शुक्लप्रतिपदादि गततिथि होगी । तिथि-संख्या को २ से गुणाकर गुणनफल में १ घटाने पर शेषसंख्यातुल्य क्रम से ववादि सात चर करण होते हैं । तथा कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध से शुक्लपक्ष १ के पूर्वार्द्ध तक शकुनि आदि ४ स्थिर करण होते हैं ।

राश्यादि चन्द्र को कलादि बनाकर ८०० से भाग देने पर लब्धि-संख्यातुल्य अश्विन्यादि गतनक्षत्र होंगे । शेष कला को ८०० में घटाने पर गम्य होगा । गत गम्य कला में ६० से गुणाकर चन्द्रगति से भाग देने पर वर्तमान नक्षत्र की भुक्त भोग्य घटी होगी ।

सूर्य और चन्द्र की राश्यादि को जोड़कर उसको कलादि बनाकर ८०० से भाग देने पर लब्धिसंख्यातुल्य विष्कुम्भादि गत योग होंगे । शेष को ८०० में घटाकर गम्य कला बनायेंगे । गत और गम्य कलाओं को ६० से गुणाकर सूर्य और चन्द्र के गतियोग से भाग देने पर वर्तमान योग की भुक्त तथा भोग्य घटी होगी ।

त्रिप्रश्नाधिकारः-३

श्लोक १-४—स्वदेशोदय साधन तथा लग्न साधन।

२७८, २९९, ३२३ ये तीन लंकोदयमान हैं। इन्हीं तीन मानों को क्रम उत्क्रम से रखने पर १२ राशियों के लंकोदयमान होते हैं।

मेषादि लंकोदयमान में मेषादि चरखण्ड (स्प. धि. श्लोक १९, २० के अनुसार) जोड़ने पर स्वोदयमान होता है।

सायन रवि की जो राश्यादि हो, उसका भोग्य अंश जो हो,उसे उस राशि के स्वोदयमान से गुणा कर ३० का भाग देने पर लब्धि रवि का भोग्यकाल पलात्मक होगा।

इष्टकाल को पलात्मक बनाकर उसमें रवि के भोग्यकाल को घटाकर शेष में सायन रवि से अग्रिम राशियों के स्वोदयमानों को घटाते जायेंगे। जो राशि का उदयमान घटे वह शुद्धराशि तथा जो न घटे वह अशुद्धराशि होती हैं। इष्टघटी-पला का जो शेष बचे उसे ३० से गुणाकर अशुद्धराशि के उदयमान से भाग देने पर लब्धि अंशादि आयेंगी। अंशादि लब्धि को शुद्धराशि संख्या में जोड़ने पर राश्यादि सायन लग्न होगा। सायन लग्न में अयनांश घटाने पर निरयण लग्न होगा।

यदि सायन सूर्य का भोग्यपला इष्टघटीपला में नहीं घटें तो इष्टकाल को ३० से गुणाकर सायन सूर्य की जो राशि हो उसके उदयमान से भाग देने पर प्राप्त अंशादि लब्धि को सायन सूर्य में जोड़ने पर सायन लग्न होगा।

श्लोक ५,६—लग्न से इष्टकाल का साधन।

सायन सूर्य के भुक्त अंशादि को उस राशि के उदयमान से गुणाकर ३० का भाग देने पर लग्न का भुक्तपल होगा।

इसी प्रकार भोग्यांशादि को भी उदयमान से गुणाकर ३० का भाग देने पर भोग्यपल होगा।

सायन सूर्य का भोग्यपल तथा सायन लग्न के भुक्तपला का योग करके योग-फल में सायन सूर्य तथा सायन लग्न के मध्यवर्ती राशियों के स्वोदयमानों को जोड़ कर ६० का भाग देने पर इष्टकाल होगा।

यदि एक राशि में सायन सूर्य तथा सायन लग्न हो तो दोनों के अन्तरांश को सायन लग्न के राश्युदयमान से गुणकर ३० का भाग देने पर इष्टकाल होगा।

एक राशिस्थित होकर भी यदि सायन सूर्य से सायन लग्न कम हो तो लब्ध इष्टकाल को ६० में घटाने पर रात्रिगत इष्टकाल होगा। अथवा रात्रिमान में घटाकर शेष में दिनमान जोड़ने पर रात्रिगत इष्टकाल होगा।

रात्रि के लग्न में जिस प्रकार सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ा जाता है उसी प्रकार लग्न से (रात्रिकालीन) इष्टकाल साधन में भी ६ राशि सूर्य में जोड़कर क्रिया करनी चाहिए।

श्लोक ७—नतोन्नत साधन।

चरपल को १५ घटी में एक जगह जोड़ने तथा एक जगह घटाने पर क्रम से दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध होते हैं। यदि मेषादि षड्राशि में सूर्य हों तो ऐसी क्रिया करनी चाहिए अन्यथा तुलादि षड्राशि में विपरीत क्रिया होती हैं। अर्थात् चरपल को १५ में जोड़ने पर रात्र्यर्द्ध तथा घटाने पर दिनार्द्ध होगा।

इष्टकाल यदि दिनार्द्ध से अल्प हो तो पूर्व उन्नतकाल होगा, यदि दिनार्द्ध से अधिक हो तो इष्टकाल को दिनमान में घटाने पर शेष पर उन्नत काल होगा।

पूर्व उन्नतकाल को दिनार्द्ध में घटाने पर पूर्व नत तथा पर उन्नतकाल भी दिनार्द्ध में घटाने पर पश्चिम नत होगा।

श्लोक ८-१२—इष्टकाल से छाया तथा छाया से इष्टकाल का साधन।

हरसाधन—दिनार्द्ध घटी में ५ को घटाकर रखने से वह मध्याह्न कालिक हर होगा।

नत के वर्ग को दो जगह स्थापित करेंगे। प्रथम नतवर्ग में ५० से गुणाकर ९०० जोड़कर दूसरे नतवर्ग से भाग देने पर प्राप्त लब्धि को मध्याह्नकालिक हर में से घटाने पर इष्टहर होगा।

यदि नत १५ घटी से अधिक हो तो नत में से दिनार्द्ध को घटाने से इष्टहर होगा। चरपल में प्रथम चरखण्ड से भाग देकर प्राप्त लब्धि को आधा करके उसका वर्ग करेंगे। वर्ग का षष्ठांश उसमें घटाकर १० से युत करके पलकर्ण से गुणने पर हृति होगी।

वर्ग को जोड़कर मूल लेने पर अक्षकर्ण पलकर्ण होगा।

हृति में इष्टहर से भाग देने पर अंगुलादि कर्ण होगा। अंगुलादि कर्ण को दो जगह स्थापित कर एक जगह १२ जोड़ेगें और एक जगह घटा देगें। दोनों के गुणन-फल का मूल लेंगे वही इष्टकालिक द्वादशाङ्गुल शंकुकी छाया होगी।

श्लोक १३,१४—क्रान्ति खण्ड से क्रान्ति साधन।

३६२, ३४१, २९९, २३६, १५०, ५२ ये छः (६) क्रान्तिखण्ड हैं। जिस ग्रह की क्रान्ति साधन करनी हो उसमें अयनांश जोड़कर उसका भुजांश बनायेंगे। भुजांश में १५ का भाग देकर लब्धितुल्य गत क्रान्ति-खण्डों का योग करेंगे तथा शेष भुजांश और भोग्य क्रान्ति-खण्ड को गुणकर १५ का भाग देकर लब्धि को उसी योग में जोड़ने पर क्रान्ति कला होगी। क्रान्ति कला में ६० का भाग देने पर अंशादि क्रान्ति होगी।

राश्यादि ग्रह जिस गोल में होगा उसी गोल की क्रान्ति होगी।

श्लोक १५—प्रकारान्तर से क्रान्ति साधन।

सायन ग्रह के भुजांश को १८० में घटाकर शेष को भुजांश से गुणा करके दो जगह स्थापित करेंगे। एक जगह में ७७ का भाग देकर लब्धि अंशादि को ४४२ अंश ४२ कला में घटाकर शेष से दूसरे जगह में भाग देने पर अंशादि क्रान्ति आयेगी। (यह क्रान्ति भी जिस गोल का ग्रह होगा उसी गोल की क्रान्ति होगी।)

श्लोक १६—अक्षांश साधन।

स्वदेशीय पलभा में ४१० जोड़कर ६० से भाग देने पर लब्धि को अक्षकर्ण में जोड़ने पर हर होगा।

पलभा को ९० से गुणकर हर से भाग देने पर लब्धि अक्षांश होगा।

अक्षांश में क्रान्ति का संस्कार करने पर नतांश होगा।

चन्द्रग्रहणाधिकारः-४

श्लोक १, २, ३—नतसाधन।

नत को ३० में घटाकर शेष को नत से गुणा करेंगे। गुणनफल में ११२५० से भाग देने पर लब्धि अंशादि आयेगी। अंशादि लब्धि में १० अंश में घटाने पर रविहर होगा। रविहर के दशमांश को रविहर में घटाने पर चन्द्रहर होगा। सूर्य-चन्द्र मन्दफल को सूर्य-चन्द्र हर से भाजित करने पर क्रमशः सूर्य व चन्द्र का नतफल होगा। पश्चिमनत में सूर्यनतफल धन तथा पूर्वनत में ऋण होगा। इसके विपरीत चन्द्रनतफल पश्चिमनत में ऋण तथा पूर्व में धन होगा।[1]

१. नत साधन में चन्द्र का—मध्याह्न से अर्द्धरात्रि = पूर्वकपाल।
अर्द्धरात्रि से मध्याह्न = पश्चिमकपाल।
सूर्य का—मध्याह्न से अर्द्धरात्रि = पश्चिमकपाल।
अर्द्धरात्रि से मध्याह्न = पूर्वकपाल।

इस प्रकार राश्यादि सूर्य-चन्द्र में नतफल का धन या ऋण संस्कार करके तिथि का साधन करने पर ग्रहणोपयुक्त तिथि होगी।

श्लोक ४—तात्कालिक ग्रह साधन।

गत या ऐष्य घटी से ग्रहगति को गुणा करके गुणनफल को ६० से सवर्णित करके ग्रह में संस्कार करने पर तात्कालिक ग्रह होंगे। पर्वान्तकाल में चन्द्र-सूर्य के अंशकला समान हो जाते हैं।

श्लोक ५—शर साधन।

राहु को १२ राशि में घटाने पर शेष पात होता है। सपात चन्द्र (पात + चन्द्र) के भुजांश की ज्या का साधन करेंगे। ज्या को ३ से गुणाकर ७ से भाग देने पर अंगुलादिक शर होगा। सपातचन्द्र जिस गोल का होगा उसी गोल का शर होगा। मेष से कन्या उत्तर गोल तथा तुला से मीन दक्षिण गोल होता है।

श्लोक ६—अयन ज्ञान तथा प्रकारान्तर से शर साधन।

कर्क से धनु तक दक्षिणायन तथा मकर से मिथुन तक उत्तरायण होता है। ७०,६५,५६,४३,२६,९ ये छः शरखण्ड हैं। सपातचन्द्र के भुजांश को १५ से भाजित करने पर लब्धि तुल्य भुक्तशरखण्ड होंगे। शेषांश में भोग्यशरखण्ड से गुणाकर १५ से भाग देने पर जो लब्धि हो उसको भुक्तशरखण्डों के योग में जोड़ने पर कलादि शर होगा। कलादि शर को ३से भाजित करने पर अंगुलादिक शर होगा।

श्लोक ७-८—चन्द्र-सूर्य-भूभा बिम्ब साधन।

चन्द्र गति को ७४ से भाग देने पर लब्धि चन्द्रबिम्बाङ्गुल होगा तथा सूर्य गति को २ से गुणाकर ११ से भाग देने पर सूर्यबिम्बाङ्गुल होगा।

चन्द्रगति को त्रिगुणित करके ६७ से भाग देकर लब्धि में सूर्यगति के सप्तमांश को घटाने पर अंगुलात्मक भूभाबिम्ब होगा।

भूभामण्डल में गये हुए चन्द्रबिम्ब को राहु छादित करता है तथा चन्द्रमण्डल में गये हुए सूर्यबिम्ब को चन्द्र छादित करता है। अतएव चन्द्रग्रहण में चन्द्रबिम्ब छाद्य भूभाबिम्बछादक तथा सूर्यग्रहण में सूर्यबिम्ब छाद्य और चन्द्रबिम्ब छादक होता है।

श्लोक ९—ग्रासमान साधन।

अंगुलात्मक छाद्य और छादक बिम्ब को जोड़कर उसके आधे में शराङ्गुल को

घटाने पर ग्रासमान होगा। ग्रासमान में यदि छाद्यबिम्ब का मान घट जाय तो शेष खग्रास होता है।

श्लोक १०—स्थितिविमर्दघटी का साधन।

शर को २ से गुणकर ग्रासमान जोड़कर ग्रासमान से ही गुणा कर उसका मूल लेगें। मूलको १८० से गुणकर सूर्य-चन्द्र के गत्यन्तर से भाग देने पर लब्धि घट्यादि स्थिति होगी।

शर को २ से गुणा कर खग्रासमान को जोड़कर खग्रासमान से ही गुणा कर उसका मूल लेगें। मूल को १८० से गुणकर सूर्य-चन्द्र के गत्यन्तर से भाग देने पर लब्धि विमर्दघटिका होगी।

श्लोक ११-१३—पंचकाल साधन।

शराङ्गुल को ४८ से भाजित कर घट्यादि लब्धि को धन या ऋण संस्कार करने पर स्पर्श स्थिति मोक्षस्थिति तथा स्पर्शविमर्द व मोक्षविमर्द होता है। सपात चन्द्र (पात + चन्द्र) यदि २, ४ पाद में रहे तो लब्धि को युत करने पर मोक्षस्थिति, हीन करने पर स्पर्शस्थिति तथा १, ३ पाद में रहने पर हीन करने पर मोक्षस्थिति और युत करने पर स्पर्शस्थिति होगी।

सूर्यग्रहण में इसी स्पर्श-मोक्षस्थिति से स्पर्शकाल मोक्षकाल तथा स्पर्श-विमर्द घटी से सम्मीलन-उन्मीलन काल का साधन होगा।

श्लोक १५-१६—वलन साधन।

स्पर्शकालिक नत को ९० से गुणकर रात्र्यर्द्ध से (सूर्यग्रहण में दिनार्द्ध से) भाग देने पर नतांश होगा। नतांश की ज्या लाकर उसे अक्षांश से गुण देगें, गुणनफल में त्रिज्या (१२०) से भाग देने पर स्पार्शिक अक्षवलन होगा।

स्पार्शिक चन्द्र में अयनांश जोड़कर उसका कोटि लाकर ज्या साधन करेगें। कोटयंश की ज्या में ५ से भाग देने पर आयनवलन होगा। सायनांश चन्द्र जिस दिशा का होगा उसी दिशा का स्पार्शिक आयनवलन होगा।

अक्षांश तथा सायनचन्द्र के गोल की दिशा एक हो तो आक्ष-आयनवलन का योग करके (भिन्न दिशा हो तो अन्तर करके) उसकी ज्या साधन करेगें। ज्या में चन्द्र व भूभाबिम्ब के योगार्द्ध से गुणा कर १२०से भाग देने पर स्पार्शिक स्पष्ट-वलन होगा।

इसी प्रकार मोक्षकालिक नत से मौक्षिक आक्षवलन तथा मोक्षकालिक चन्द्र से मौक्षिक आयनवलन का साधन करके दोनों (आक्ष-आयन) से मौक्षिक स्पष्टवलन का साधन करेगें।

श्लोक १७—स्पार्शिक मौक्षिक शर साधन।

यदि विषमपदस्थित सपातचन्द्र से साधित शर हो तो विमर्दघटी के तृतीयांश को शर में घटाने पर स्पर्शकालिक और जोड़ने पर मोक्षकालिक शर होगा। तथा समपदस्थित सपातचन्द्र से साधित शर में विमर्दघटी के तृतीयांश को जोड़ने पर स्पर्शकालिक और घटाने पर मोक्षकालिक शर होगा।

श्लोक १८-१९—परिलेख कथन।

समान समतल भूमि में निर्दिष्ट केन्द्रबिन्दु से ग्राह्यग्राहक बिम्बों के व्यासों के योगार्द्ध से तथा ग्राह्यबिम्ब के व्यासार्द्ध से वृत्त की रचना करनी चाहिए। इसी केन्द्रबिन्दु पर पूर्वापर याम्योत्तर आदि दिशाओं का निर्देश करना चाहिए। ग्राह्यग्राहक बिम्बों के व्यासों के योगार्द्ध से निर्मित वृत्त का नाम मानैक्यार्द्ध वृत्त है। इस मानैक्यार्द्ध वृत्त में पूर्व से स्पार्शिक वलन एवं पश्चिम से मौक्षिक वलन को ज्या की तरह देना चाहिए। सूर्यग्रहण में स्पार्शिक वलन पश्चिम से एवं मौक्षिक वलन पूर्व से ज्या की तरह देना चाहिए। शर यदि दक्षिण से दिया गया हो तो वलनाङ्गुल को भी दक्षिण चिह्न से तथा उत्तर से दिया गया हो तो उत्तर चिह्न से देना चाहिए।

चन्द्रग्रहण हेतु इतने आवश्यक हेतु हैं।

(१) पर्वान्तिकाल	(६) चन्द्रसूर्य का एक घटी का अन्तर	(१०) पश्चात् के पाँच घटी में चन्द्र का शर
(२) चान्द्रदिनगति		
(३) रविदिनगति	(७) शरघटी	(११) भूभा खण्ड
(४) चन्द्रसूर्यका पाँच घड़ी का अन्तर	(८) पर्वान्त में चन्द्र शर	(१२) मानैक्यखण्ड
(५) मानान्तर खण्ड	(९) पूर्वके पाँच घटी में चन्द्र का शर	(१४) चन्द्रघटीगति।

श्लोक २०—स्पर्श-मध्य-मोक्ष स्थान।

मध्यग्रहणबिन्दु से शर की दिशा में मध्यशर को देकर क्रमशः तीनों शरों को (स्पर्श-मध्य-मोक्ष) चिह्नित करेगें, तथा भूभाबिम्ब व्यासार्द्ध द्वारा स्पार्शिक शर के स्थान से वृत्त का निर्माण करेगें। उस वृत्त के पूर्व दिशा में चन्द्रग्रहण का स्पर्श और पश्चिम दिशा में मोक्ष होगा।

श्लोक २१-२३—इष्टग्रास कथन ।

मध्यशराग्रबिन्दु से स्पर्शाग्ररेखा में ग्राहक का ग्रहणमार्ग तथा मध्यशराग्र से मोक्षशराग्रबिन्दु तक मोक्षमार्ग होता है । तीनों शरों को (स्पर्श-मध्य-मोक्ष) स्पर्श करनेवाली रेखा धनुषाकारा होती है ।

स्पर्शशराग्र से मध्यशराग्र की स्पर्शरेखा में ग्रहण का स्पर्श और मध्य होता है । ग्राह्य-ग्राहकबिम्बों के अन्तरार्द्ध व्यासार्द्ध प्रमाण केन्द्र से निर्मित वृत्त में उक्त स्पर्श-मोक्ष दोनों मार्गों का इस वृत्त के साथ जहाँ योग होता है उन योगबिन्दुओं से भूभाव्यासार्द्ध से निर्मित वृत्त में स्पार्शिक मार्ग में संमीलन एवं मौक्षिक मार्ग में उन्मीलन होता है ।

इष्टकाल गुणित मार्गाङ्गुल में स्पष्टस्थिति से भाग देने पर इष्टकाल में इष्टग्रास का अंगुलात्मक मान आ जाता है ।

———

सूर्यग्रहणाधिकारः–५

श्लोक १—नत-उन्नत साधन ।

दर्शान्तकाल या पर्वान्त का सूर्यसाधन करके लग्नानयन करेगें । लग्न में अयनांश जोड़कर सायन लग्न बनायेगें । सायन लग्न में ३ राशि घटाने पर वित्रिभ लग्न होता है । वित्रिभ लग्न की क्रान्ति का साधन करेगें । जिस दिशा का वित्रिभ लग्न होगा उसी दिशा की क्रान्ति होगी । क्रान्ति और अक्षांश का संस्कार (एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर) करने पर नतांश होगा । ९० अंश में नतांश को घटाने पर उन्नतांश होगा ।

श्लोक २,३—लम्बन-नति साधन ।

दर्शान्तकालिक सायन सूर्य और सायन वित्रिभ लग्न के अन्तरांश का भुज बनाकर उसकी ज्या लायेगें । ज्या को ३० से भाजित करने पर मध्य लम्बन होगा । मध्य लम्बन को उन्नतांश की ज्या से गुणकर १२० से भाग देने पर स्पष्ट लम्बन होगा । लम्बन का संस्कार—

सायन सूर्य से सायन वित्रिभलग्न अधिक तथा दर्शान्तकाल पश्चिम कपाल का हो तो दर्शान्त + स्पष्ट लम्बन । सायन सूर्य से सायन वित्रिभ लग्न कम तथा दर्शान्तकाल पूर्वकपाल का हो तो दर्शान्त – स्पष्ट लम्बन ।

नतांश की ज्या साधन करके उसे दो जगह स्थापित करके एक में १० का भाग देकर लब्धि को दूसरे जगह में जोड़कर ८ का भाग देने पर लब्धि अंगुलादि नति होगी । नति सर्वदा दक्षिण दिशा की होती है ।

श्लोक ४-५—प्रकारान्तर से लम्बन साधन ।

७७ । १४१ । १८८ । २१९ । २३५ । २४० । २३६ । २४० । २०० ये ९ लम्बन पिण्ड हैं ।

गणितागत आये हुए पर्वान्तकालिक सायनसूर्य तथा वित्रिभलग्न के अन्तरांश का भुज साधन करके उस भुजांश में ११ का भाग देने पर लब्धितुल्य लम्बन पिण्ड गत होगा । गत और गम्य पिण्ड के अन्तर को शेष भुजांश से गुणकर ११ से भाग देकर लब्धि को गत या गम्य पिण्ड में संस्कार (यदि गम्यपिण्ड गत से अधिक हो तो गम्य में घटा देगें यदि गतपिण्ड अधिक हो तो गम्य में जोड़ेगें ।) करके ६० से भाजित करने पर मध्यलम्बन होगा ।

वित्रिभ लग्न की उन्नतज्या लाकर उसमें मध्यलम्बन से गुणाकर १२० से भाग देने पर स्पष्ट लम्बन होगा । इस लम्बन का संस्कार दर्शान्त में पूर्वकथित लम्बन-संस्कारानुसार ही होगा ।

श्लोक ६-७—स्थिति साधन ।

दर्शान्तकालिक चन्द्र और पात का योग सपातचन्द्र होगा । सपातचन्द्र के भुज की ज्या साधन करके ज्या को ३ से गुणाकर ४ से भाग देने पर शर होगा । पूर्व साधित नति और शर के परस्पर संस्कार से स्पष्ट शर होगा । (यदि शर और नति की दिशा एक हो तो योग, विपरीत हो तो अन्तर होगा ।)

सूर्यबिम्ब और चन्द्रबिम्ब का साधन कर दोनों का योग करके आधा करने पर बिम्बयोगार्द्ध होगा । बिम्बयोगार्द्ध में स्पष्ट शर को घटाने पर ग्रासाङ्गुल होगा ।

द्विगुणित स्पष्टशर में ग्रासाङ्गुल जोड़कर (योगफल में) ग्रासाङ्गुल से ही गुणाकर उसका मूल लेगें । मूल में १८० का गुणाकर सूर्य-चन्द्र के गत्यन्तर से भाग देने पर स्थित्यर्द्ध होगा । सूर्यग्रहण में विमर्द का अभाव होता है ।

श्लोक ८—स्पर्श-मोक्ष साधन ।

घट्यादि स्थित्यर्द्ध को दर्शान्त में घटाने पर जो शेष हो उसको इष्टकाल मानकर उससे सूर्य तथा लग्न का साधन करेगें । सूर्य और लग्न को सायन सूर्य व

वित्रिभलग्न बनाकर उसके द्वारा लम्बन साधन करने पर स्पार्शिक लम्बन होगा। इसी प्रकार स्पार्शिक नति और शर का भी साधन करेंगे।

स्थित्यर्द्ध को दर्शान्त में जोड़कर उसे इष्टकाल मानकर सायनसूर्य तथा वित्रिभ लग्न का आनयन कर लम्बन का साधन करने पर मौक्षिक लम्बन होगा, तथा मौक्षिक नति और शर का भी साधन करेगें।

इस स्पार्शिक और मौक्षिक लम्बन-नति-शर से स्पर्शकाल और मोक्षकाल का साधन करेंगे।

श्लोक ९—ग्रहण में सूर्य तथा चन्द्र का वर्णज्ञान।

सूर्य ग्रहण में ग्रासमान यदि सूर्यबिम्ब के १२वें भाग के बराबर हो तो वह दृष्टिगोचर नहीं होता। इसी प्रकार चन्द्रग्रहण में ग्रासमान यदि चन्द्रबिम्ब के १६वें भाग के बराबर हो तो वह भी दृष्टिगोचर नहीं होता।

अल्पग्रहण में चन्द्रमा धूम्रवर्ण का, अर्द्धग्रहण में कृष्णवर्ण का तथा सर्वग्रहण में ललाई युक्त भूरे रंग का होता है। खण्डग्रहण या सर्वग्रहण में सूर्य सर्वदा कृष्ण वर्ण का ही होता है।

उदयास्ताधिकारः-६

श्लोक १,२—गुरु का उदयास्त साधन।

गताब्द (इष्टशके-११०५) को दो जगह स्थापित करेंगें। एक से अहर्गणानयन करेंगें। द्वितीय में १० से भाग देकर लब्धि को लाये गये अहर्गण में जोड़कर योगफल में १०५ घटाकर ३९९ से भाग देगें यदि १५ शेष हो तो गुरु का उदय यदि ३८४ से अधिक हो तो अस्त हो।

स्पष्ट सूर्य जिस राशि में हो उसके स्वोदयमान को ३०० से संस्कृत कर शेष में १५ से गुणाकर स्वोदयमान से भाग देने पर प्राप्त दिनादि शेष को गुरु के उदय में धन करेंगें।

श्लोक ३, ४—शुक्र का उदयास्त साधन।

अहर्गण में ११५ घटाकर गताब्द का १६वाँ भाग जोड़ देंगे। योगफल में ५८४ का भाग देने पर शेष यदि ३६ से अधिक हो तो पश्चिम में उदय, २८७ से अधिक हो तो पश्चिम में अस्त, २९७ से अधिक हो तो पूर्व में उदय, ५४८ से अधिक हो तो पूर्व में अस्त होता है।

सूर्य जिस राशि का हो उस राशि के स्वोदयमान को ३०० में संस्कार करके यदि पश्चिम में अस्त हो तो ३५ से पूर्व में अस्त हो तो ३६ से गुणाकर स्वोदय से भाग देने पर जो शेष बचे वह दिनादि होगा। इस दिनादि के संस्कार से शुक्रोदय शुक्रास्त होगा।

श्लोक ५—शीघ्रकेन्द्रांश से वक्रत्व का ज्ञान।

पंचतारा ग्रह (भौ. बु. गु. शु. श.) अपने-अपने द्वितीय शीघ्रकेन्द्र के अंशानुसार वक्री तथा मार्गी होते हैं। जितने केन्द्रांश पर वे वक्री होते हैं उसको ३६० में घटाने पर जो शेष बचे उतने अंश पर वे पुनः मार्गी हो जाते हैं। जैसे—

ग्रह	केन्द्रांश	वक्री	केन्द्रांश	मार्गी
भौम	१६३	"	१९७	"
बुध	१४५	"	२१५	"
गुरु	१२५	"	२३५	"
शुक्र	१६७	"	१९३	"
शनि	११३	"	२४७	"

श्लोक ६—भौम गुरु तथा शनि का उदयास्त काल का ज्ञान।

बुध का द्वितीय शीघ्रकेन्द्रांश यदि ५० हो तथा शुक्र का २४ हो तो पश्चिम में उदय होता है। बुध का १५५ तथा शुक्र का १७७ केन्द्रांश हो तो पश्चिम में अस्त होता है। बुध का केन्द्रांश २०५ तथा शुक्र का १८३ हो तो पूर्व में उदय तथा ३१० हो तो बुध और ३३६ हो तो शुक्र का पश्चिम में अस्त होता है।

श्लोक ८—वक्रादि का दिन साधन।

शीघ्रकेन्द्र के जितने अंश पर से वक्रारम्भ होकर जितने अंश तक रहे उतने अंश की कला बनाकर शीघ्रकेन्द्र की गति से भाग देने पर वक्रत्व का दिनादि आ जायेगा। इसी प्रकार मार्गत्व के दिनादि का भी साधन किया जा सकता है।

श्लोक ९—ग्रहों के कालांश तथा पातविक्षेप।

पूर्वाचार्यों के अनुसार चन्द्रादिग्रहों के कालांश ये हैं। चन्द्र का १२, भौम का १७, बुध का १३, गुरु का ११, शुक्र का ९ और शनि का १५ है। ग्रह के

वक्री रहने पर कालांश में १ घटाने पर वक्री ग्रह का कालांश होगा। जैसे भौम का १६, बुध का १२, गुरु का १० इत्यादि।

भौमादि ग्रहों के राश्यादिपात भी निम्नलिखित हैं। भौम का ११।८ बुध का ११।९ गुरु का ९।८ शुक्र का १०।० तथा शनि का ८।१७ है। इन पातों को ग्रहों के शीघ्रफल में विपरीत संस्कार (शीघ्रफल धन हो तो पात को ऋण करेंगे और शीघ्रफल ऋण हो तो पात को धन करेंगे) करने पर स्पष्टपात होंगे। बुध और शुक्र के पात को अपने-अपने मन्दफलों में ग्रह के अनुसार संस्कार करने पर स्पष्टपात होंगे।

श्लोक १०—भौमादि ग्रहों के विक्षेप (शर) साधन।

भौमादि पंचतारा ग्रहों के कलात्मक विक्षेप निम्नलिखित हैं। भौम का ११० कला, बुध का १५२, गुरु का ७६, शुक्र का १३६ तथा शनि का १३० है।

स्पष्टग्रह को अपने पात से युत करेंगे। (बुध-शुक्र के शीघ्रोच्च में पात को जोड़ेंगे) सपातग्रह का भुज बनाकर उसकी ज्या साधन करके ज्या में कलात्मक शर का गुणा करके शीघ्रकर्ण से भाग देने पर कलात्मक शर होगा। कलात्मक शर में ३ से भाग देने पर अंगुलादि शर होगा।

श्लोक ११, १३—दृक्कर्म तथा उदयास्त साधन।

शीघ्रकेन्द्रांश के अनुसार ग्रह का यदि पूर्व में उदयास्त हो तो ३ राशि घटा देगें पश्चिम में हो तो ३ राशि जोड़ देगें। ३ राशि से संस्कृत ग्रह का क्रान्ति साधन करेगें। क्रान्ति और अक्षांश का एक दिशा में योग तथा भिन्न दिशा में अन्तर करके नतांश का साधन करेगें। नतांश को ९० में घटाकर उन्नतांश का साधन करेगें। नतांश और उन्नतांश की अलग-अलग ज्या साधन करेगें। ग्रह में उसका विक्षेप (पात) जोड़कर जो अंगुलादि शर आवे उसे नतांश की ज्या से गुणा करके गुणनफल को त्रिगुणित करके उन्नतांश की ज्या से भाग देने पर जो कलादि लब्धि हो उसका ग्रह में संस्कार करेगें। यदि पूर्वोदयास्त हो तथा शर और नतांश की यदि एक दिशा हो तो ग्रह में धन, भिन्न दिशा हो तो ऋण संस्कार अन्यथा पश्चिमोदयास्त हो तथा शर व नतांश की एक दिशा हो तो फल को ऋण भिन्न दिशा हो तो धन संस्कार करेगें। इस प्रकार संस्कार करने पर दृश्य ग्रह होगा।

दृश्यग्रह और सूर्य की राश्यादि में जो अल्प हो वह सूर्य, जो अधिक हो वह लग्न माना जायेगा। लग्न और सूर्य की अन्तरघटिका (त्रि० प्र० श्लो० ५,६)

का साधन करेगें। यदि पश्चिमोदयास्त हो तो सूर्य और लग्न में ६ राशि जोड़कर अन्तरघटिका का साधन करेगें। अन्तरघटिका को ६ से गुणा करने पर इष्टकालांश होगा। यदि पूर्वपठित कालांश से इष्टकालांश अधिक हो तो ग्रहोदय गत व ग्रहास्त गम्य होगा तथा पठित कालांश से इष्टकालांश न्यून हो तो ग्रहोदय गम्य व ग्रहास्त गत होगा।

इष्टकालांश और पठित कालांश की अन्तरकला को ३०० से गुणाकर सायन सूर्य के राश्युदय मान से भाग देगें। यदि पश्चिमोदयास्त होगा तो सायन सूर्य में ६ राशि जोड़कर उसके राश्युदयमान से भाग देगें। लब्धि में ग्रह और सूर्य के गत्यन्तर से भाग देने पर लब्धितुल्य उदयास्त के दिन होंगे। यदि ग्रह वक्री हो तो सूर्य और ग्रह के गतियोग से भाग देने पर उदयास्त के दिन होंगे।

श्लोक १४—विशेष कथन।

सूर्य से अधिक प्राग्दृग्ग्रह तथा सूर्य से कम पश्चिमदृग्ग्रह में साधित दिवसों को विपरीत समझे अर्थात् गम्य आवे तो गत और गत आवे तो गम्य समझे। अर्थात् साधित इष्टकालांश यदि पठित कालांश से अधिक हो तो दोनो की योग कलाओं से साधित दिवसों को विपरीत समझे।

श्लोक १५—अगस्त्य का उदयास्त्य साधन

अष्टगुणित पलभा को ९८ अंश में जोड़ने पर जो अंशादि हो उतने अंश पर जब सूर्य आवे तो अगस्त्य का उदय तथा अष्टगुणित पलभा को ७८ में घटाने पर जो अंशादि हो उतने अंश पर जब सूर्य आवे तो अगस्त्य का अस्त होता है।

शृङ्गोन्नत्यधिकारः-७

श्लोक १, १½—वलन साधन।

अस्तकालिक सायनचन्द्र का भुज साधन कर उसकी क्रान्ति का साधन कर क्रान्ति और शर का संस्कार करेगें। एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर करेगें। सूर्य में ६ राशि जोड़कर उसका भुज बनाकर क्रान्ति का साधन करेगें। सूर्य की क्रान्ति में चन्द्र की क्रान्ति को घटा देगें। चन्द्र में सूर्य को घटाकर उसकी भुजज्या को अक्षांश से गुणा करके १२० से भाग देगें लब्धि को पूर्व

संस्कृत सूर्य की क्रान्ति से संस्कृत करेगें। (एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर करेगें।) यह सर्वसंस्कृत क्रान्ति होगी।

चन्द्र में सूर्य को घटाकर उसके राश्यादि भुज में ५ से गुणाकर गुणनफल जो राश्यादि हो उसको अंशादि मान कलात्मक बनाकर सर्वसंस्कृत कलात्मक क्रान्ति में भाग देने पर वलन होगा। जिस दिशा की सर्वसंस्कृत क्रान्ति होगी उसी दिशा का अंगुलात्मक वलन होगा।

श्लोक २, २½—शुक्ल अशुक्ल भाग का कथन।

राश्यादि चन्द्र में से सूर्य को घटाकर शेष की कोटि लायेगें। कोटि में १५ का भाग देने पर हार होगा। हार में ३६ से भाग देकर लब्धि को दो जगह स्थापित करेगें। एक जगह लब्धि में हार को घटाकर शेष का आधा करने पर विभा तथा दूसरे जगह लब्धि में हार को जोड़कर आधा करने पर स्वभा होगी।

श्लोक ३, ४—परिलेख कथन।

षडङ्गुल व्यास से समतल भूमि या कागज पर एक चन्द्रबिम्ब का निर्माण कर उसमें पूर्व-पश्चिम उत्तर-दक्षिण दिशा का निर्देश करना चाहिए। उसमें दिशानुसार वलनाङ्गुल को अंकित करना चाहिए। यदि शुक्लपक्ष हो तो पूर्व दिशा में, कृष्णपक्ष हो तो पश्चिम दिशा में अंगुलात्मक वलन का निर्देश करना चाहिए। वलनाग्रसूत्र में चन्द्रबिम्ब के केन्द्र से विभाग्र-बिन्दु से और स्वभातुल्य व्यासार्द्ध से निर्मित वृत्त में खण्ड चन्द्राकृति को देना चाहिए। इस प्रकार जिस दिशा का वलन होगा उसके विपरीत दिशा में शृङ्ग की आकृति उत्पन्न होगी।

———

ग्रहयुत्यधिकारः-८

श्लोक १, १½—भौमादि ग्रहों के कलात्मक बिम्ब साधन।

भौमादि पाँच ग्रहों के कलात्मक और योजनात्मक बिम्ब निम्नलिखित हैं :

ग्रह	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
बिम्बमान					
कलात्मक	५	६	७	९	५
योजनात्मक	१८८५	२७९	१६६४९	१११०	२९५५

ग्रहों के कलात्मक बिम्बमान को त्रिज्या और शीघ्रकर्ण के अन्तरांश से गुणाकर गुणनफल में त्रिगुणित पराख्य से भाग देने पर जो लब्धि हो उसको

कलात्मक बिम्बमान में धन ऋण करके ३ से भाग देने पर अङ्गुलात्मक बिम्बमान होगा।

त्रिज्या (१२०) से यदि शीघ्रकर्ण अधिक हो तो कलात्मक बिम्ब में लब्धि को ऋण करेगें। यदि त्रिज्या से शीघ्रकर्ण कम हो तो लब्धि को कलात्मक बिम्ब में धन करेगें।

श्लोक २, ३—युतिकाल का ज्ञान।

तीव्रगति वाला ग्रह अधिक तथा मन्दगति वाला ग्रह अल्प हो तो युति गत होता है अथवा यदि दोनों ग्रह वक्री हों तो तीव्रगामी ग्रह अल्प और मन्दगामी ग्रह अधिक हो तो युति गत होती है। इन लक्षणों से भिन्न स्थिति में युति एष्य होती हैं।

युतिसाधन—दोनों ग्रह वक्री या मार्गी हों तो दोनों का अन्तर कर उनको कलादि बनाकर दोनों के गत्यन्तर कला से भाग देने पर जो लब्धि हो उतने दिनों में युति के गत गम्य काल होते हैं। यदि एक ग्रह वक्री तथा एक मार्गी हो तो दोनों के गतियोग से भाग देने पर लब्धितुल्य दिनों में युति के गत गम्य होते हैं।

युतिकाल के ग्रहों के शर साधन करेगें। शर की दिशानुसार ही ग्रह की दिशा होगी। दोनों के शर उत्तर के हों तो जिस ग्रह का शर बड़ा होगा वह उत्तर दिशा का तथा छोटा शर वाला ग्रह दक्षिण दिशा का होगा। यदि दोनों के शर दक्षिण के हों तो बड़े शर वाला दक्षिण का तथा छोटे शर वाला ग्रह उत्तर दिशा का होगा।

एक ही दिशा में दोनों ग्रहों के शर हो तो दोनों का अन्तर करने तथा भिन्न दिशा के हों तो योग करने से दोनों ग्रह-बिम्बों का अन्तर ज्ञात होता है।

यह अन्तर दोनों ग्रहों के बिम्ब-व्यासार्द्ध से अल्प हो तो दोनों बिम्बों में भेद होता है।

———

पाताधिकारः-९

श्लोक १--पात का सम्भव तथा गतगम्य ज्ञान।

सायन और सायन चन्द्र का योग यदि ६ राशि हो तो व्यतिपात योग होता है। यदि १२ राशि के तुल्य हो वैधृति नामक योग होता है। सूर्य-चन्द्र का योग यदि ६ या १२ राशि से अल्प हो तो पातकाल एष्य होता है यदि अधिक हो तो गत होता है।

श्लोक २, ३—पात का गतैष्यमान।

पातकाल में सूर्य-चन्द्र और पात का तथा शरखण्ड द्वारा शर का साधन कर लेना चाहिए। अब पात का गतैष्य इस प्रकार होगा—

विषमपदस्थित सायनचन्द्र व सपातचन्द्र एक गोल में हो तो		=	पात गत
समपदस्थित सायनचन्द्र व सपातचन्द्र	भिन्न "	=	"
विषमपदस्थित सायनचन्द्र व सपातचन्द्र "	"	=	पात ऐष्य
समपदस्थित " " "	एक "	=	" "

श्लोक ३½—क्रान्तिखण्ड तथा शरखण्ड का धन-ऋणत्व।

क्रान्तिखण्ड (त्रिप्र० १३,१४) को ४ बार क्रम उत्क्रम से रखने पर २४ क्रान्तिखण्ड होगें। पहला ६ खण्ड धन, दूसरा ६ ऋण, तीसरा ६ धन तथा चौथा ६ ऋण होगें।

इसी प्रकार शरखण्ड (च० ग्र० ६) को भी ४ बार क्रम उत्क्रम से रखने पर २४ शरखण्ड होगें। जिसमें पहला ६ धन, दूसरा ६ ऋण, तीसरा ६ धन तथा चौथा ६ ऋण होंगे।

श्लोक ४—गतखण्ड साधन।

सपातचन्द्र को अंशादि बनाकर १५ से भाग देने पर लब्धि तुल्य गत शरखण्ड होगें तथा शेष अंश भोग्य शरखण्ड का अंश होगा। सायनचन्द्र को अंशादि बना कर १५ से भाग देने पर लब्धितुल्य गत क्रान्तिखण्ड होंगे, शेष भोग्य क्रान्तिखण्ड के अंश होंगे।

श्लोक ५, ६, ७—पात का गत और ऐष्य साधन।

पूर्वपठित शरखण्डों और क्रान्तिखण्डों में यदि पात गत हो और सपातचन्द्र समपद में हो तो भोग्याङ्क से पिछले खण्डों को यदि विषमपद में हो तो अग्रिम खण्डों को स्थापित करना चाहिए।

चन्द्र जिस अयन का हो उसी दिशा का क्रान्त्यङ्क तथा पातयुक्त चन्द्र जिस दिशा का हो उसका शराङ्क ग्रहण करना चाहिए। क्रान्त्यङ्कों में शराङ्कों का संस्कार (एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर) कर पुनः उसमें भोग्याङ्क के तेरहवें भाग का संस्कार करने पर स्पष्ट पात होगा।

श्लोक ८,९,१०—पात का मध्यकाल साधन।

चन्द्रशर को १५ से गुणाकर उसमें शरखण्ड को घटायेगें, जितने शरखण्ड घटेंगे वे शुद्धखण्ड तथा जो नहीं घटे वह अशुद्ध खण्ड होगा। शेष में भोग्यखण्ड

से भाग देने पर जो लब्धि अंशादि आवे उसको शुद्ध खण्डों के योग में जोड़ देंगे। उसको ६० से गुणकर चन्द्रगति से भाग देने पर दिनादिक लब्धि आयेगी।

यदि पातकाल गत होगा तो सूर्य-चन्द्र का राशियोग १२ तुल्य होने के इतने दिन पूर्व ही पात मध्य होगा, यदि पात गम्य होगा तो इतने दिन पश्चात् में पात का मध्य होगा।

श्लोक ११—स्थिति साधन।

अशुद्ध शरखण्ड से २२०३ में भाग देने पर जो लब्धि हो उसको पात मध्यकाल में ऋण व धन करने पर पात का स्पर्श व मोक्षकाल होगा। स्पर्श से मोक्षकाल तक स्थिति घटिका होगी।

श्लोक १२,१३—शुद्ध खण्ड विचार।

शरखण्ड द्वारा जो शर आवे उसमें १५ से गुणा करने पर गुणनफल यदि ४८० से अधिक अधिक हो तो पात सम्भव नहीं होता यदि ४८० से अल्प होता है तो पात सम्भव होता है।

श्लोक १४—पात सम्भव व स्थिति साधन।

जिस शर के अनुसार पात सम्भव हो उस शर को ४८ में घटाकर ९ से गुणाकर अन्त्य शरखण्ड से भाग देने पर जो लब्धि हो उसको पात मध्य में जोड़ने तथा घटाने पर क्रमशः मोक्ष व स्पर्शकाल होगा।

श्लोक १५—क्रान्तिसाम्य कथन।

चन्द्र-सूर्य के बिम्बयोगार्द्ध तथा मान योगार्द्ध (अंगुलात्मक, कलात्मक) से क्रांत्यन्तर यदि अल्प हो तो क्रान्तिसाम्य होता है। उसी समय पात की स्थिति होती है।

पर्व संभवाधिकारः-१०

श्लोक १—शर साधन।

मासगण को २ से गुणाकर ३ से भाग देने पर अंशादि जो होगा उसमें २७२ जोड़ देगे। योग फल में मासगण के २० वा भाग को जोड़ देंगे।

अर्कघटी फल को ५ से भाग देकर लब्धि अंशादि को उसमें धन या ऋण करके ३० से भाग देकर राशि बनायेगे।

राशि स्थान में मासगण संख्या को लिखकर १२ से शोधित कर राशि का साधन करेगें। जो राशि अंश-कला-विकलादि आवे उसका भुज साधन करेंगे। (यदि सूर्य ग्रहण का हो तो १५ अंश जोड़कर भुज का साधन करे) भुजांश का आधा जोड़ने पर अङ्गुलादि शर होगा।

जिसका भुज साधन किया गया हो उसकी जो दिशा हो वही शर की दिशा होगी।

श्लोक २—नतसाधन।

दर्शान्तकालिक नत (चं० ग्र० धि० १. २. ३) का साधन करके उसमे ४ का भाग देने पर राशि, पुनः शेष को ३० से गुणाकर ४ से भाग देने अंश शेष को पुनः ६० से गुणाकर ४ भाग देंगे पर कला तथा शेष में ६० से गुणाकर ४ का भाग देने पर विकला होगी। जो कला विकला आवे उसे दर्शान्तकालिक सूर्य में (पश्चिम रहने पर जोड़ेंगे पूर्वकपाल रहने पर घटा देंगे) संस्कार करके अयनांश जोड़कर उसका भुज साधन कर भुज को ७ राशि में घटाकर शेष में भुज से गुणाकर उसको दूना करने पर अंशादि क्रान्ति होगी।

क्रान्ति तथा अक्षांश के संस्कार (एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर) से नतांश का साधन कर ४ से भाग देने पर नति होगी। नति तथा पूर्वानीत शर के संस्कार से (एक दिशा में योग भिन्न दिशा में अन्तर) स्पष्टशर होगा।

श्लोक ३—ग्रहण संभवासंभव कथन।

चन्द्र के मानैक्यार्द्ध १९ से चन्द्रशर यदि कम हो तो चन्द्रग्रहण संभव होता है। सूर्य के मानैक्यार्द्ध ११ से यदि सूर्य का शर अल्प हो तो सूर्य संभव होता है। चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण का साधन पूर्वोक्त (चं० ग्र० धि० सू० ग्र० धि०) प्रकार से होगा।

भगणादि सूर्य में क्षेप घटाकर दोनों को जोड़कर द्विगुणित कर २ जोड़कर सात से भाग देने पर शेषानुसार पर्वेश होंगे। जैसे—

१ शेष में ब्रह्म	२ शेष में चन्द्र
३ " " इन्द्र	४ " " कुबेर
५ " " वरुण	६ " " अग्नि
७ " " यम	

नीरदाध्यायः-११

श्लोक १,२,३—अमान्तकालीन सूर्य से (जिस अमान्त में सूर्यग्रहण हो) अर्थात् समकल सूर्य से नीरदार्क का (मेघकारक सूर्य) आनयन किया जाता है।

राश्यादि समकल सूर्य में १ राशि १४ अंश घटाकर जो शेष हो उसे चक्र शुद्ध (१२ राशि में घटाकर) करके कलात्मक करेगें। कलात्मक बनाकर उसका वर्ग करेगें। वर्ग संख्या को द्विगुणित करके उसमें २१६०० (चक्र कला) का भाग देगें। लब्धि कलादि आयेगी। उसको ६० से भाजित कर अंशादि और अंशादि को ३० से भाजित कर राश्यादि बनायेगें, इसकी आढ्य संज्ञा होगी।

आढ्य को दो जगह स्थापित करेगें। एक में १३ अंश युक्त करके जो हो उसे समकल सूर्य में जोड़ देगें। जोड़ने पर जो आवे उसे औदयिक सूर्य (अमान्त का सूर्योदय) में घटा देगें जो शेष बचे उसमें द्वितीय स्थान स्थित राश्यादि आढ्य को जोड़ने पर स्पष्ट होगा।

श्लोक ४,५,६—नीरदार्क यदि सूर्य और मंगलके नवांश में रहे तो मेघ (वर्षा) नहीं होता है। शनि और बुध के नवांश में रहे तो अल्प वर्षा (क्षुद्र वर्षा) होती है। चन्द्र और शुक्र के नवांश में रहे तो पूर्ण वर्षा होती है। यदि गुरु के नवांश में नीरदार्क रहे तो वायु अधिक और वर्षा कम होती है।

नवमांश चक्रानुसार नीरदार्क जिस राशि नवांश में हो उसका अधिपति जो हो उसके अनुसार (उपरोक्त) वर्षा समझनी चाहिए।

सत्येन्द्र मिश्र द्वारा की गई करणकुतूहल की शिवमती हिन्दीटीका समाप्त हुई।

श्लोकानुक्रमणिका

———

ज्योतिष-ग्रन्थाः

मुहूर्त्तचिन्तामणिः—सविमर्श 'चन्द्रिका' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या सहित । डॉ० रामचन्द्र पाण्डेय ३५-००

शीघ्रबोधः—सान्वय 'सुगमा' हिन्दी व्याख्या सहित । पं० रामजन्म मिश्र १०-००

जातकालंकारः—सोदाहरण 'तत्त्वप्रकाशिका' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या सहित । पं० लषणलाल झा ८-००

बृहद् अवकहडाचक्रम्—(ज्यौतिषप्रवेशिका), हिन्दी भाषानुवाद सहित । पं० रामचन्द्र पाण्डेय ४-५०

भावफलाध्यायः-संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित । व्या०-पं० रामचन्द्र पाठक ५-००

भुवनदीपकम्—'दीप्ति' संस्कृत हिन्दी टीका सहित । व्याख्या०-डॉ० कामेश्वर उपाध्याय २०-००

लघुजातकम्—'तत्त्वप्रभा' संस्कृत-हिन्दी व्याख्या सहित । व्याख्या०-पं० लषणलाल झा २५-००

बीजगणितम्—सविमर्श सोदाहरण संस्कृत 'वासना' 'सुधा' हिन्दी व्याख्या सहित । पं० देवचन्द्र झा ६०-००

मानसागरी—'मनोरमा' हिन्दी व्याख्या सहित । डॉ० रामचन्द्र पाण्डेय ४०-००

वर्षयोगावली—'बालक्रीडा' हिन्दी टीका सहित । आचार्य मधुसूदन १२-००

बृहद् होडाचक्रविवरणम्-हिन्दी 'दीपिका' सहित । पं. मुरलीधर ठक्कुर ५-००

व्यावहारिक ज्यौतिषतत्त्वम्—'तत्त्वप्रभा' हिन्दी व्याख्या सहित । पं० लषणलाल झा ३५-००

खेटकौतुकम्—नवाब खानखाना विरचित । बालबोधिनी हिन्दी २-५०

जैमिनीसूत्रम्—'विमला' सं०हि० व्याख्या सहित । पं० अच्युतानन्द झा १८ ००

वास्तुरत्नाकरः—अहिबलचक्रसहित । श्री विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी कृत हिन्दी टीका सहित ४०-००

पद्मकोषः—भगवानदत्तविरचित । 'बालबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित ५-००

षट्पञ्चाशिका—'भट्टोत्पल' संस्कृत तथा 'विभा' हिन्दी व्याख्या सहित ५-००

भावप्रकाशः—जीवनाथ झा प्रणीत 'भावबोधिनी' हिन्दी टीका सहित १५-००

पञ्चसिद्धान्तिका—वराहमिहिर । सुधाकर द्विवेदी कृत संस्कृत व्याख्या तथा जी० थीबो कृत आंग्लानुवाद सहित १००-००

Easy Lessonssin Elementary Astrology by A. Kuppuswami 25-00

प्राप्तिस्थानम्-कृष्णदास अकादमी, पो. बा. १११८, वाराणसी-२२१००१